सचित्र

श्रीमद् राजचंद्र

जीवन दर्शन

श्रीमद् राजचंद्र प्रभुका जन्म हुआ वह मूल घर, ववाणिया

आनंद आज अपार, हृदयमां आनंद आज अपार;
शुं गाशे गानार, हृदयमां आनंद आज अपार;
जन्म महोत्सव राजप्रभुनो, ऊजवजो नरनार,-हृदयमां०
पूर्णिमाए पुरुष पुराणो, प्रगट्यो प्रभु अवतार.-हृदयमां०

—पू. श्री ब्रह्मचारीजी

श्रीमद् राजचंद्र
निर्वाण शताब्दी
सं. १९५७ से सं. २०५७

श्रीमद् राजचंद्र

सचित्र जीवन दर्शन

श्रीमद् राजचंद्र

संयोजक
पारसभाई जैन

प्रकाशक
श्रीमद् राजचंद्र जन्म भुवन, ववाणिया

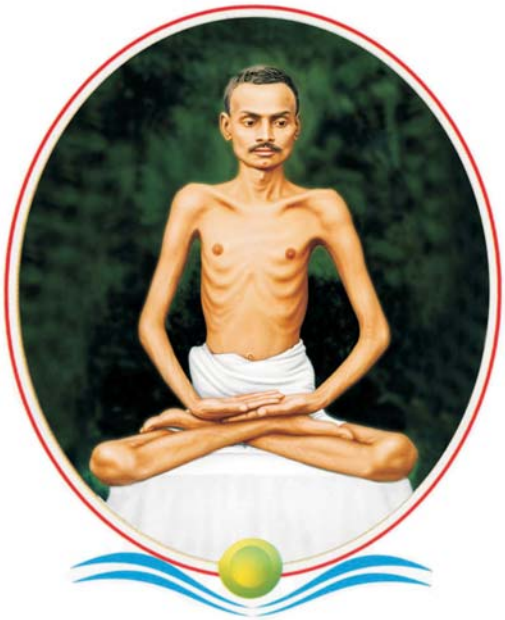

અહો સત્પુરુષના વચનામૃત, મુદ્રા અને સત્સમાગમ.
સુષુપ્ત ચેતનને જાગૃત કરનાર, પડતી વૃત્તિને સ્થિર રાખનાર
દર્શનમાત્રથી પણ નિર્દોષ અપૂર્વ સ્વભાવને પ્રેરક, સ્વરૂપપ્રતીતિ,
અપ્રમત્ત સંયમ, અને પૂર્ણ વીતરાગ નિર્વિકલ્પ સ્વભાવનાં કારણભૂત
- છેલ્લે અયોગી સ્વભાવ પ્રગટ કરી અનંત અવ્યાબાધ સ્વરૂપ
માં સ્થિતિ કરાવનાર. ત્રિકાળ જયવંત વર્તો.
ૐ શાંતિઃ શાંતિઃ શાંતિઃ ॥

श्रीमद् राजचंद्र हस्ताक्षर

प्रकाशक	आवृत्ति	प्रेस
प्रमुख, श्री भरतभाई मनुभाई मोदी श्रीमद् राजचंद्र जन्मभुवन, ववाणीया तालुका - माळीया मिंयाणा जिल्ला-राजकोट-३६३ ६६०	प्रथमावृत्ति, गुजरातीमें प्रत ५०००, सं. २०५७, सन् २००१ द्वितीयावृत्ति, गुजरातीमें प्रत ५०००, सं. २०५७, सन् २००१ तृतीयावृत्ति, गुजरातीमें प्रत ५०००, सं. २०५९, सन् २००३ चतुर्थावृत्ति, गुजरातीमें प्रत २०००, सं. २०७१, सन् २०१५ प्रथमावृत्ति, हिन्दीमें प्रत ५००, सं. २०७१, सन् २०१५	जे.के. बुरड ओफसेट प्रा.ली. रायपुर मिल कंपाउन्ड, सरसपुर, अहमदाबाद - ३८० ०१८

प्राप्तिस्थान

श्रीमद् राजचंद्र जन्मभुवन, ववाणीया तालुका - माळीया मिंयाणा जिल्ला - राजकोट पीनकोड ३६३ ६६०	श्रीमद् राजचंद्र ज्ञानमंदिर आकाशवाणी रोड, राजकोट (गुजरात) पीनकोड ३६० ००१	श्रीमद् राजचंद्र ज्ञानमंदिर श्रीमद् राजचंद्र मार्ग, आर.बी. मेता रोड, घाटकोपर (इस्ट) मुंबई-४०० ०७७

लागत मूल्य : रू. ३५०/- बिक्री मूल्य : रू. ५०/-

श्रीमद् राजचंद्र

प्रथमावृत्तिकी प्रस्तावना

परमकृपालुदेवके निर्वाण शताब्दी के अवसर पर यह पुस्तक प्रकट करते हुए आनंद होता है ।

परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्र प्रभु इस हुंडा अवसरपिणी कालमें सूर्य सदृश प्रकट होकर वीतराग मूलमार्गका चारों दिशाओंमें प्रकाश फैलाकर, अस्त हुए आज सौ सौ वर्ष बीत गए । सौ वर्षके अंतर्गत, परमकृपालुदेवकी सत्यधर्मके, उद्धार करनेकी जो भावना थी उसके मुताबिक वर्तमानमें यह दिखाई दे रही है । श्रीमद् राजचंद्रके नामसे स्थापित आश्रम, संस्था एवं मंदिर देश विदेशमें मिलाकर करीबन ६० अस्तित्व में आ गए है । हजारों मुमुक्षु परमकृपालुदेवके आश्रित बनकर शांति पाने लगे है । श्रीमद् प्रत्यक्ष नहीं होते हुए भी उनकी वीतराग मुद्राको चित्रपटके रूपमें या प्रतिमाके रूपमें प्रस्थापित कर प्रत्यक्ष तुल्य मानकर और उनके वचनामृतरूप अक्षरदेह को भी प्रत्यक्ष मानकर आज भी भव्यात्माए अपने आत्माका कल्याण कर रही है । ये परमकृपालुदेवके योगबलका ही प्रभाव है ।

'सत्पुरुषोका योगबल जगतका कल्याण करो' -श्रीमद् राजचंद्र

परमकृपालुदेवने इस कलिकालमें भी परमात्मस्वरूपको पाकर अनंत दयाके कारण आत्मार्थी जीवोको मुक्तिका मार्ग सरल भाषाशैलीमें बताकर हम पर महान परोपकार किया है और भक्ति, सत्संग, स्वाध्याय का अद्‌भुत माहात्म्य दिखाकर अत्यंत कृपा की है ।

ऐसे परमकृपालु परमात्माके पवित्र जीवन प्रसंगोको चित्रके साथ दिखानेवाली यह पुस्तक आत्मार्थी जीवोके हृदयमें प्रभुके प्रति भक्तिमें वृद्धि करेगी ।

यह अद्‌भुत भावयुक्त वास्तविक प्रसंगोको चित्रके रूपमें मूर्तिमंत करनेका एक नम्र प्रयास है । इस पुस्तकमें परमकृपालुदेवके जन्मसे लगाकर अंतिम आत्मस्वरूपमें लीन होने तकके सभी मुख्य मुख्य बोधदायक प्रसंगोको ले लीया गया है । परमकृपालुदेवके आध्यात्मिक जीवनको चित्रोके द्वारा प्रदर्शित करनेका यह प्रयास पारसभाई जैन का है । यह शुभ प्रयास सब आत्मार्थी जीवोको परमकृपालुदेवकी श्रद्धा दृढ करनेमें सहायभूत हो ऐसी उनकी शुभकामना है, वह सफल हो।

ये चित्र बनानेमें जिन जिन मुमुक्षु भाई-बहेनोने आर्थिक मदद की है वे सब धन्यवादके पात्र है ।

इस ग्रंथ प्रकाशनमें उदारचित्तसे मुमुक्षुभाईओने सहायता दी है, इसलिये वास्तविक किंमतसे बहुत कम दाममें यह ग्रंथ दे सकते है । इसके लिये मैं सबका आभार मानता हूँ । दाताओकी नामावली अन्यत्र दी गई है ।

लि. संतचरणरज
मनुभाई भ. मोदी

सम्पादकीय निवेदन

दुषम कलियुगमें हिमालयसे उतरती गंगाके समान जीवोको पवित्र बनानेके लिये एक योगी पुरुषका इस पृथ्वी पर आगमन हुआ । जिसकी स्मरणशक्ति अद्‌भुत थी, सर्व जीवोके प्रति जिसे विश्वव्यापी प्रेम था, ऐसे आश्चर्यकी मूर्तिके समान परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्र प्रभुका योग इस हुंडाअवसर्पिणी नामके पंचमकालमें होना यह अपने भाग्यकी पराकाष्टाका सूचन है । ऐसे पुरुषके जीवनमें बने हुए अनेक बोधदायक प्रसंगोको आत्मार्थी जीव आसानीसे समझ सके इस हेतु, काल्पनिक चित्रो के द्वारा, लेकिन जिसकी हकीकत वास्तविक बनी हुई है ऐसे प्रसंगोको इस पुस्तकमें प्रकट करते है । चित्रोंके द्वारा इन प्रसंगोकी छाप मनुष्य हृदय पर बहुत गहरी पडती है । भगवान श्री पार्श्वनाथको भी ऐसे चित्रोके द्वारा ही संसारसे विरक्तभाव हुआ था । ऐसा पंचकल्याणक की पूजामें उल्लेख निम्नप्रकार है –

"राजिमितिकुं छोडके नेम संजम लीना; चित्रामण जिन जोवते वैराग्ये भीना " -पूजासंचय (पृ.३६)

श्री पार्श्वकुमार प्रभावती रानीके साथ एकबार उद्यानमें गये थे । वहाँ एक सुंदर महलमें विश्राम किया । महलमें अनेक चित्र बने हुए थे । उसमें राजिमतीको छोडकर भरयुवानीमें श्री नेमिनाथने संयम ग्रहण किया ऐसे चित्रको देखकर श्री पार्श्वनाथको संसारसे विरक्तभाव हो गया और दीक्षा लेनेका निर्णय किया । जैसे ये चित्र उनको वैराग्यके निमित्तभूत बने, वैसे ही परमकृपालुदेवके वैराग्यमय चित्र अनेक भव्यात्माओको बोधदायक हो सकते है ।

इस पुस्तकमें दिये गये चित्रोंको बनानेमें ढ़ाई सालका समय व्यतीत हुआ । और मार्गदर्शन अनुसार चित्र बनाकर देनेवाले श्री प्रफुल्लभाई और श्री महेशभाईका सहकार भी प्रसंशनीय है ।

इस पुस्तकमें प्रत्येक प्रसंगके चित्रका मुख्य भाव, वाचक आसानीसे समझ सके इस हेतु प्रत्येक पृष्ठमें प्रथम शीर्षक रूपसे दिया गया है और लगभग प्रति पृष्ठमें इस प्रसंगसे क्या शिक्षा मिलेगी वह पृष्ठके नीचे परमकृपालुदेवके शब्दोमें ही दी गई है । सब प्रसंग जीवनकला, श्रीमद् राजचंद्र अर्द्धशताब्दी ग्रंथ या श्रीमद्‌के परिचयमें आये हुए मुमुक्षुओके लिखानके आधार पर ही लिये गये है । उसके बाद अपने जीवनमें मुख्य क्या कर्तव्य है, उसे जाननेके लिये 'श्रीमद् राजचंद्र' 'उपदेशामृत' और 'बोधामृत' के भागोमेंसे श्रद्धा, भक्ति, आज्ञा, सत्संग एवं प्रत्यक्ष सत्पुरुष किसे कहते है आदि विषयोका संक्षेपमें वर्णन दिया गया है ।

प्रत्येक पृष्ठके अवतरणके नीचे पुस्तकका नाम संक्षेपमें इस प्रकार से दिया गया है । श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ....) व=हिन्दी वचनामृत, पृ.=पृष्ठ, उ=उपदेशामृत, बो.१,२,३=बोधामृत भाग १, २, ३ अ=अर्द्धशताब्दी ग्रंथ ।

इस पुस्तकका अवलोकन करनेके बाद श्रीमद् राजचंद्र जीवनको विस्तारसे बतानेवाली 'जीवनकला' एवं मोक्षमार्गको समझानेवाली श्रीमद् राजचंद्र प्रणीत 'मोक्षमाला' को अवश्य पढ़नेका अनुरोध है ।

विशेषमें आत्मकल्याण हेतु 'हे प्रभु हे प्रभु ! शुं कहुं', 'यमनियम', 'क्षमापना', 'मंत्रस्मरण' एवं सात व्यसन और सात अभक्ष्यके त्यागके लिये परमकृपालुदेवने श्री लघुराजस्वामीको वसो नामके गाँवमें कहा था कि मुनि ! तुम्हारे पास कोई आत्महितके साधनकी माँग करे तो यह बताना । इसलिये श्री लघुराजस्वामीने अगास आश्रममें हजारो मुमुक्षुओको परमकृपालुदेवके चित्रपट समक्ष एवं उनको ही गुरु मनवाकर यह आज्ञा दी थी । फिर पू.श्री ब्रह्मचारीजी, प.पू. प्रभुश्रीजीकी आज्ञासे इसी प्रकार करते थे । वर्तमानमें परमकृपालुदेवकी इस आज्ञाको बतानेवाला शिलालेख अगास आश्रमके राजमंदिरमें लगा हुआ है । उसे पढ़कर परमकृपालुदेवको अपना गुरु मानकर 'संतके कहनेसे मुझे परमकृपालुदेवकी आज्ञा मान्य है' ऐसा कहकर परमकृपालुदेवको तीन नमस्कार करके आज भी यह आज्ञा ली जा सकती है । यह प्रणाली अगास आश्रममें आज भी प्रचलित है और वह आश्रमकी विशेषता है । इसलिये आत्मकल्याणके इच्छकको परमकृपालुदेवके द्वारा उपदिष्ट इस आज्ञाको अवश्य मानकर दुर्लभ मानवदेहको धन्य बनाना चाहिये क्योंकि आज्ञाका आराधन ही धर्म और आज्ञा आराधन यही तप है । किं बहुना.

– आत्मार्थ इच्छक,
पारसभाई जैन

ग्रंथ प्रकाशनमें भाग लेनेवाले दाताओकी नामावली

'मोक्षमाला' ग्रंथकी प्रथमावृत्ति छपानेमें दाताओने बताई उदारताके प्रति परमकृपालुदेवका लिखा हुआ प्रशंसाका भावः–

"प्रथमावृत्तिका आश्रय पत्र : इस पुस्तकको प्रसिद्ध करनेमें बडेसे बडा आश्रय तो शेठ नेमचंद वसनजीका है । परंतु उससे प्रथम और प्रबल आश्रय एक सुज्ञ बाईने भी दिया है; जिससे उनके उपकारको भूल जाना उचित नहीं । ऐसे शुभ कार्यमें इनका उत्तम प्रयास हुआ यह बहुत प्रशंसनीय है । बाईवर्गमें ऐसे ज्ञानकी इस देशमें कमी ही है ।

प्रसिद्धकर्ता कृतज्ञभाव मानकर आश्रयपत्र पूर्ण करते विज्ञप्ति करते है कि शक्तिमान पुरुष शासनका प्रकाश करो । अवसर नहीं छोडकर जैन तत्व बताये ऐसे ग्रंथोको प्रसिद्ध करो । ऐसे उत्तम काममें इस बाईने कदम उठाया है, इसलिये वे धन्यवादके पात्र है ।

–प्रसिद्धकर्ता (परमकृपालुदेव) (मोक्षमाळा प्रथमावृत्तिमेंसे)

"अब जो दानपुण्य करुं वह अलौकिक दृष्टिसे करुं, जन्ममरण छूटनेके लिये करुं–ऐसी भावना करने योग्य है ।" (उ.पृ.३३२)

"दान है वह लोभ को कम करने, सन्मार्गके प्रति प्रेम बढ़ाने और आत्माकी दया खानेके लिये करना है.... उस लोभमेंसे एक कंकर भी गिरे तो भी आत्मा हल्का होता है, पवित्र होता है । –(बो.३ पृ.७९६)

५,५१,०००	श्री भूलाभाई वनमाळीभाई, श्री रमणभाई भूलाभाई, श्री मंजुबेन रमणभाई, श्री प्रमोदभाई रमणभाई, श्री रोशनीबेन प्रमोदभाई, श्री जीनाली प्रमोदभाई, श्री आज्ञा प्रमोदभाई पटेल	आस्ता
५,००,०००	श्री भूपतभाई टी. शाह हस्ते महेन्द्रभाई भूपतभाई शाह	मियामी (अमेरीका)
१,११,१११	श्री अरविंदभाई मोहनभाई, श्री प्रभाबेन अरविंदभाई, श्री अमीतभाई अरविंदभाई, श्री रूपेन अरविंदभाई पटेल	पुणा कुंभारीया
१,११,१११	श्री स्मीताबेन वसंतभाई शाह, श्री राजीवभाई वसंतभाई शाह, श्री नीपाबेन राजीवभाई शाह, श्री पल्लवीबेन मनोजभाई धकान, श्री मनोजभाई केशवभाई धकान	बोरीवली दुबई
१,००,००१	श्रीमद् राजचंद्र ट्रस्ट	राजकोट
१,००,००१	श्रीमद् राजचंद्र मुमुक्षु मंडळ	सानफ्रान्सिस्को (अमेरीका)
७५,०००	स्व. श्री प्रभुभाई माधवभाई और श्री मधुबेन जयरामभाई, हस्ते शांताबेन, प्रभुभाई, नरेनभाई, चेतनाबेन, अंजुबेन, कंचनबेन पटेल	अंभेटी (अमेरीका)
५१,०००	श्रीमद् राजचंद्र मंदिर ट्रस्ट	ईन्दोर
५१,०००	श्री ठाकोरभाई गोपाळभाई पटेल	सडोदरा
५१,०००	श्री प्रवीणभाई माधवभाई तथा श्री वासंतीबेन प्रवीणभाई भक्त	ननसाड
५१,०००	श्रीमद् राजचंद्र ज्ञानमंदिर	घाटकोपर, मुंबई
४७,५५०	श्री एकमुमुक्षुबेन	अमेरीका
२५,०००	स्व. श्री भगुभाई करशनभाई और स्व. श्री गुलाबबेन भगुभाई पटेलना स्मरणार्थे हस्ते श्री जगदीशभाई और पुष्पाबेन, श्री विनयकुमार और तेजसकुमार पटेल	अमेरीका
२५,०००	श्री रतिलाल लालचंद महेता और श्री मंछाबेन रतिलाल महेता चेरिटेबल ट्रस्ट हस्ते श्री भोगीभाई आर. महेता और भाईओ	मुंबई
२५,०००	श्री शांतिभाई देवजीभाई पटेल	आस्ता
२५,०००	श्री कुसुमबेन मकनजीभाई पटेल और श्री विमलभाई मकनजीभाई और कमलेशभाई मकनजीभाई पटेल	अमेरीका
२५,०००	श्री सुबोधकपुस्तकालय	खंभात
१७,५००	श्री शैलेषभाई और मुमुक्षु	मुंबई
१४,५००	श्री डाहीबेन शंकरभाई पटेल	सीमरडा
११,१११	श्री भावनाबेन पारसभाई जैन	अगास आश्रम
११,१११	श्री छोटाभाई वल्लभभाई पटेल	अगास आश्रम
११,१११	श्री प्रवीणभाई छोटाभाई पटेल	न्युजर्सी, अमेरीका
११,१११	श्री दिलीपभाई छोटाभाई पटेल	न्युजर्सी, अमेरीका
११,१११	श्री राजेन्द्रकुमार छोटाभाई पटेल	ईन्दोर
११,१११	श्री हेमंतभाई लक्ष्मीचंद वीरजी हेमराज	मुंबई
११,१११	श्री वसनजी वीरजी शाह	मुंबई

११,००१	स्व. श्री जेलीबेन भीखाभाई पटेल हस्ते श्री भीखाभाई गोकलभाई पटेल	वछरवाड
११,०००	श्री कांतिभाई पासुभाई शाह	मुंबई
१०,००१	श्री शांतिलालजी गणेशमलजी, श्री शीलाबेन शांतिलालजी, श्री अभिषेकशांतिलालजी, श्री अंकित शांतिलालजी	मद्रास
१०,००१	श्री संजयभाई मनहरभाई तथा श्री तेजलबेन संजयभाई	वाघेच
१०,००१	श्री डॉ. स्मीताबेन जशवंतभाई शाह	न्युजर्सी, अमेरीका
१०,००१	श्री पीस्ताबेन लाभचंदजी, श्री जयश्रीबेन राकेशभाई महेता, राजुभाई राकेशभाई महेता	माधवनगर
१०,००१	स्व. श्री फुलकोरबेन मोहनलाल बुनकी हस्ते अभिषेककुमार अनिलभाई बुनकी	सुरत
१०,०००	श्री विनयकुमार दिलीपभाई पटेल	अमेरीका
१०,०००	श्री हसुभाई माधवभाई, श्री उषाबेन हसुभाई पटेल तथा परिवार	खोज (पारडी)
१०,०००	श्री नरोत्तमभाई नरशीभाई पटेल	सडोदरा
१०,०००	श्री चंद्रकान्तभाई और ईन्दीराबेन वोरा	अमेरीका
१०,०००	स्व. श्री ईश्वरभाई भीखाभाई पटेल हस्ते श्री भानुबेन ईश्वरभाई पटेल	खोज (पारडी)
१०,०००	श्री भुलाभाई और ताराबेन पटेल	वछरवाड
१०,०००	श्री कांतिभाई और उर्मिलाबेन पटेल	वछरवाड
१०,०००	श्री तरूणभाई और चंपाबेन पटेल	बारडोली
१०,०००	स्व. श्री रेवाबेन छोटाभाई पटेल हस्ते श्री प्रवीणभाई दिलीपभाई पटेल	काविठा
१०,०००	श्री नारणभाई डाह्याभाई पटेल परिवार	लंडन
१०,०००	श्री मुमुक्षु मंडळ	लंडन
८,००१	श्री भानुबेन छबीलदास हस्ते छबीलदास	U. K.
७,५००	श्री मुमुक्षुभाई तरफथी (अशोकभाई)	सीमरडा
७,०००	श्री नारणभाई डाह्याभाई पटेल परिवार	लंडन
७,०००	श्री मुमुक्षु मंडळ	लंडन
५,५५५	श्री सुमेरमलजी छोगालालजी परिवार	मैसूर
५,५०१	श्री हंसाबेन गोपाळभाई पटेल	सेगवा
५,००१	श्री सुबोधकपुस्तकालय	खंभात
५,००१	स्व. श्री रेवाबेन छोटाभाई पटेल	काविठा
५,००१	श्री ईलाबेन विनोदभाई पटेल	न्युजर्सी, अमेरीका
५,००१	श्री शीवानीबेन भरतभाई शाह	न्युजर्सी
५,००१	श्री नीशाबेन भरतभाई शाह	न्युजर्सी
५,००१	श्री शीमुलबेन सुधीरभाई टोलीया	न्युजर्सी
५,००१	श्री सुनीशीबेन सुधीरभाई टोलीया	न्युजर्सी
५,००१	श्री चिरागभाई सन्मुखभाई भक्त	न्युजर्सी
५,००१	श्री रोशनीबेन सन्मुखभाई भक्त	न्युजर्सी
५,००१	श्री रंजनबेन दिलीपभाई पटेल	न्युजर्सी
५,०००	श्री सरोजबेन मंगळभाई पटेल	आंकलाव
५,०००	श्री गांगजी भाणजी परिवार	मुंबई
५,०००	श्री बदामीबेन नेमीचंदजी मुत्ता	सिवाना
५,०००	श्री महेन्द्रभाई सोमाभाई पटेल	अमेरीका
५,०००	श्री जेलीबेन करसनभाई पटेल	बारडोली
५,०००	श्री चंचळबेन नानुभाई पटेल	अगास आश्रम
५,०००	श्री पुष्पाबेन नानुभाई पटेल	अगास आश्रम
५,०००	श्री कंचनबेन नानुभाई पटेल	अगास आश्रम
५,०००	श्री लक्ष्मीबेन नानुभाई पटेल	मोम्बासा
५,०००	श्री हर्षदभाई नानुभाई पटेल	लंडन
५,०००	श्री लीलाबेन नानुभाई पटेल	लंडन
५,०००	श्री ज्योतिबेन नानुभाई पटेल	लंडन
५,०००	श्री बृहस्पति नानुभाई पटेल	सुरत
५,०००	श्री जयश्रीबेन बृहस्पति पटेल	सुरत
५,०००	श्री श्रेणिककुमार बृहस्पति पटेल	सुरत
५,०००	श्री रूखीबेन रामभाई पटेल	आफवा
५,०००	श्री मेघना चंदोरकर	घाटकोपर
५,०००	स्व. श्री अरविंदभाई चतुरभाई पटेल हस्ते श्री ईन्दुबेन अरविंदभाई पटेल	डभासी
५,०००	श्री पुष्पाबेन वल्लभभाई पटेल	नवसारी
५,०००	श्री मीराबेन सन्मुखभाई पटेल	नवसारी
५,०००	श्री मुक्ताबेन शेठ	राजकोट
५,०००	श्री राजेशभाई तथा शील्पाबेन शाह	फ्रिमोन्ट (अमेरिका)
५,०००	श्री हसमुखभाई तथा हर्षाबेन शाह	वीलेपार्ले, मुंबई
५,०००	श्री भाविनीबेन दिलेशभाई पटेल	कोठमडी
५,०००	श्री लाभुभाई तथा लाभुबेन तुरखीया	घाटकोपर
५,०००	श्री महेन्द्रभाई जेठालाल शाह	युनीयन सीटी-अमेरीका
५,०००	श्री दिवालीबेन रणछोडभाई हरीभाई पटेल	पारडी(सिसोद्रा)
५,०००	श्री मुमुक्षुबेन	धामण
५,०००	श्री प्रवीणभाई तथा लीलाबेन तुरखीया	अमेरीका
५,०००	श्री कुसुमबेन तथा नानुभाई भुलाभाई पटेल	अमेरीका
५,०००	श्री मंजुबेन अनीलभाई बुन्की	सुरत
५,०००	श्री शारदाबेन तथा किशोरभाई छोटाभाई पटेल	सामपुरा
५,०००	स्व. श्री बालुभाई भीखाभाई हस्ते श्री अनसूयाबेन बालुभाई पटेल	आस्ता
५,०००	स्व. श्री मधुबेन कंचनलाल परीख परीवार	केनेडा
५,०००	श्री प्रभाबेन जयंतिलाल देसाई, हिमांशुभाई और दिलीपभाई जयंतिभाई देसाई	कानपुर
५,०००	श्री भद्रीकलाल माणेकलाल पटेल	खंभात
४,०००	श्री हेमाबेन नवीनचंद्र चौहाण	लंडन
३,७५०	श्री नीलकुमार नवीनचंद्र चौहाण	लंडन
३,६०५	श्री शान्ताबेन लल्लुभाई पटेल	दस्तान
३,०००	श्री वनीताबेन दिपकभाई शाह	अमदावाद
२,५००	श्री मूलचंदभाई प्रेमजीभाई शाह	अगास आश्रम
२,५००	श्री रूखीबेन बालुभाई पटेल	दलास, अमेरीका
२,५००	श्री गुणवंतीबेन धीरजलाल वोरा	सायन

२,५००	श्री गुणवंतीबेन धीरजलाल वोरा	सायन
२,५००	श्री सीमा सुवील परीख	केनेडा
२,५००	श्री सेजल रवि शाह	केनेडा
२,५००	श्री कान्ताबेन छीतुभाई पटेल	सेगवा
२,५००	श्री उषाबेन हेमंतभाई शाह	मुंबई
२,४००	श्री कल्पना स्टोर्स	लंडन
२,००१	श्री शान्ताबेन लालचंदभाई शाह. हस्ते प्रफुल्लभाई	थाणा
२,०००	श्री मीकुबेन रीखबचंदजी	हुबली
२,०००	श्री मुमुक्षुबेन	मुंबई
२,०००	श्री निर्जराबेन मेहुलभाई शाह	अमदावाद
१,७५०	श्री मुमुक्षुबेन	लंडन
१,७५०	श्री रेखाबेन गुटखा	लंडन
१,६००	श्री अमीतभाई वाला	लंडन
१,५२५	स्व. श्री खीमजी चांपशी गाला	लाखापुर
१,५२५	स्व. श्री नानबाई खीमजी गाला	लाखापुर
१,५२५	श्री मावजी खीमजी गाला	अगास आश्रम
१,५२५	स्व. श्री लक्ष्मीबेन मावजी खीमजी गाला	अगास आश्रम
१,५२५	स्व. श्री नानजी खीमजी गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री झवेरबेन नानजी गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री कीर्तिकुमार नानजी गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री सरलाबेन कीर्तिकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री पायल कीर्तिकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री अवनि कीर्तिकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री गौरव कीर्तिकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री संजयकुमार नानजी गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री शीला संजयकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री हार्दिकसंजयकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री करण संजयकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री विजयकुमार नानजी गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री रीना विजयकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री जितेन्द्रकुमार मावजी गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री रूपा जितेन्द्रकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री हिरल जितेन्द्रकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री सेफाली जितेन्द्रकुमार गाला	हैद्राबाद
१,५२५	श्री शान्ताबेन भोगीलाल फुरीया	मुंबई
१,५२५	श्री भोगीलाल मणीलाल फुरीया	मुंबई
१,५००	श्री मुमुक्षुबेन	भीमंडी
१,१११	स्व. श्री धनजी पदमशी घरोड	मुंबई
१,१११	स्व. श्री चंपाबेन धनजी घरोड	मुंबई
१,१११	श्री निखिल धनजी घरोड	मुंबई
१,१११	श्री नवलबेन वल्लभभाई हरीया	मुंबई
१,१००	श्री रतनबेन मोतीराम	अगास आश्रम
१,१००	श्री राकेशभाई कांतीभाई पटेल	सीमरडा
१,१००	श्री कल्प मीतेष छेडा	मुंबई
१,१००	श्री सुधाबेन कनैयालालजी सुराना	अजमेर
१,००१	श्री शांतिभाई रामजी आणंदजी	कच्छकोडाय
१,००१	श्री देवेशभाई एम. पटेल	दुबई
१,००१	श्री छायाबेन देवेशभाई पटेल	दुबई
१,००१	श्री करीश्मा डी. पटेल	दुबई
१,००१	श्री शीवान डी. पटेल	दुबई
१,००१	श्री दिवालीबेन लेखराजजी सोलंकी परिवार	आहोर
१,००१	श्री दीपालीबेन रतिलालभाई पटेल	अमेरिका
१,००१	श्री शारदाबेन किशोरभाई पटेल	अमेरिका
१,००१	श्री सोमभाई विठ्ठलभाई पटेल	उमराख
१,००१	श्री केशवभाई गोविंदभाई पटेल	बारडोली
१,००१	श्री जय सद्‌गुरु ट्यूब्स प्राईवेट लि.	मुंबई
१,००१	श्री योगसन स्टील कंपनी लि.	मुंबई
१,००१	श्री निर्मय पलकहरखचंदभाई	मुंबई
१,००१	श्री कुणालकुमार अशोकभाई पटेल	लंडन
१,००१	श्री अशोकभाई गोरधनभाई पटेल	भादरण
१,००१	श्री कल्पनाबेन अशोकभाई पटेल	भादरण
१,००१	श्री कुसुमबेन रमणभाई पटेल	वागरा
१,००१	श्री नटुभाई पानाचंद शाह	मुंबई
१,०००	श्री अमीचंदजी मुलतानमलजी बागरेचा	सिवाना
१,०००	श्री चंपाबेन अमीचंदजी बागरेचा	सिवाना
१,०००	श्री हंसाबेन नवीनचंद्र पटेल	लंडन
१,०००	स्व. श्री सुआदेवी शंकलेछा हस्ते श्री सोहन-राजजी, विजयराजजी, जवाहरलालजी	पचपदरा
१,०००	श्री शांतिलालजी हस्तीमलजी हुंडिआ	बैंग्लोर
१,०००	श्री सूरजबेन शांतिलालजी हुंडिआ	बैंग्लोर
१,०००	श्री राजेशकुमार शांतिलालजी हुंडिआ	बैंग्लोर
१,०००	श्री बिन्दुबेन शांतिलालजी हुंडिआ	बैंग्लोर
१,०००	श्री स्वीटीबेन शांतिलालजी हुंडिआ	बैंग्लोर
१,०००	श्री रेखाबेन मनीषकुमारजी कुहाड	बैंग्लोर
१,०००	श्री कविताबेन राजेशकुमारजी मुत्ता	अमेरिका
१,०००	श्री राणीदेवी घेवरचंदजी चोपडा	अमदावाद
१,०००	श्री चंद्रिकाबेन नटुभाइ पटेल	अमेरिका
१,०००	श्री उषाबेन हेमंतभाई शाह	मुंबई
१,०००	श्री मुमुक्षुबेन	मुंबई
१,०००	श्री सुशिला अनुपचंद मेता	बैंग्लोर
१,०००	श्री अनुपचंद के. मेता	बैंग्लोर
१,०००	श्री सरोजबेन महेन्द्रभाई मेता	बैंग्लोर
१,०००	श्री महेन्द्रभाई एल. मेता	बैंग्लोर
१,०००	श्री नटवरभाई विठ्ठलदास देसाई	अमदावाद
१,०००	श्री अंकिताबेन दिनेशकुमार	अमेरीका
१,०००	श्री अरूणाबेन के. लाखाणी	मुंबई
१,०००	श्री तुषारकुमार दिनेशभाई छेडा	मुंबई
१,०००	श्री दिप्तीबेन भरतभाई गोसर	मुंबई
१,०००	श्री संतोषबेन दिनेशभाई	बैंग्लोर
१,०००	श्री रामुबेन	उत्तरसंडा
८००	श्री रेखाबेन रमणीकभाई गुटखा	मुंबई
५०१	श्री दक्षाबेन हसमुखभाई पटेल	वागरा
५००	श्री मुकुन्दभाई हरजीवनभाई मेहता	देवलाली

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
श्रीमद् राजचंद्र भिन्न भिन्न अवस्था	१
श्रीमद् सद्गुरु जन्ममहोत्सव पद	२
श्रीमद् राजचंद्र जन्म	३
बाल्यलीला	४
प्रभुदर्शन और संत समागम प्रिय	५
अल्पउम्रमें महान विचार	६
पाठशालामें प्रथम दिन बालयोगी श्रीमद्का ग्रंथ पठन	७
मृत्यु रहस्य जाननेकी तीव्र जिज्ञासा	८
चिताको देखते समय बालयोगी श्रीमद्को जातिस्मरणज्ञान	९
पाठशालामें विद्यार्थीओको पढाते हुए बालयोगी श्रीमद्	१०
रामायण और महाभारतको समझाते हुए	११
शूलकी पीडा कैसे सहन की ?	१२
प्रतिक्रमण सूत्रके द्वारा जैनधर्ममें प्रीति	१३
हरि सब्जीके जीवो पर दया, महावीर प्रभुको अपनी दृष्टिमें लाओ	१४
धारशीभाई पर श्रीमद्का उपकार	१५
काशी विद्याभ्यासके लिये आमंत्रण	१६
बाल्यवस्थामें ही कार्यपद्धतिकी जानकारी एवं त्वरितता	१७
खुदके लिये हाथ लंबाकर दीनता नहीं की	१८
भुजमें धर्मके विषयमें भाषण	१९
प्रामाणिक एवं पुरुषार्थी	२०
श्रीमद्के सेवाभावी मातापिता	२१
गांगेय अणगारके विभाग सुगम शैलीमें	२२
श्रीमद्को गुरुके रूपमें स्वीकार	२३
बाल्यवयमें ही विद्वानोकी शंकाओका समाधान	२४
पुण्यके आधार पर सब सुधार होगा	२५
वीतरागधर्म पूर्ण सत्य, श्रीमद्का श्री राम जैसा वैराग्य	२६
मोक्षमाला का सर्जन	२७
आश्चर्यचकित कर दे ऐसे श्रीमद्के सूत्रार्थ	२८
श्रीमद् राजचंद्रके सोलवे सालका चित्रपट	२९
अष्टावधान देखकर मनजीभाई का आश्चर्य	३०
श्रीमद् राजचंद्रके उन्नीसवें सालका चित्रपट	३१
बोटादमें बावन अवधान प्रयोग	३२,३३
मुंबईमें शतावधान	३४,३५
श्रीमद्के अवधानकी समाचार पत्रोमें प्रशंसा	३६
सुवर्णचंद्रक भेट	३७
परमेश्वर गृह	३८
इसको कौन भोगेगा ?	३९
श्रीमद्की अद्भुत स्पर्शशक्ति	४०
आत्मोन्नतिमें बाधक जानकर ज्योतिष देखनेका त्याग	४१
पूर्वोपार्जित कर्मके कारण पाणिग्रहण	४२
मेघवृष्टि, युगप्रधान होनेका सूचन	४३
व्यापारमें मुख्य नियंता श्रीमद् राजचंद्र	४४
जैनकी प्रामाणिकता कैसी होनी चाहिये ?	४५

विषय	पृष्ठ
हमारे निमित्तसे कीसीको दुःख न हो	४६
दूसरोके दुःखके प्रति करुणा भाव	४७
दूसरोंको दुःख देनेसे सुख नहीं मिल सकता	४८
कर्मके फलस्वरूप नाटकको देखो	४९
अहिंसा परमोधर्म	५०
तुम आत्मा हो काशी नहीं	५१
श्रीमद्की तीव्र घ्राण शक्ति	५२
सत्पुरुषके वचन के प्रति अखंड विश्वास	५३
श्रीमद्का अतिशय	५४
लेश्या बदली जा सकती है	५५
जो सत्य होगा वही कहा जायेगा, संन्यासीका अहंकार पिघल गया	५६
विनाशकाले विपरित बुद्धि	५७
अज्ञानके कारण जीवको मृत्युका भय	५८
श्रीमद् राजचंद्रके चोबीसवें सालका चित्रपट	५९
प्रथमसे चेतावनी.	६०
न्यायाधीश धारशीभाईकी श्रीमद्के प्रति श्रद्धाकी परीक्षा	६१
परमकृपालुदेवकी भक्तिसे आत्मज्ञान पाये हुए चार भक्तरत्न	६२
श्रीमद् राजचंद्रके चोबीसवें सालका चित्रपट	६३
श्री जूठाभाईको श्रीमद्की यथार्थ पहचान	६४
पन्ने फिराने मात्रसे रहस्यकी जानकारी, कौन प्रतिबंध करें ?	६५
श्री सोभागभाईको श्रीमद्का प्रथम मिलन	६६
आपके सिवाय दूसरी स्मृति न हो	६७
ईडरमें परमार्थका अपूर्व बोध	६८
अपूर्व अवसरका सर्जन	६९
उपाश्रयमें स्वाध्याय	७०
श्री लल्लुजी महाराजको श्रीमद्जीकी प्रथम जानकारी	७१
श्री लघुराजस्वामीका परमकृपालुदेवके साथ प्रथम मिलन प्रथम मिलनमें ही साष्टांग दंडवत्	७२
समकित और ब्रह्मचर्य दृढताकी मांग	७३
'प्रभुश्री' धर्ममार्गमें आत्मज्ञानी मुनि होंगे	७३
आतम भावना भावतां जीव लहे केवलज्ञान रे	७४
मिथ्यादृष्टिकी क्रिया सफल, सम्यक्दृष्टिकी क्रिया अफल	७५
हीरा, माणेक, मोती कालकूट जहर समान	७५
छ पदके पत्रका उद्भव	७६
अचिंत्य महात्म्यवान ऐसा आत्मा	७७
श्रीमद् के साथ गांधीजीका प्रथम मिलन, धर्ममंथन कालमें श्रीमद्जीके पत्रोसे शांति	७८
श्रीमद्जीके साथ गांधीजीका दो साल निकट परिचय	७९
श्रीमद्जीके प्रति विचारवान गांधीजीके ज्ञा अभिप्राय	८०
श्रीमद्जीके पाससे महात्मा गांधीजीने प्राप्त किया हुआ सत्य और अहिंसाका बल	८१
समाधान हो तभी भोजन करुंगा, मनकी इच्छा पूर्ण हुई	८२
अंतर्यामि, सेवा करनेका लाभ	८३
भक्तवत्सल भगवान	८४

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
जितनी श्रद्धा उतनी निर्भयता	८५
शुद्ध समकितकी प्राप्ति, श्रीमद्के मनमें पूरी मुंबई स्मशान	८६
श्रीमद्के चोबीसवें सालका चित्रपट	८७
भगवान महावीरका जुलुस (वरघोडा)	८८
अंतरंग आत्मदशाका आलेखन	८९
'सहजात्मस्वरूप परमगुरु' मंत्रका उद्भव	९०
आज्ञाका पालन यही धर्म, मंत्र मिलने पर महाशांति	९१
श्रीमद्का रालजसे रथमें वडवा आगमन	९२
समागमका विरह असह्य	९३
छूटनेके स्थान पर बंधन हो वह भयंकर है	९४
पश्चात्तापसे आत्मशुद्धि	९५
वडवा तीर्थकी भविष्यवाणी	९६
उपदेश सुननेकी तीव्र आतुरता	९७
मूळ मारग सुनिये जिनेश्वरका	९८
तुम्हारे नमस्कार चौदह राजलोकमें बिखेर देना है	९९
श्री आत्मसिद्धि शास्त्रका मांगलिक सर्जन	१००
श्री आत्मसिद्धि शास्त्रका माहात्म्य	१०१
सेवाभावी श्री अंबालालभाई	१०२
श्रीमद्के दर्शन और समागमकी इच्छा	१०३
श्रीमद्का वैराग्यमय अद्भुत उपदेश	१०४
छोटेसे कारणमें इतने फूलोंको नहीं तोडना	१०५
हम हमारी खोज करते है,भक्ति करते हुए कौन भूखसे मर गया	१०६
लड़कोको दृष्टांत द्वारा उपदेश	१०७
माताजी, आज्ञा दे तो मुनि बनना है, निवृत्त स्थलमें आत्म साधना	१०८
हरी सब्जीको कम करके भगवानको भक्तिभावसे पुष्प चढ़ाये	१०९
जिन प्रतिमाका प्रबळ अवलंबन	१०९
मुनिका धर्म - स्वाध्याय और ध्यान	११०
आज्ञाके आराधनसे भवमुक्ति	११०
शामसे सुबह तक अपूर्व ज्ञान वार्तालाप	१११
आत्महितका साधन या आज्ञाभक्तिका माहात्म्य	११२
आज्ञाभक्ति दिखानेवाला पट	११३
सात व्यसन सेवन करनेका फल	११४
सात व्यसन और सात अभक्ष्य सेवनका फल	११५
अवधूतयोगी श्रीमद् राजचंद्र	११६
अवधूत योगमुद्रा	११७
जंगलमें एकांत निवास	११८
मोतीलालकी पत्नीका आठवें भवमें मोक्ष, दर्शनके समय उपदेश	११९
श्री तीर्थंकरका अंतर आशय	१२०
श्रीमद्, भगवान महावीरके अंतिम शिष्य, समवसरण	१२१
श्रीमद्की अद्भुत आत्मदशा	१२२
मुखमुद्राका पाँच घण्टे तक अवलोकन	१२२
मुनि तुम आत्मा देखोगे	१२३
श्रीमद्के साथ ईडरके महाराजाकी मुलाकात	१२४
वीरप्रभुके अंतिम शिष्यका इस कालमें जन्म	१२५

विषय	पृष्ठ
आम्रवृक्षके नीचे श्रीमद्जीकी प्रतीक्षा करते हुए सात मुनि	१२६
सिद्धशीला	१२७
साँप या चीता मिल जाये तो डरोगे ?	१२८
परमकृपालुके योगबलसे दैवी रक्षण	१२८
जैसी भावना वैसी सिद्धि	१२९
बगीचेमें आकर्षित हुए तो वहाँ जन्म लोगे	१२९
नरोडा गाँवके बाहर मुनिओके आनेकी प्रतीक्षा करते हुए श्रीमद्	१३०
ग्रीष्मऋतुकी धूपमें गजगतिसे चलते हुए श्रीमद्	१३०
अब हम बिलकुल असंग होना चाहते है	१३१
मनोमन साक्षी	१३२
सर्वस्व अर्पण करनेवाला सबसे बड़ा	१३३
सभाके बीच स्त्री और लक्ष्मीका त्याग	१३४
मुनियोंको शास्त्रदान	१३५
श्रीमद्की आत्मा शांत सिंह जैसी	१३६
श्रीमद् राजचंद्रका तैंतीसवे सालका चित्रपट	१३७
मैं मेरे आत्मस्वरूपमें लीन होता हूँ	१३८
उत्तम समाधिमरण	१३९
श्री अंबालालभाईकी विरह वेदनाका दृश्य	१४०
परमकृपालुदेवके वियोगसे हृदयमें असह्य विरह वेदना प्रगटी	१४१
आत्मदाता सद्गुरुका वियोग असह्य	१४२
श्रीमद् राजचंद्र प्रभुके देहोत्सर्गके समयमें पेपरोमें उनकी प्रशंसा छपी थी उनके ओरिजिनल पेपरके नमूने	१४३
न्यायाधीश धारशीभाईको धर्मप्राप्तिकी धगश	१४४
प्रत्यक्ष परमगुरु परमकृपालुदेव	१४५
प्रत्यक्ष सत्पुरुषका माहात्म्य	१४६
परमकृपालुदेवकी अंतर्आत्मदशा	१४८
परमकृपालुदेवके अपूर्व वचनामृत	१४९
'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथका अलौकिक माहात्म्य	१४९
परमकृपालुदेवकी निष्कारण करुणा	१५१
ज्ञानीका मार्ग सुलभ लेकिन प्राप्ति दुर्लभ	१५१
जीवको सबसे पहले करने योग्य क्या ?	१५२
असद्गुरुको माननेसे अनादिकालका भवभ्रमण	१५३
अपनी कल्पनासे-स्वच्छंदसे क्रिया करने पर संसार परिभ्रमण	१५३
प.उ.प.पू.प्रभुश्रीजीकी दृष्टिमें परमकृपालुदेव	१५४
पू.श्री ब्रह्मचारीजीकी दृष्टिमें परमकृपालुदेव	१५५
श्रद्धा सम्यक्त्व या समकितकी सबमें मुख्यता	१५६
सम्यक्त्वके बारेमें परमकृपालुदेवके उद्गार	१५६
परमकृपालुदेवकी श्रद्धा	१५७
प्रभुभक्ति सदैव कर्त्तव्य	१५८
प्रभुभक्ति अनन्य प्रेमसे सदैव कर्त्तव्य	१५८
ज्ञानीपुरुषकी आज्ञा	१६०
कर्तव्यरूप श्री सत्संग	१६१
अलौकिक तीर्थधाम श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास	१६२
श्री राजकोटके दर्शनीय स्थल	१६४

श्रीमद् राजचंद्र

(संक्षिप्त जीवनचरित्र)

भारतकी आर्यभूमि यह संत महंतोकी भूमिके नामसे विश्वमें प्रसिद्ध है । जिस भूमि पर 'अहिंसा परमोधर्म' का दिव्य संदेश देनेवाले भगवान महावीरका जन्म हुआ, उसी पुण्यभूमि पर अलौकिक दिव्यदृष्टा साधुचरित संतपुरुष श्रीमद् राजचंद्रका संवत् १९२४के कार्तिक पूर्णिमाके मांगलिक देवदिवालीके दिन सौराष्ट्रमें आये हुए ववाणिया नामके गाँवमें जन्म हुआ । श्रीमद् राजचंद्रका जीवन कवन एक विरल धर्मज्ञ पुरुषका सहस्त्र प्रतिभायुक्त जीवन दर्शन है । उस पवित्र जीवनको संक्षेपमें यथाशक्ति यहाँ पर लिखते है, जिससे उनके उत्तम सद्गुणोको जानकर आत्मार्थी जीवोको आनंद होगा ।

श्रीमद्के दादा श्री पंचाणभाई थे, ते वैष्णवधर्मी थे । लेकिन श्रीमद्के पिताश्री रवजीभाईका विवाह जैन कुटुम्बमें जन्मे हुए देवबाईके साथ हुआ था । वे जैन संस्कार लेकर आये थे । जिससे श्रीमद्में दोनों संस्कारोका सिंचन हुआ ।

बालयोगी श्रीमद्का जीवन सात वर्ष तक खेलकूदमें बीता । सात सालकी उम्रमें गाँवकी पाठशालामें प्रवेश किया । ज्ञानीको क्या पढ़ना शेष हो ? स्मरणशक्ति इतनी सतेज थी कि शिक्षक पाठ पढ़ाते उस समय उन्हें कंठस्थ हो जाता था । दो सालमें सात कक्षाका अभ्यास कर लिया । पढ़नेमें वे होशियार, वाक्चातुर्य, और खेलनेकूदनेकी अमीरी रीतभात देखकर भविष्यमें यह पुरुष कैसा होगा उसका अंदाजा आता था । पुत्रके लक्षण जन्मसे ही दिखाई देते है ।

सात सालकी उम्रमें ववाणियामें श्री अमीचंदभाईके अग्निसंस्कारके समय प्रज्वलित चिताको नजरोनजर देखकर बालयोगी श्रीमद्को जातिस्मरणज्ञान हुआ । पूर्वभव दिखाई दिये । भविष्यमें जुनागढका पहाड देखने पर उसमें अनेक गुना बढ़ावा हुआ और अंतमें ९०० पूर्वभव श्रीमद्के जाननेमें आ गए ।

आठ सालकी उम्रमें उन्होंने कविता लिखनेकी शुरुआत की । प्रथम वर्षमें पांच हजार गाथाओकी रचना की । नौवे सालमें 'रामायण', 'महाभारत' पद्यमें छोटे छोटे लिखे । दसवें वर्षके प्रवेशके साथ अद्भुत वक्तृत्वकलाका पादुर्भाव हुआ । सुंदर हस्ताक्षरके कारण उन्हें राजदरबारमें बुलाकर उनके पास नीजी लेख भी लिखवाते थे । ११ सालकी उम्रमें उस वक्त निकलते मासिक 'विज्ञानविलास', 'बुद्धिप्रकाश', 'बोधप्रकाश' नामके मासिकोमें उनके लेख, निबंध छपने लगे और इनाम भी मिलने लगे । ११वें वर्षमें पाठशाला जाना बंद किया । १२ वर्षकी उम्रमें 'घडी' के बारेमें तत्वज्ञान भरित तीनसौ गाथाओकी एक दिनमें रचना की । कवितामे राज्यचंद्र नाम लिखते थे । जिससे विद्वानोमें वे श्रीमद् राजचंद्र नामसे प्रसिद्ध हुए, बचपनसे ही उनमें वैराग्य था । एकबार कच्छके दिवान मणिभाईके साथ कच्छ जाकर बाल महात्माने प्रजाके समक्ष धर्मसंबंधी अच्छा भाषण किया । कच्छके लोग प्रशंसा करने लगे कि यह बालक भविष्यमें महाप्रतापी यशवाला होगा ।

१३वे वर्षसे अनेक धर्मग्रंथो, महापुरुषोके जीवनचरित्रो आदिका पठन शुरु किया । १५ सालकी उम्र तक तो बहुत सारे विषयके बारेमें ज्ञान संपादन कर लिया । उसके बाद जैन, बौद्ध, वेदांत, सांख्ययोग और चार्वाक इन छ मुख्य धर्मो के ग्रंथोका अवलोकन किया । जिससे जैनधर्मके प्रति पूर्ण श्रद्धा हो गई । उसके फलस्वरूप १६ साल और ५ मासकी उम्रमें मोरबीमें श्रीमद्ने तीन दिनमें 'मोक्षमाला' नामका ग्रंथ १०८ पाठरूपमें लिखकर प्रदर्शित किया । जिसमें जैनधर्मके सिद्धांतोको सरल भाषामें समझानेका प्रयत्न किया गया है । अभ्यासके बिना उन्होंने मागधी, अर्द्धमागधी, संस्कृत, हिन्दी, गुजराती भाषाके अनेक शास्त्रोको पढ़कर अच्छी जानकारी प्राप्त की । उसके बाद शास्त्रके पाने फिराने पर वह पठन तुल्य हो जाता और पढ़ने पर कंठस्थ हो जाता था ।

१६ सालसे अवधान शक्तिका प्रादुर्भाव हुआ । मोरबीमें प्रथम आठ अवधान प्रयोग करके दिखाए । अवधान अर्थात्

बिना भूल अनेक कार्योको एक साथमें याद रखकर उसी वक्त करके दिखाना। फिर जामनगर, बोटाद, वगैरह शहरमें १२, १६ अवधान करके 'हिन्द के हीरे' ऐसा उपनाम प्राप्त किया। १९वें वर्षमें बम्बईमें १०० अवधान फरामजी कावसजी इन्स्टीट्युटमें हजारो महानुभावोके समक्ष करके जनताको मंत्रमुग्ध कर दिया। जनताने 'साक्षात् सरस्वती'का उपनाम देकर सुवर्णचंद्रक भेट किया। इन अवधानोसे श्रीमद्की प्रशंसा 'मुंबई समाचार', 'जामे जमशेद', 'इन्डियन स्पेक्टेटर' वगैरह समाचार पत्रोमें खूब हुई। अब श्रीमद् शीघ्र कवि, विद्वान के साथ शतावधानीके नामसे प्रसिद्ध हुए।

श्रीमद्ने ज्योतिषशास्त्रका भी अभ्यास किया था। हस्त, मुख आदिको देखकर ज्योतिष बता सकते थे। लेकिन अंतमें आत्मसाधनमें बिनउपयोगी जानकर ज्योतिष एवं अवधानको छोड़ दिया।

श्रीमद्की २० वर्षकी उम्रमें झवेरी श्री पोपटभाईकी पुत्री झबकबाईके साथ शादी हुई। २१वें वर्षमें बम्बईमें झवेरातका व्यवसाय भागीदारीमें शुरु किया। थोडेसे समयमें ही विदेशोंके साथ वेपार करनेसे पेढ़ीका नाम आंतरराष्ट्रीय क्षेत्रमें गुंजने लगा।

२२वें वर्षमें श्रीलघुराजस्वामी, श्री सोभागभाई, श्री अंबालालभाई वगैरह श्रीमद्के परिचयमें आये। श्रीमद् अद्भुत वैरागी थे। उनका अलौकिक सत्संगका लाभ उन्हें मिला। २३वें वर्षमें श्रीमद्को शुद्ध समकितकी प्राप्ति हुई।

श्रीमद् व्यवसायी होने पर भी बंबई छोडकर महिनो तक इडर, काविठा, उत्तरसंडा, रालज, वडवा आदि एकान्त स्थलोमें जाकर ध्यान, चिंतनमें समय बिताते थे।

महात्मा गांधी दो साल उनके गाढ परिचयमें रहे, उनसे सत्य और अहिंसा धर्मका प्याले भर भरके पान किया। गांधीजी लिखते है कि मैंने कभी कोई वस्तुके प्रति उनको राग हुआ हो ऐसा नहीं देखा। श्रीमद्जी की यह दशा स्वाभाविक थी।

२९वें वर्षमें अपूर्व 'आत्मसिद्धिशास्त्र' की मात्र डेढ़ घण्टेमें रचना करके चौद पूर्वका सार विश्वको दिया। इसके अलावा अनेक काव्य रचे। उनके एक हजार पत्र 'श्रीमद् राजचंद्र' नामके ग्रंथमें प्रकाशित है। जिसका पठन करके आज भी हजारो मुमुक्षु अद्भुत आत्मशांतिका अनुभव करते है।

श्रीमद्की वैराग्यमय असंगवृत्ति, सतत पुरुषार्थी जीवन एवं आत्मअनुभवका निचोड उनके साहित्यमें दिखाई देता है। उनके परिचयमें आये हुए व्यक्तिओके द्वारा मालुम होता है कि वे दूसरोके मनकी बात भी जानते थे। श्रोताओके प्रश्नोके उत्तर उनके पूछनेके पहेले ही उपदेशमें कह देते थे। ऐसी चमत्कृति के बारे में—श्रीमद्से पूछने पर वे कहते थे कि आत्माकी अनंत शक्तिया है और यह शक्ति प्रत्येक आत्मामें रही हुई है लेकिन उसे बाहर लानेमें उस प्रकारका पुरुषार्थ करना चाहिए।

श्रीमद् मात्र ३३ सालकी भर युवानीमें 'केवल लगभग भूमिका' को पाकर सं. १९५७के चैत्र वदी ५ के दिन दोपहरको दो बजे राजकोटमें अद्भुत समाधिमरणको साध्य कर इस नश्वर शरीरका त्यागकर अपने आत्मस्वरूपमें समा गये।

अब अपनेको किसका आधार शेष रहा? उनकी वीतराग मुद्रा और उनका ही प्रत्यक्ष अक्षर देहरूप वचनामृत इन दोनोका आधार आज भी अपने समक्ष महाभाग्यसे मौजूद है। इनका आधार लेकर अपने कषाय भावोको निकाले और उनकी दी गई मुख्य आज्ञा 'सहजात्मस्वरूप परमगुरु' मंत्रका ध्यान करके, इस मनुष्यभवको सफल कर, शुद्ध स्वरूपमें हमेशाके लिए समा जाए, यही प्रभुके प्रति प्रार्थना।

—पारसभाई जैन,
अगास आश्रम

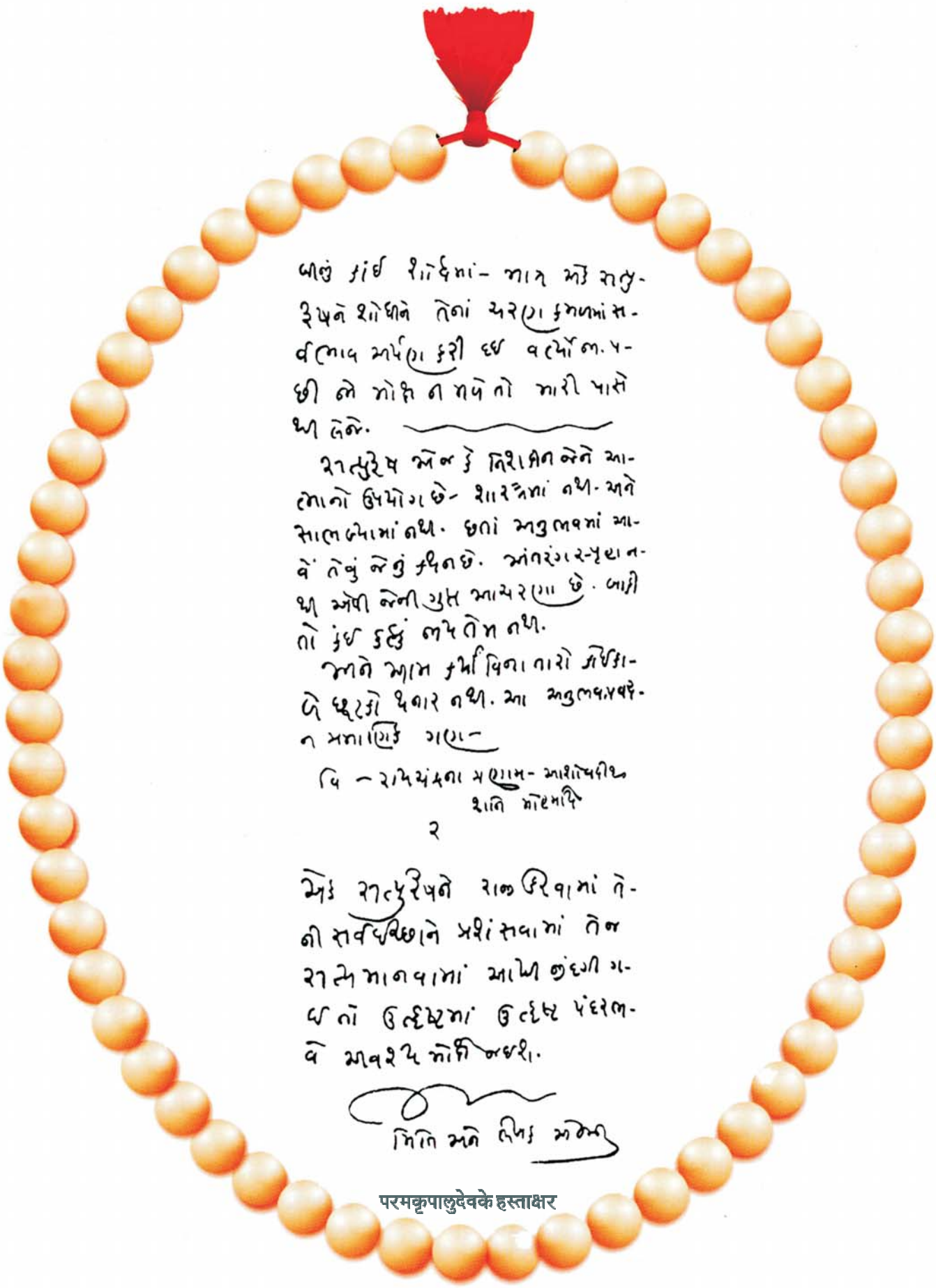

બીજું કાંઈ શોધમાં - માત્ર એક સત્પુરુષને શોધીને તેનાં ચરણકમળમાં સર્વભાવ અર્પણ કરી દઈ વર્ત્યો જા. પછી જો મોક્ષ ન મળે તો મારી પાસેથી લેજે.

સત્પુરુષ એજ કે નિશદિન જેને આત્માનો ઉપયોગ છે- શાસ્ત્રમાં નથી- અને સાંભળ્યામાં નથી. છતાં અનુભવમાં આવે તેવું જેનું કથન છે. અંતરંગસ્પૃહા નથી એવી જેની ગુપ્ત આચરણા છે. બાકી તો કંઈ કહ્યું લખે તેમ નથી.

અને આમ કર્યા વિના તારો કોઈ કાળે છૂટકો થનાર નથી. આ અનુભવવચન પ્રમાણિક ગણ-

વિ - રાયચંદના પ્રણામ- આશીર્વાદ
શાંતિ મોક્ષાદિ

૨

એક સત્પુરુષને રાજી કરવામાં તેની સર્વ ઇચ્છાને પ્રશંસવામાં તેને સત્ય માનવામાં આખી જીંદગી ગઈ તો ઉત્કૃષ્ટમાં ઉત્કૃષ્ટ પંદર ભવે અવશ્ય મોક્ષે જઈશ.

મિતિ એજ લિ. [illegible]

परमकृपालुदेवके हस्ताक्षर

श्रीमद् राजचंद्र
भिन्न भिन्न अवस्था

श्रीमद्
राजचंद्र
जन्मोत्सव पद

देव दिवाळी दिन मंगळकारी,
(आनंदकारी)
परम पुरुष प्रगटे अवतारी,
(सत्य पुरुष प्रगटे संस्कारी), देव०
ओगणीसें चोवीस रविवारी,
बंदर ववाणिया सोरठ मझारी;
रवजी महेता कुल कीरतिधारी,
देवा देव जायो जयकारी. देव०१
जन्ममहोत्सवविधि करी सारी,
हर्षित भये सज्जनजन भारी;
श्रीमद् राजचंद्र नाम उच्चारी,
मंगल गावत निजकुळ नारी. देव०२

श्री रत्नराजस्वामी कृत

श्रीमद् राजचंद्र

जन्म

"जन्मे श्री गुरुराज, जगतहित काज"

जिस महापुरुषकी विश्वविहारी प्रज्ञा थी। अनेक जन्मोंमें साध्य किया हुआ जिनका योग था। जन्मसे ही योगीश्वर जैसी जिनकी निरपराधी वैराग्यमय दशा थी ऐसे समर्थ आत्मज्ञानी पुरुष, आत्मधर्मका परम उद्योत करनेवाले, परम ज्ञानावतार श्रीमद् राजचंद्र प्रभुका जन्म सौराष्ट्रमें आये हुए ववाणिया नामके गाँवमें बनिया परिवारमें वि.सं. १९२४ की कार्तिक पूर्णिमाके धन्य दिन रविवारको तारीख ९-११-१८६७ के दिन रातको दो बजे हुआ था। वह दिन देवदिवालीका था।

देवदिवालीकी रात्रिमें भारतकी इस पुण्यभूमि पर इस युगप्रधान पुरुषका अवतार वह अज्ञानरूप अंधकारको नष्ट करनेके लिये सूर्य समान और आत्माको अमरपदकी प्राप्ति करानेके लिये अमृत के समान था।

श्रीमद्का जन्म नाम 'लक्ष्मीनंदन' दिया गया। थोड़े समय बाद 'रायचन्दभाई' के नामसे प्रसिद्धि पाकर अंतमें 'श्रीमद् राजचंद्र' के नामसे जगतमें विख्यात हुए। ऐसे अध्यात्मयोगी श्रीमद् राजचंद्रका पवित्र जीवन, आत्मार्थी जीवोको मुक्तिमार्गका मंगल प्रारंभकर आत्मशुद्धि या आत्मसिद्धि प्राप्त करानेके लिये प्रबल प्रेरणा देनेमें समर्थ है।

"प्रशस्त पुरुषकी भक्ति करें, उसका स्मरण करें; गुणचिंतन करें।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २०३)

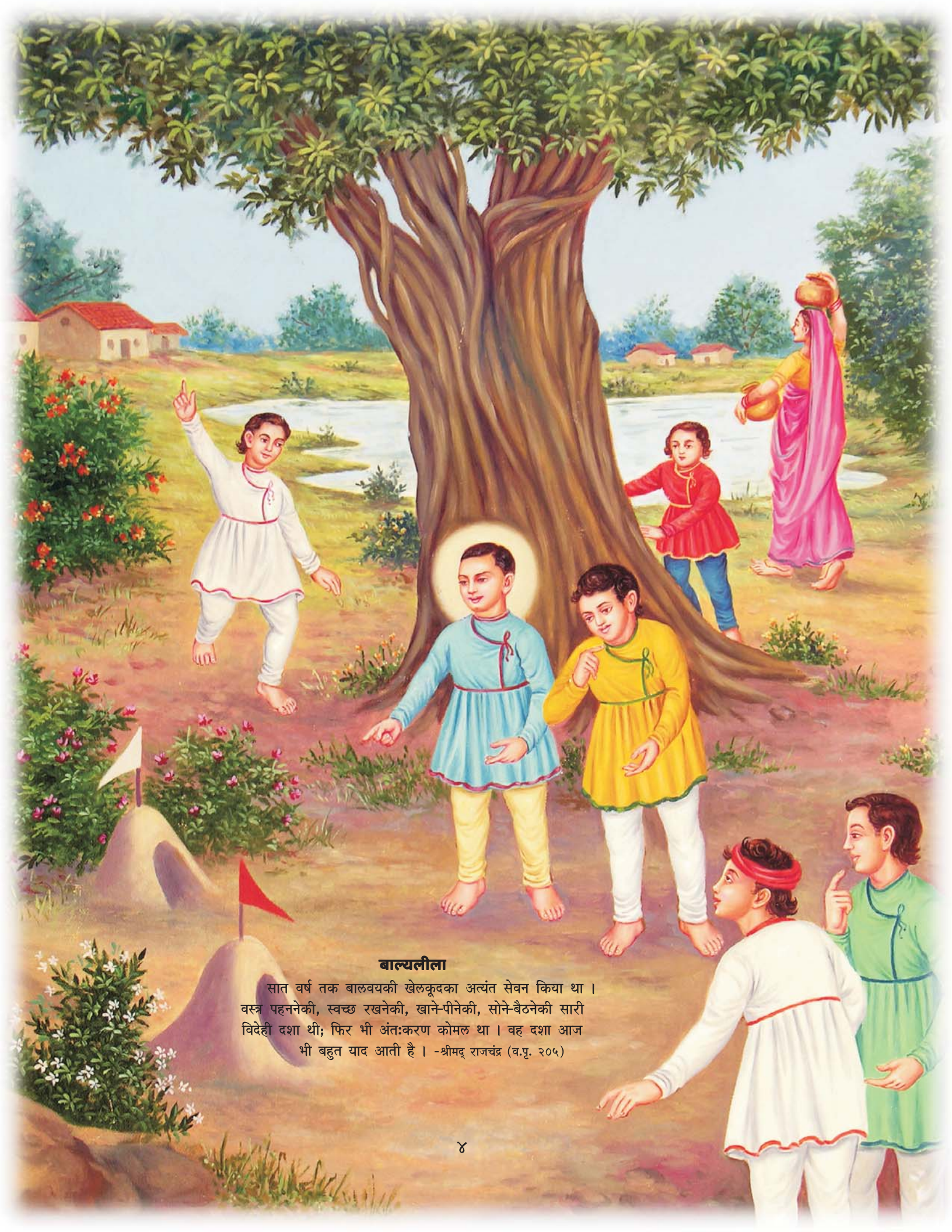

बाल्यलीला

सात वर्ष तक बालवयकी खेलकूदका अत्यंत सेवन किया था । वस्त्र पहननेकी, स्वच्छ रखनेकी, खाने-पीनेकी, सोने-बैठनेकी सारी विदेही दशा थी; फिर भी अंतःकरण कोमल था । वह दशा आज भी बहुत याद आती है । -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २०५)

प्रभुदर्शन और संत समागम प्रिय

श्रीमद्के दादाजी पंचाणभाई श्री कृष्णके भक्त थे। उनके साथ श्रीमद् हमेशां श्रीकृष्णके दर्शन हेतु जाया करते थे। श्रीमद्के मातुश्री जैन संस्कार लेकर आये थे। इसलिये बालयोगी श्रीमद्में वैष्णव एवं जैनधर्म दोनों प्रकारके संस्कारोका सिंचन हुआ।

"देव कौन? वीतराग। दर्शनयोग्य मुद्रा कौनसी? जो वीतरागता सूचित करे वह।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६८३)

समय समय पर श्रीमद् धर्मकथाका श्रवण करते थे। बार-बार अवतारोके चमत्कारके प्रति उन्हें आकर्षण होता था और उन्हें परमात्मा भी मानते थे। परमात्माके रहनेके स्थानको देखनेकी उनकी परम जिज्ञासा थी।

धर्म संप्रदायके महंत हो, स्थल स्थल पर चमत्कारसे हरिकथा करते हो और त्यागी हो तो कितना आनंद आयेगा? ऐसी उनको विशेष कल्पनाए हुआ करती थी।

"जिसके अंतःकरणमें त्याग-वैराग्य आदि गुण उत्पन्न नहीं हुए ऐसे जीवको आत्मज्ञान नहीं होता।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.५३६)

चक्रवर्ती बननेका विचार

श्रीमद्को अपनी बाल्यवयमें कभी कभी राजेश्वर जैसे उच्च पदको पानेकी जिज्ञासा होती थी । तब महान चक्रवर्ती द्वारा किये गये तृष्णाके विचार उन्होंने किये थे । लेकिन विचार करते समय– **"चक्रवर्तीके अंतःकरणमें प्रवेश किया । उसका अंतःकरण बहुत दुःखी था । अनंत भयके पर्यायोंसे वह थरथराता था । काल आयुकी रस्सीको निगल रहा था । हड्डी-मांसमें उसकी वृत्ति थी । कंकरोंमें उसकी प्रीति थी । क्रोध, मानका वह उपासक था । बहुत दुःख ।"** -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ८०६)

निःस्पृही महात्मा बननेका विचार

जब निःस्पृही महात्माके दर्शन होते तब निःस्पृही महात्माके द्वारा किये गये सर्वसंग परित्याग करनेके निःस्पृह विचार भी श्रीमद्ने किये थे । जिसके फलस्वरूप उनकी आत्मदशा दिन प्रतिदिन निर्मल होने लगी ।

"शुभेच्छा, विचार, ज्ञान इत्यादि सब भूमिकाओंमें सर्वसंगपरित्याग बलवान उपकारी है, ऐसा जानकर ज्ञानीपुरुषोंने 'अणगारत्व' का निरूपण किया है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४९६)

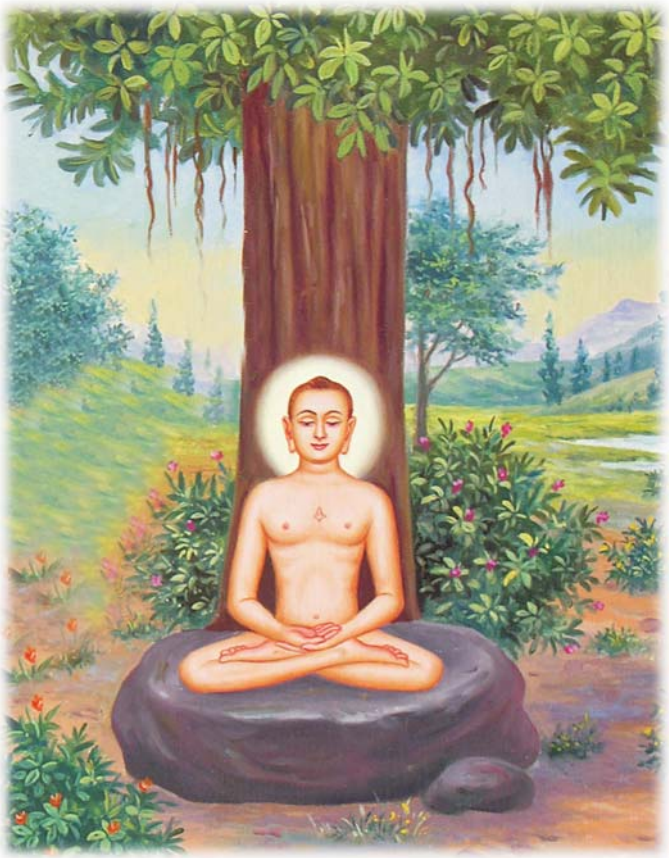

पाठशालामें प्रथम दिन बालयोगी श्रीमद्का ग्रंथ पठन

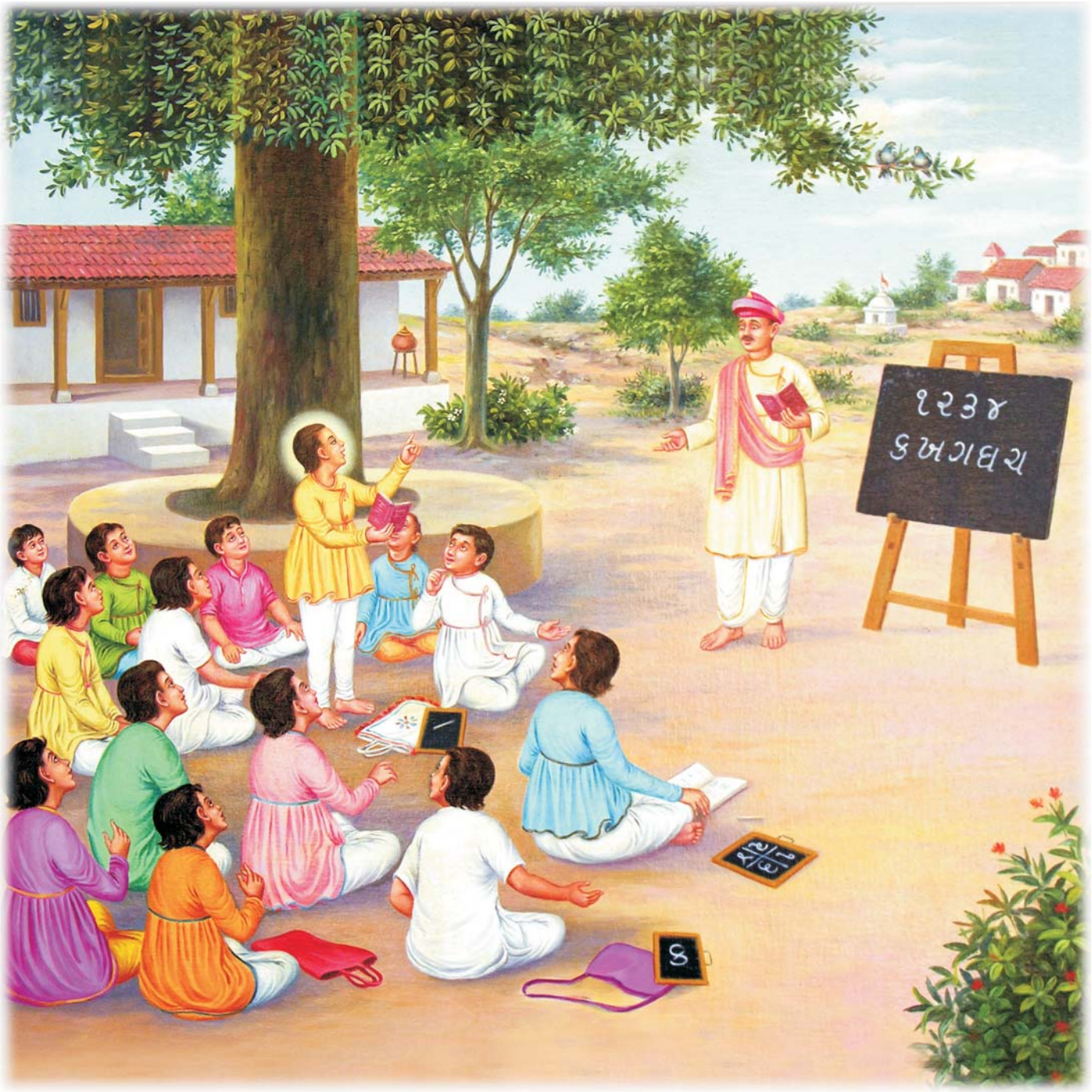

श्रीमद्को सात वर्षकी उम्रमें पढ़नेके लिये स्कूलमें बिठाया। अंक एक से दस तक और जैसे जैसे आगे क ख ग वगैरह शिक्षक बताते गये वैसे वैसे श्रीमद्ने कहा कि यह तो मुझे मालुम है। फिर पुस्तकमेंसे पाठ पढ़नेके लिये कहा तो वह भी रुके बिना पढ़ लिया। पुस्तक रखनेके बाद अनुक्रमपूर्वक जितने पाठ श्रीमद्ने पढ़े थे वे सब पाठ बिना भूल मुखसे बोलकर सुनाये। इस घटनासे शिक्षकको बड़ा आश्चर्य हुआ कि आजसे ही यह विद्यार्थी पढ़नेके लिये आया है और यह कैसे ? यह कोई दैवीपुरुष हो ऐसा जान पड़ता है।

पूर्वजन्मके अभ्याससे ऐसी असाधारण बुद्धि श्रीमद्को सहजमें ही प्राप्त थी।

"अज्ञानयोगिता तो जबसे इस देहको धारण किया तभीसे नहीं होगी ऐसा लगता है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६८१)

मृत्यु रहस्य जाननेकी तीव्र जिज्ञासा

श्रीमद् जब सात वर्ष के थे तब उनके जीवनमें एक महत्वपूर्ण घटना बन गई ।

ववाणियामें एक अमीचंदभाई नामके सद्गृहस्थ रहते थे । उनको श्रीमद्के प्रति बहोत प्रेम था । एक दिन अकस्मात सापके काटने से उनकी तत्काल मृत्यु हो गई ।

श्री अमीचंदभाई गुजर गए । यह सुनकर श्रीमद् घर पर आए और दादासे पूछने लगे दादा ! 'गुजरजानेका क्या अर्थ है ?

दादाने कहा—उसमेंसे जीव निकल गया । अब वे हलन-चलन नहीं कर सकेंगे, बोल भी नहीं सकेंगे, या खानापीना कुछ नहीं कर पायेंगे । इसलिये तालाबके पास स्मशानमें ले जाकर उनको जला दिया जायेगा ।

स्मशानमें जला डालनेकी बात सुनकर विचारमें पड़ गये । थोडी देर घरमें इधर उधर घूम कर चूपके से श्रीमद् तालाबके पास आ पहुँचे ।

"कदम रखनेमें पाप है, देखनेमें जहर है, और सिर पर मौत सवार है;
यह विचार करके आजके दिनमें प्रवेश कर।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.५)

चिताको देखते समय बालयोगी श्रीमद्‌को जातिस्मरणज्ञान

तालाबके उपरके दो शाखावाले बबुलके पेड़ पर चढ़कर देखा तो चिता जल रही थी और कुछ लोग आसपास बैठे हुए थे। उसको देखकर श्रीमद्‌ने सोचा कि अहो ! ऐसे मनुष्यको जला देना ये कैसी क्रुरता ? ऐसा क्यों हुआ ? आदि विचार करते समय आत्माकी निर्मलदशाके कारण अज्ञानताका पर्दा हट गया और केवल सात वर्षकी उम्रमें ही जातिस्मरणज्ञान उत्पन्न हो गया, पूर्वभव जाननेमें आ गए।

फिर एकबार जूनागढ़का किल्ला देखा तब उस पूर्वभव के ज्ञानमें बढ़ोत्तरी हुई और अंतमें नौसो भव उनके स्मरणमें आ गए। इस असाधारण घटनासे वे विशेष शांत होते गए और उनकी वैराग्यभावना दिन प्रतिदिन बढ़ती चली।

"जातिस्मरणज्ञान मतिज्ञानके 'धारणा' नामके भेदके अंतर्गत है। वह पिछले भव जान सकता है।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७६८)

"पुर्नजन्म है–जरुर है। इसके लिये 'मैं' अनुभवसे हाँ कहनेमें अचल हूँ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३६८)

पाठशालामें विद्यार्थीओको पढ़ाते हुए बालयोगी श्रीमद्

श्री दामजीभाई कहते है—श्रीमद् जब स्कूलमें पढ़ते थे तब साठ विद्यार्थीओको स्वयं पढ़ाते थे। शिक्षक तो बैठे ही रहते थे। विद्यार्थी, शिक्षकको ऐसा कहते थे कि रायचंदभाई हमको पाठ सिखानेसे वह जल्दी याद रह जाता है। श्रीमद् विद्यार्थीओको पाठ न याद हो तो भी कभी पीटते नहीं थे।

एक विद्यार्थी जो श्रीमद्के साथ पढ़ते थे उन्होंने लिखा है कि एकबार में घरसे पाठ किये बिना ही स्कूलमें गया। इसलिये पाठके बारेमे मैं कुछ नहीं बोल सका। तब रायचंदभाईने मुझे खड़ा किया और बहुत कोमलतासे मेरा कान पकडा। उनका हाथ मुझे इतना मुलायम और कोमल लगा कि जिससे मुझे दुःख नहीं हुआ बल्कि कान पकडके ही रक्खें तो अच्छा ऐसा महसुस हुआ। ऐसी जिनके हृदयमें दया बसी हुई थी वह मुझे आजभी स्मृतिमें आती है।

"ज्ञान उसे कहते हैं जो हर्ष-शोकके समय उपस्थित रहें; अर्थात् हर्ष-शोक न हों।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६९९)

रामायण और महाभारतको समझाते हुए

श्रीमद्‌को रामायण और महाभारत पढ़नेका बचपनसे ही शोख था । वे वजा भगत की झोंपड़ीमें जाकर रामायण और महाभारतका ग्रंथ पढ़ते थे और भगतको उसका रहस्य समझाते थे । उस समय उनकी उम्र करीबन ११-१२ सालकी थी । बचपनकी यह रुचि पूर्वजन्मका संस्कार बताती है ।

"इंद्रियनिग्रहके अभ्यासपूर्वक सत्श्रुत और सत्समागम निरंतर उपासनीय है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६४९)

शूल की पीड़ा कैसे सहन की ?

'पंचाणदादा गुजर गये तब श्रीमद् १० सालके थे । स्मशान पर जाते समय ननामीके आगे चलकर श्रीमद्ने अग्निकी कुलडी हाथमें ली थी । पैरमें कुछ पहना नहीं था । उस समय पैरोंमें पहननेका रिवाज नहीं था । रास्तेमें चलते समय श्रीमद्के पैरमें बबुलका लम्बा कांटा (शूल) चूभ गया । शबके चारो ओर घूमकर अग्निदाह प्रथम श्रीमद्ने दिया । बादमें दूसरे भाईयोंने अग्निसंस्कार किया । जहाँ तक मुडदा जलता रहा वहाँ तक सब बैठे रहे । फिर तालाब पर जाकर स्नान करके सब घर पर आए वहाँ तक पैरमें वो कांटा चूभा हुआ ही था ।' (अ.पृ.५६)

लोग घर पर आये तब माताजीने श्रीमद्से पूछा : भाई पैरमें क्या हुआ है ? पैर क्युं ऐसा गिरता है ? फिर पैरके नीचे देखा तो उसमें लम्बा कांटा चूभा हुआ मालुम पडा । कांटेको निकाला और पूछा 'कहाँ पर कांटा चूभा ? श्रीमद्ने कहा 'यहाँसे स्मशान जाते समय रास्तेमें ।' वहाँ पर किसीको क्यूं कहा नहीं या निकलवाया नहीं ? इस काँटेकी पीड़ाको कैसे सहन किया ? श्रीमद् मौन रहे ।

"शारीरिक वेदनाको देहका धर्म मानकर और बाँधे हुए कर्मोंका फल जानकर सम्यक् प्रकारसे सहन करना योग्य है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३८५)

प्रतिक्रमण सूत्रके द्वारा जैनधर्ममें प्रीति

ववाणियामें जो बनिये लोक रहते थे वे सब स्थानकवासी संप्रदायके थे। बालयोगी श्रीमद्को उनका परिचय था। उनके पाससे जैनधर्मकी प्रतिक्रमण सूत्र आदि पुस्तके पढ़नेको मिली; उसमें बहुत ही विनयपूर्वक सब जगतवासी जीवोंसे मित्रताकी भावना प्रदर्शित की है। वह जानकर श्रीमद्की प्रीति जैनधर्मके प्रति विशेष बढ़ने लगी। धीरे-धीरे यह प्रसंग बढ़ता चला।

"वीतरागका कहा हुआ परम शान्त रसमय धर्म पूर्ण सत्य है, ऐसा निश्चय रखना।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४१३)

हरी सब्जी के जीवों पर दया

श्री जवलबेन भगवानदास मोदी कहते है : पू. देवमाने कहा था कि कृपालुदेव छोटे थे तब उन्हें एक दिन शाक काटकर तैयार करनेको कहा । वे शाकके छिलके उतार रहे थे और आँखोमेंसे आँसू बहते जा रहे थे । पू. देवमाने यह देखा और कहने लगे "इतना शाक तैयार करनेमें भी तुमको रोना आता है ? लेकिन कृपालु क्या कहे ? उनके हृदयमें तो हरी सब्जीके जीवोंके प्रति दया बरस रही थी; उस कारणसे अश्रुधारा बह रही थी । ज्ञानीपुरुषकी इस हृदय वेदना को कौन समझे ?

"कोई हरी वनस्पति छीलता हो तो हमसे तो वह देखा नहीं जा सकता । इसी तरह कोई भी आत्मा उज्ज्वलता प्राप्त करे तो उसे अतीव अनुकंपा बुद्धि रहती है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७११)

महावीर प्रभुको अपनी दृष्टिमें लाओ

श्री पोपटभाई मनजी कहते है–बालयोगी श्रीमद् राजचंद्र छोटे बच्चोंको अपने पास बुलाकर कहते थे कि तुम ध्यानमुद्रा अनुसार ऐसे हाथके नीचे हाथ रखकर आँखे बंद करो और मैं बोलता हूँ वैसे श्री महावीर प्रभुको अपनी दृष्टिमें लाओ । तब थोड़े बच्चोंने वैसा किया और थोड़े पद्मासन लगाकर बैठ न सके उनको भींतके पास काउसग्गमें खड़ा रखा और श्रीमद् स्वयं ऐसी कोई गाथा बोलने लगे ।

"ज्ञान ध्यान वैराग्यमय,
उत्तम जहाँ विचार ।
ए भावे शुभ भावना,
ते ऊतरे भव पार ॥"
-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ५८)

धारशीभाई पर श्रीमद्का उपकार

एकबार श्रीमद्, न्यायाधीश श्री धारशीभाईके साथ मोरबीसे राजकोट अपने ननिहाल गये थे । रास्तेमें श्रीमद्के साथ बातचीतमें उनकी बुद्धिसे प्रभावित होकर धारशीभाईने श्रीमद्को राजकोटमें अपने ही साथ रहनेको कहा । तब श्रीमद्ने कहाः नहीं । मैं अपने ननिहालमें ही रहुंगा।

ननिहाल पहोंचे तब मामाने पूछा किसके साथ आये ? श्रीमद्ने कहा धारशीभाई के साथ ।

बादमें श्रीमद् खाना खा रहे थे तब रसोईघरके बाहर दोनों मामा परस्पर ऐसी बाते करने लगे कि धारशीभाईको मौतके घाट उतार दे अर्थात् मार डाले । यह बात सुनकर श्रीमद् जल्दीसे धारशीभाई के घर पर आ पहुँचे ।

श्री धारशीभाईके घर पर आकर श्रीमद्ने पूछा : तुम्हें मेरे मामाओंके साथ कोई रिश्ता है ? तब उन्होंने कहा कोई व्यवहार संबंध नहीं है लेकिन राज्य संबंधी खटपट चल रही है ।

तब श्रीमद्ने कहा : ऐसा है तो अब सावधान रहे । मौका मिले तो वे तुमको मार डालनेकी बात कर रहे थे ।

श्री धारशीभाईने कहा : ये तुमने कैसे जाना ?

श्रीमद् कहने लगे : मैं भोजन कर रहा था तब बहार ऐसी बाते कर रहे थे । यह सुनकर तुमको जागृत होनेके लिये कहने आया हूँ ।

श्री धारशीभाईके दिलमें ऐसा हुआ कि अहो ! इस बाल महात्माके हृदयमें कैसी उपकार बुद्धि है ! धन्य मेरा भाग्य कि इनका मुझे समागम मिला ।

"महात्मा होना हो तो उपकारबुद्धि रखें; सत्पुरुषके समागममें रहे;" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१५७)

काशी विद्याभ्यासके लिये आमंत्रण

श्रीमद्को अपने निर्मलज्ञानसे मालुम हुआ कि दो कच्छी भाई सांढणी पर बैठकर ववाणिया, मोरबी होकर मेरे लिये राजकोट आ रहे है । इसलिये श्री धारशीभाईको पूछा कि दो भाई कच्छसे आनेवाले है उनका ठहरना तुम्हारे घर पर रखेंगे ? उन्होंने खुशीसे हा कही । तब आनेवाले उन भाईयोंके मार्गकी तरफ श्रीमद्ने प्रयाण किया ।

वे नजदीक आनेपर श्रीमद्ने उनको उनके नामसे बुलाया : कैसे हो हेमराज-भाई ? कैसे हो मालसीभाई ? वे बोले : तुम ही राजचंद्र हो क्या ? तुमने कैसे जाना कि हम इस वक्त इसी मार्गसे आ रहे है ? श्रीमद्ने उत्तरमें कहा : 'आत्माकी अनंत शक्तियाँ है, इससे हम जानते हैं ।

एकांतमें कच्छी भाईयोंने श्रीमद्से कहा : आपकी प्रशंसा सुनकर विशेष विद्याभ्यासके लिये आपको काशी ले जानेके लिये विनती करने हम आए है । आपके भोजन वगैरहकी सब सुविधा हम कर लेंगे ।

जवाबमें श्रीमद्ने कहा : 'हमसे आना नहीं बन पायेगा'' वे मनमें समझ गये कि ये तो पढ़े हुए ही है । काशी जाकर विशेष पढ़ना इनके लिये क्या है ? ये कोई आश्चर्यकारक पुरुष दिखाई देते है ।

''जिस विद्यासे उपशम गुण प्रगट नहीं हुआ, विवेक नहीं आया अथवा समाधि नहीं हुई उस विद्याके विषयमें श्रेष्ठ जीवको आग्रह करना योग्य नहीं है ।'' -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३९७)

बाल्यवस्थामें भी कार्यपद्धतिकी जानकारी एवं त्वरितता

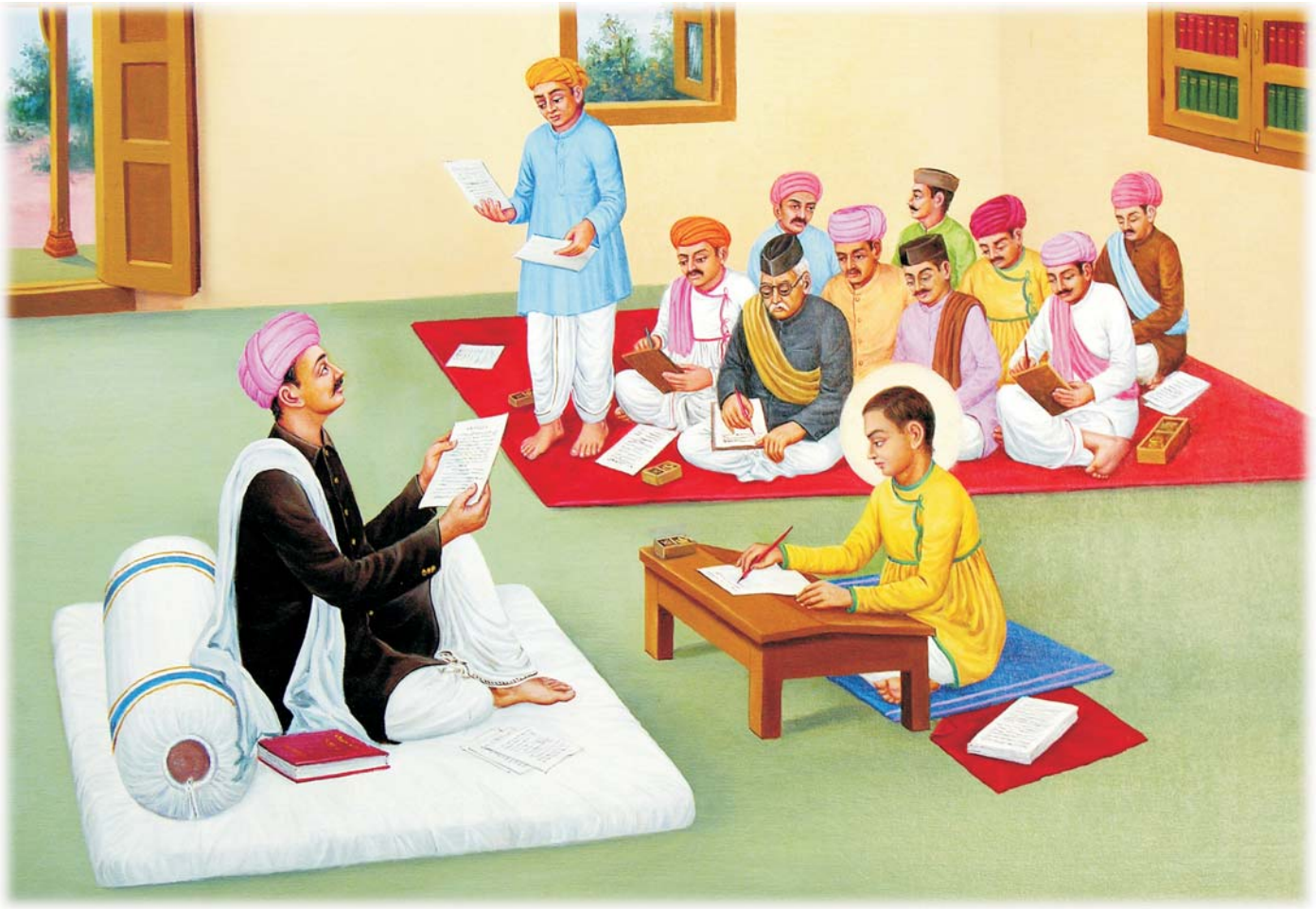

दूसरे दिन श्रीमद् धारशीभाईके घर पर पधारे। उसके बारेमें श्री धारशीभाई कहते है कि मुझे उस वक्त सरकारी रिपोर्ट और दूसरी नकले भी जल्दीसे करवानेकी जरुरत थी। मेरे पास दस कारकून थे। एक ही कारकूनको सब काम सौंप दिया जाय तो १०-१२ दिनमें पूरा हो। इसलिये दस कारकूनको थोड़ा थोड़ा काम बाँटकर दूंगा ऐसा मैं सोच रहा था तब श्रीमद्ने मुझे कहा : 'क्या इनकी नकले करनी है ? मैने कहा हा। तब श्रीमद्ने कहा : 'यह काम मुझे सोपीए, हो जायेगा'। उस वक्त मुझे मनमें हुआ कि यह लड़का क्या बोल रहा है ? इसलिये कहा कि तुम्हारेसे यह नहीं बन पायेगा। श्रीमद्ने दृढ़तासे कहा—'हो सकेगा'। जिससे विचार कर सब कामका आधा भाग श्रीमद्को लिखनेके लिये दिया और आधा भाग लिखनेके लिये उस दस कारकूनोको दिया।

करीबन दो घन्टेमें ही वह आधा भाग लिखकर श्रीमद्ने मुझे सौंप दिया। मैने मूल लिखानके साथ जाँच की तो जहाँ जहाँ शब्दोमें काना, मात्रा, अनुस्वार वगैरहकी भूल थी उसको भी सुधार दिया और अक्षर भी एकदम स्वच्छ लिखे हुए थे। अब दस कारकूनोने शेष आधा भाग उतारकर करीबन पाँच घंटेके बाद मुझे सौंपा। उसमें कितने अशुद्ध शब्द भी लिखे हुए थे और काना, मात्रा, अनुस्वार वगैरहकी भूल भी की थी। लिखते समय अक्षर पूरे नहीं पढ़े जाने पर बीचमें पूछनेके लिये भी आते थे।

जो काम दस कारकूनने मिलकर पाँच घंटेमें पूरा किया उतना ही काम श्रीमद्ने केवल दो घंटोमें और वह भी शुद्ध और स्वच्छतासे पूरा कर दिखाया। इससे यह लडका भविष्यमें बहुत ही प्रतिभाशाली होगा ऐसा आश्चर्यसहित भाव मेरे मनमें उत्पन्न हुआ था।

"नियमसे किया हुआ कार्य त्वरासे होता है, निर्धारित सिद्धि देता है, और आनंदका कारण हो जाता है।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १५७)

खुदके लिये हाथ लम्बाकर दीनता नहीं की

श्रीमद्को राजकोटसे अब वापिस ववाणिया जानेका विचार हुआ । तब ननिहालसे मिठाईका डिब्बा रास्तेमें भोजनके लिये उनको दिया । वह लेकर सबसे बिदा ली । वहाँसे धारशीभाईके पास गये ।

श्री धारशीभाईको 'श्रीमद् महापुरुष है' ऐसा जबसे मालूम हुआ तबसे उनको गद्दी पर बिठा कर स्वयं उनके प्रति पूजनीय भाव रखते हुए विनयपूर्वक उनके सामने बैठने लगे ।

श्रीमद्के पास टिकिटके पैसे नहीं होनेसे एक मिठाईवालेकी दुकान पर जाकर मिठाईका डिब्बा बेचकर टिकिटके पैसे प्राप्त कर लिये लेकिन धारशीभाईके साथ इतनी पहचान होते हुए भी पैसेकी याचना नहीं की । इतनी निस्पृहताका प्रादुर्भाव बचपनमें ही इनमें हो गया था । उत्तम गृहस्थके समान उनका सिद्धांत था कि–

"मर जाऊँ मागूँ नहीं, अपने तनके काज । परमारथके कारणे मागूँ, न समझूँ लाज ।।" -जीवनकला (पृ.२९)

भुजमें धर्मके विषयमें भाषण

कच्छ देशके दिवान श्री मणिभाई जशभाई गुजरातमेंसे कच्छमें आते जाते समय ववाणिया गाँवमें कच्छके निवासस्थानमें ठहरते थे। उस वक्त श्रीमद्के साथ धर्मचर्चा होती थी। श्रीमद्की बुद्धिसे आकर्षित होकर उन्हें कई बार कच्छ देशमें आनेका निमंत्रण दिया। एकबार उस विनतीको स्वीकार कर भुजमें उनके साथ श्रीमद् पधारे। वहाँ पर बहुत लोगोंके बीचमें वीतरागधर्मके बारेमें भाषण दिया। वह सुनकर कच्छके लोग आश्चर्यचकित होकर कहने लगे कि यह लडका बचपनमें ही धर्मसंबंधी इतनी विद्वता रखता है तो आगे बढकर महाप्रतापी और महायशवान बनेगा।

"सूत्र लेकर उपदेश करनेकी आगे जरूरत नहीं पड़ेगी।
सूत्र और उसके पहलू सब कुछ ज्ञात हो गये हैं।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पु.२५३)

प्रामाणिक एवं पुरुषार्थी

"तू चाहे जो धंधा करता हो, परंतु आजीविकाके लिये अन्यायसंपन्न द्रव्यका उपार्जन मत करना ।"
-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६)

दुकान पर समय मिलने पर श्रीमद् राजचंद्र पुस्तकोका अध्ययन करते थे एवं रामायण और महाभारतकी कथाओंके आधार पर कविताओकी रचना करते थे ।

"व्यर्थ समय न जाने दें ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१३)

पाठशालाकी पढ़ाई पूरी होने पर श्रीमद् पिताजीकी दुकान पर बैठते थे । वे प्रामाणिक होनेसे लिखते है–

"किसी को मैंने न्यूनाधिक दाम नहीं कहा या किसीको न्यून-अधिक तौल कर नहीं दिया, यह मुझे निश्चित याद है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२०७)

"सत्पुरुष अन्याय नहीं करते । सत्पुरुष अन्याय करेंगे तो इस जगतमें वर्षा किसके लिये बरसेगी ? सूर्य किसके लिये प्रकाशित होगा ? वायु किसके लिये चलेगी ?" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६८९)

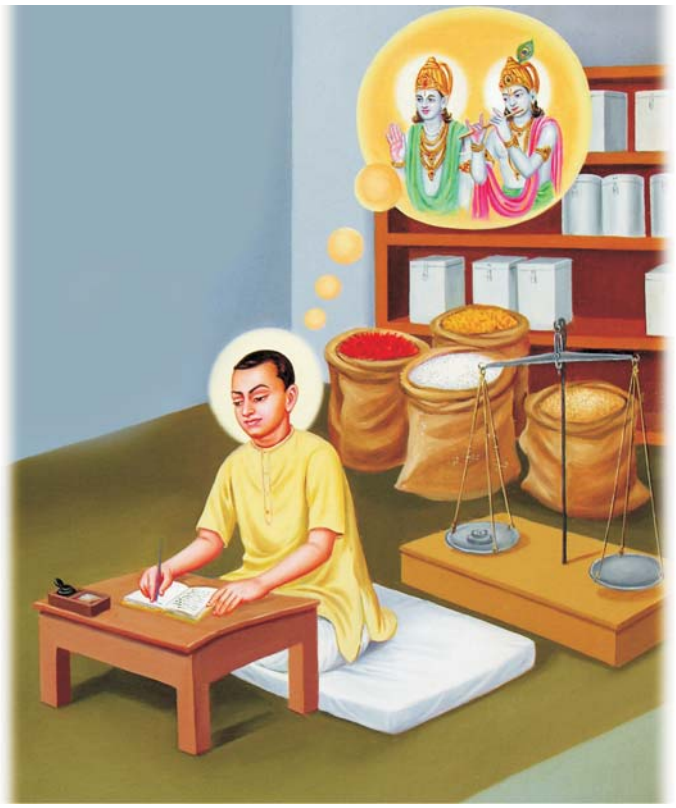

श्रीमद्के अक्षर स्पष्ट और सुंदर होनेसे कच्छ दरबारके निवासस्थान पर उनको लिखनेके लिये बुलाते थे और अपना नीजी लिखान भी करवाते थे ।

"अपने पिताकी दुकानपर बैठता और अपने अक्षरोंकी छटाके कारण कच्छ दरबारके उतारेपर मुझे लिखनेके लिये बुलाते तब मैं वहाँ जाता था ।"
-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२०७)

श्रीमद्के सेवाभावी मातापिता

पिताश्री रवजीभाई पंचाणभाई महेता

मातुश्री देवबाई रवजीभाई महेता

श्री रवजीभाई साधुसंत पुरुषोकी सेवा खूब करते थे और अन्न कपड़ा वगैरह भी देते थे ।

सास और श्वसुरकी देवमा बहुत सेवा करते थे । सास कहती थी "देव ! तुम तो मेरे घर देवी जैसी हो । तेरे जैसी बहु किसीके घर नहीं होगी । बेटा ! तुम्हारा सब ठीक होगा ।"

"श्री रवजीभाईके यहाँ एक वृद्ध आडतिया आते थे । वे एक बार बहोत बिमार हो गये तब देवमाने उनकी सेवाचाकरी बहुत की । उनके लिए शीरा बनाकर देवमा अपने हाथसे खिलाते थे ।

वे बहुत अशक्त थे । उन्होंने देवमासे कहा कि 'तुम मेरी सेवा बहुत करती हो, प्रभु ! तुम्हारे यहाँ महा भाग्यशाली पुत्रका जन्म हो, यह मेरा बेटा देव तुम्हें आशीर्वाद है ।" (अ.पृ.५५)

गांगेय अणगारके विभाग सुगम शैलीमें

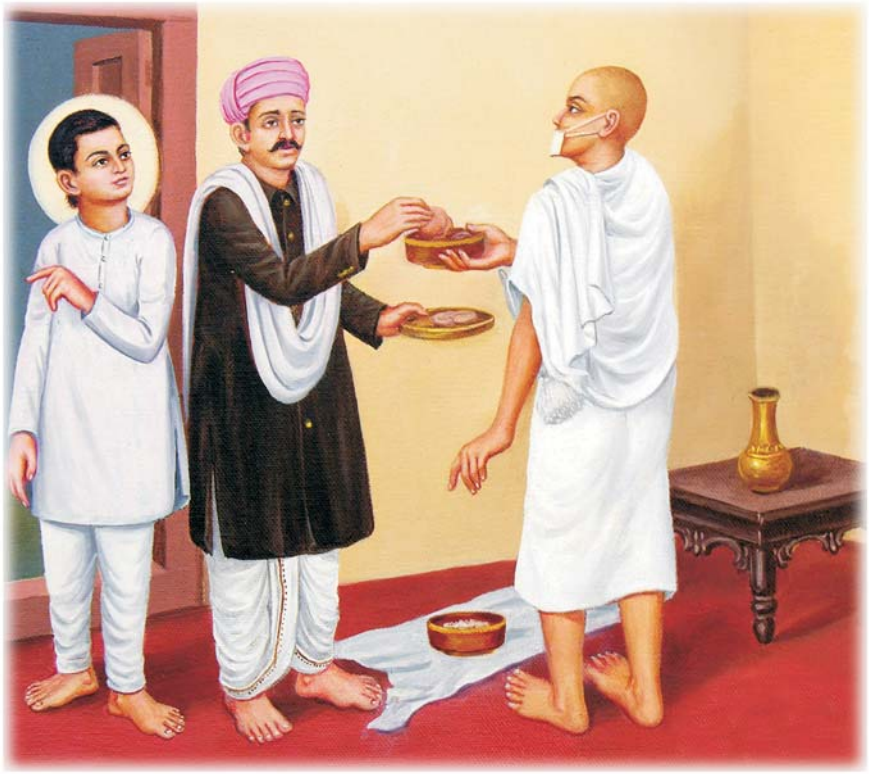

श्री धारशीभाई कहते है—श्रीमद् १४-१५ वर्षकी उम्रमें मोरबीमें एकबार मेरे यहाँ पधारे थे। मैं शास्त्रका अभ्यासी होने से साधु-महाराज हमारे घर पर गोचरीके लिये आये तब मुझे कहा कि गांगेय अणगारके विभाग बराबर समझमें आते नहीं है। इसलिये दोपहरको मुनिनिवासके स्थान पर आना। मैंने हा कही। वहाँ उपस्थित श्रीमद्ने यह बात-चीत सुन ली। बादमें कामकी वजहसे में घरसे बाहर निकला।

उस समय श्रीमद्ने एक कागज लेकर उसमें 'गांगेय अणगारके विभागका अपूर्व रहस्य' शीर्षकके नीचे उसका स्वरूप सुगम शैलीमें लिखकर, वह कागज एक छोटी पुस्तकमें डालकर स्वयं चले गये।

मैं बहारसे घर पर आ रहा था तब दरवाजेमेंसे बकरीने घरमें प्रवेश किया और एक पुस्तक मुखमें ली। उस बकरीको आवाज देकर निकालने पर उसके मुँहमेंसे वह पुस्तक नीचे गिर पडी। उसमेंसे श्रीमद्के लिखे हुए 'गांगेय अणगार के विभाग' वाला कागजभी बाहर निकल पडा। वह लेकर पढ़ने पर मेरे आश्चर्यका ठिकाना नहीं रहा। श्रीमद्के प्रति मेरे मनमें उत्कृष्ट आदरभाव उत्पन्न हुआ। अति उल्लासभावसे आकर उनको बुलानेके लिये मैने चपराशीको भेजा।

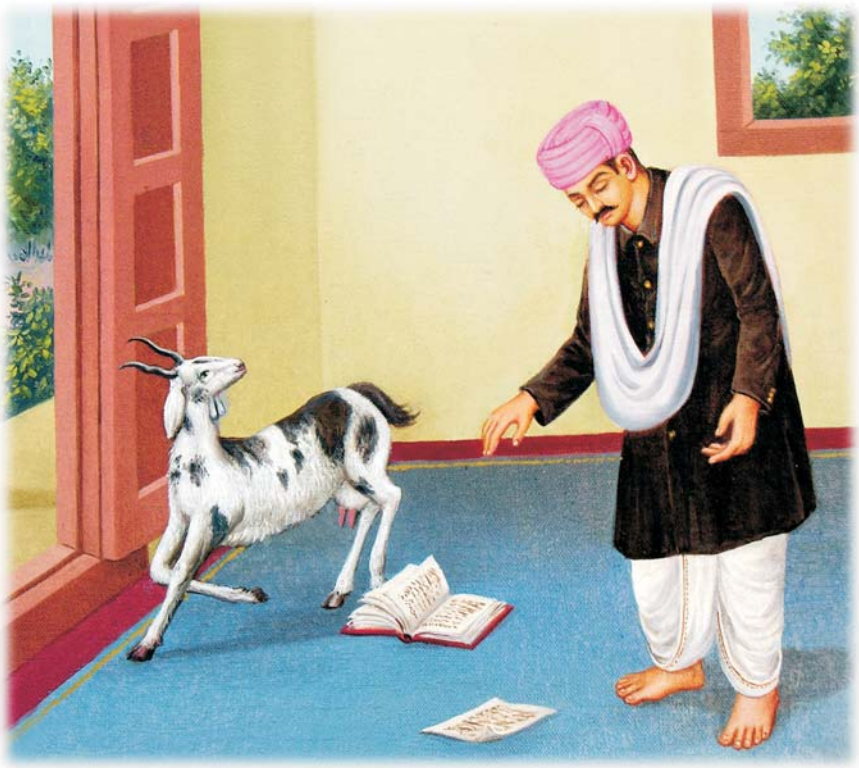

"शास्त्रमें मार्ग कहा है, मर्म नहीं कहा। मर्म तो सत्पुरुषके अन्तरात्मामें रहा है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१८५)

श्रीमद्‌को गुरुके रूपमें स्वीकार

श्रीमद्‌ने जैसे ही घरमें प्रवेश किया कि मैंने उन्हें साष्टांग दंडवत् प्रणाम किया और उनके पाँवमें गिरकर अविनयकी क्षमा मांगी । फिर विनय करके 'गांगेय अणगार'के विभागका रहस्य उनके पाससे दो घण्टे तक अपूर्व अमृतवाणीमें सुनकर रोमांच खड़े हो गये । उस समयसे श्रीमद्‌को मेरे तरणतारण गुरुके स्थान पर स्वीकार किया ।

"सत्पुरुष तो, जैसे एक बटोही दूसरे बटोहीको रास्ता बताकर चला जाता है, उसी तरह रास्ता बताकर चले जाते है । गुरुपद धारण करनेके लिये अथवा शिष्य बनानेके लिये सत्पुरुषकी इच्छा नहीं है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७२३)

"जिसे किसी भी प्रकारका स्वार्थ नहीं है वैसा गुरु धारण करना चाहिये ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२८)

"गुरु यदि उत्तम हों तो वे भवसमुद्रमें नाविकरूप होकर सद्धर्मनावमें बैठाकर पार पहुँचा दें । तत्त्वज्ञानके भेद, स्व-स्वरूपभेद, लोकालोक विचार, संसार स्वरूप यह सब उत्तम गुरुके बिना मिल नहीं सकते ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६७)

"सद्‌गुरुके बिना मोक्षकी आशा न रखें । जगतमें गुरु तो बहोत है, वे नहीं । जो सद्‌गुरु है वे ही, अन्य नहीं ।" (उ.पृ.१६६)

"कृपालुदेवके प्रति प्रेम समर्पित करे ।" (उ.पृ.२६६)

"हम तो गुरु बनते नहीं, पर सद्‌गुरुको बता देते हैं ।...गुरु बनना बहुत जिम्मेदारीका काम है ।" (उ.पृ.२९१)

बाल्यवयमें ही विद्वानोकी शंकाओका समाधान

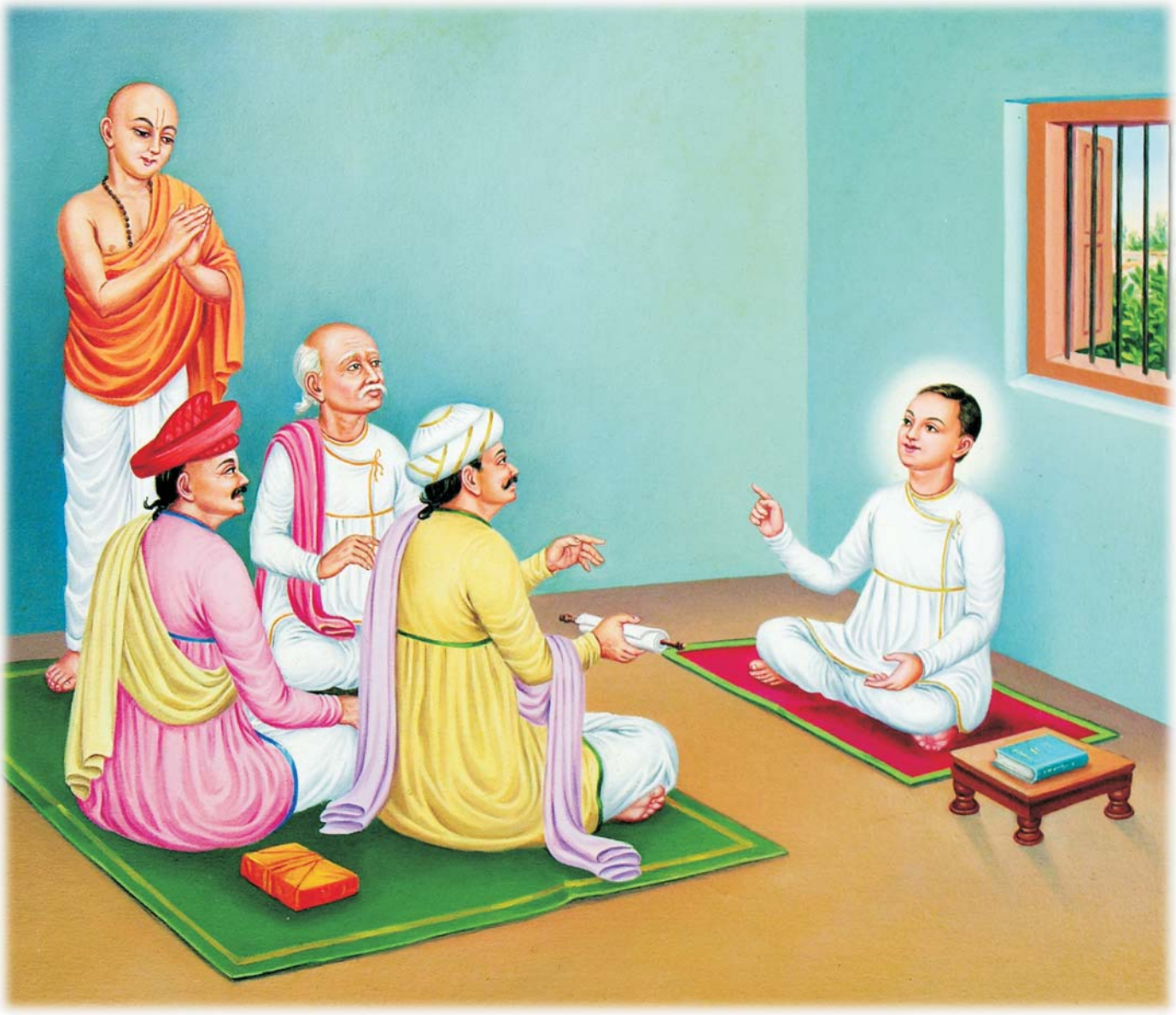

श्रीमद् बचपनसें ही पूरे गाँवमें बहुत ही होशियार, तीव्र बुद्धिशाली और समझदार गिने जाते थे । उनके प्रति सब लोगोको सहजमें ही बहुत प्रेम आता था । बचपनसे ही वे महाशांत थे । लघुवयमें ही उनका नाम सुनकर बहोत विद्वान लोग शंकाओका समाधान करनेके लिये, प्रश्नोत्तरके लिये, उनकी विद्वता देखनेके लिये एवं वादविवाद करनेके लिये उनके पास आते थे; और अपने मनका समाधान होजानेसे शांति पाकर उनको प्रणाम करते थे ।

"ज्यां शंका त्यां गण संताप ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२१३)

"प्रत्येक जीवको जीवके अस्तित्वसे लेकर मोक्ष तककी पूर्णरूपसे श्रद्धा रखनी चाहिये । इसमें जरा भी शंका नहीं रखनी चाहिये । इस जगह अश्रद्धा रखना, यह जीवके पतित होनेका कारण है, और यह ऐसा स्थानक है कि वहाँसे गिरनेसे कोई स्थिति नहीं रहती ।

अंतर्मुहूर्त्तमें सत्तर कोटाकोटि सागरोपमकी स्थिति बँधती है,
जिसके कारण जीवको असंख्यात भवोंमें भ्रमण करना पड़ता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६८६)

पुण्यके आधार पर सब सुधार होगा

श्रीमद् जब छोटे थे तब ववाणियामें अपने घर पर अकेले ही बैठकर पढ़ा करते थे । एकबार पिताजी रवजीभाईने श्रीमद्से पूछा कि भाई, अपनी व्यवहारिक स्थितिका भविष्य कैसा है ? श्रीमद्ने कहा : वर्तमानके बजाय उज्ज्वल है, पुण्यके आधार पर सब सुधार होगा ।

"पापके उदयसे हाथमें आया हुआ धन क्षण मात्रमें नष्ट हो जाता है । पुण्यके उदयसे बहुत ही दूरकी वस्तु भी प्राप्त हो जाती है । जब लाभांतरायका क्षयोपशम होता है तब यत्नके बिना निधिरत्न प्रगट होता है । यह संसार पुण्यपापके उदयरूप है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पु.२१)

वीतरागधर्म पूर्ण सत्य

तेरह सालकी उम्रमें श्रीमद्को कौनसा धर्म सत्य होगा ऐसा धर्ममंथन काल शुरु हुआ । एकाद सालमें मुख्य मुख्य धर्मकी जाँचकर सर्वज्ञ प्रणीत वीतराग शासन ही संपूर्ण सत्य है ऐसे निर्णय पर आ पहुँचे ।

"सर्वकी अपेक्षा वीतरागके वचनको सम्पूर्ण प्रतीतिका स्थान कहना योग्य है, क्योंकि जहाँ रागादि दोषका सम्पूर्ण क्षय हो वहाँ सम्पूर्ण ज्ञानस्वभाव प्रगट होने योग्य नियम घटित होता है ।
श्री जिनेन्द्रको सबकी अपेक्षा उत्कृष्ट वीतरागता संभवित है, क्योंकि उनके वचन प्रत्यक्ष प्रमाण है ।"
-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४७०)

मोरबीमें श्री पोपटभाई दफतरीका मकान उनका वाचनालय और लेखनालय बन गया था । पोपटभाई श्रीमद्के पास शास्त्रार्थ सुनकर उनको बाल्य संत मानते थे और मोरबीसें या अहमदाबाद वगैरह स्थानोसें पुस्तकें मंगवाकर श्रीमद्को सहायभूत होते थे ।

पूर्वभवोमें आराधन किये हुए महापुरुषोके उपदेशामृत के संचयरूप और अनेक विषयोके ग्रंथ पठनके बाद साररूप यह 'मोक्षमाला' नामका ग्रंथ श्रीमद्ने भव्य जीवोके कल्याणके लिये बनाया ।

श्रीमद्का श्रीराम जैसा वैराग्य

मोक्षमालाके रचनाकाल समयमें श्रीमद्का वैराग्य श्रीराम जैसा था । श्रीराम तीर्थयात्रा करके आनेके बाद राजमहलमें रहते हुए भी उनको आत्मचिंतन प्रिय था ।

वडवामें श्रीमद्ने एकबार श्री लल्लुजी मुनिको कहा कि 'छोटी उम्रमें हमने मोक्षमालाकी रचना की उस वक्त श्रीरामका 'योगवासिष्ठ रामायण'के 'वैराग्य प्रकरण' में जैसा वर्णन है वैसा वैराग्य हमको था । उस समय जैन आगमका मात्र सवा वर्षमें हमने अवलोकन कर लिया था और तीव्र वैराग्य ऐसा था कि हमने भोजन किया है या नहीं उसकी भी जानकारी हमको रहती नहीं थी ।

"ज्ञानके साथ वैराग्य और वैराग्यके साथ ज्ञान होता है । वे अकेले नहीं होते । वीतराग वचनके असरसे जिसे इन्द्रियसुख नीरस न लगे तो उसने ज्ञानीके वचन सुने ही नहीं, ऐसा समझें ।
ज्ञानीके वचन विषयका वमन, विरेचन करानेवाले हैं ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४७६)

मोक्षमाला का सर्जन

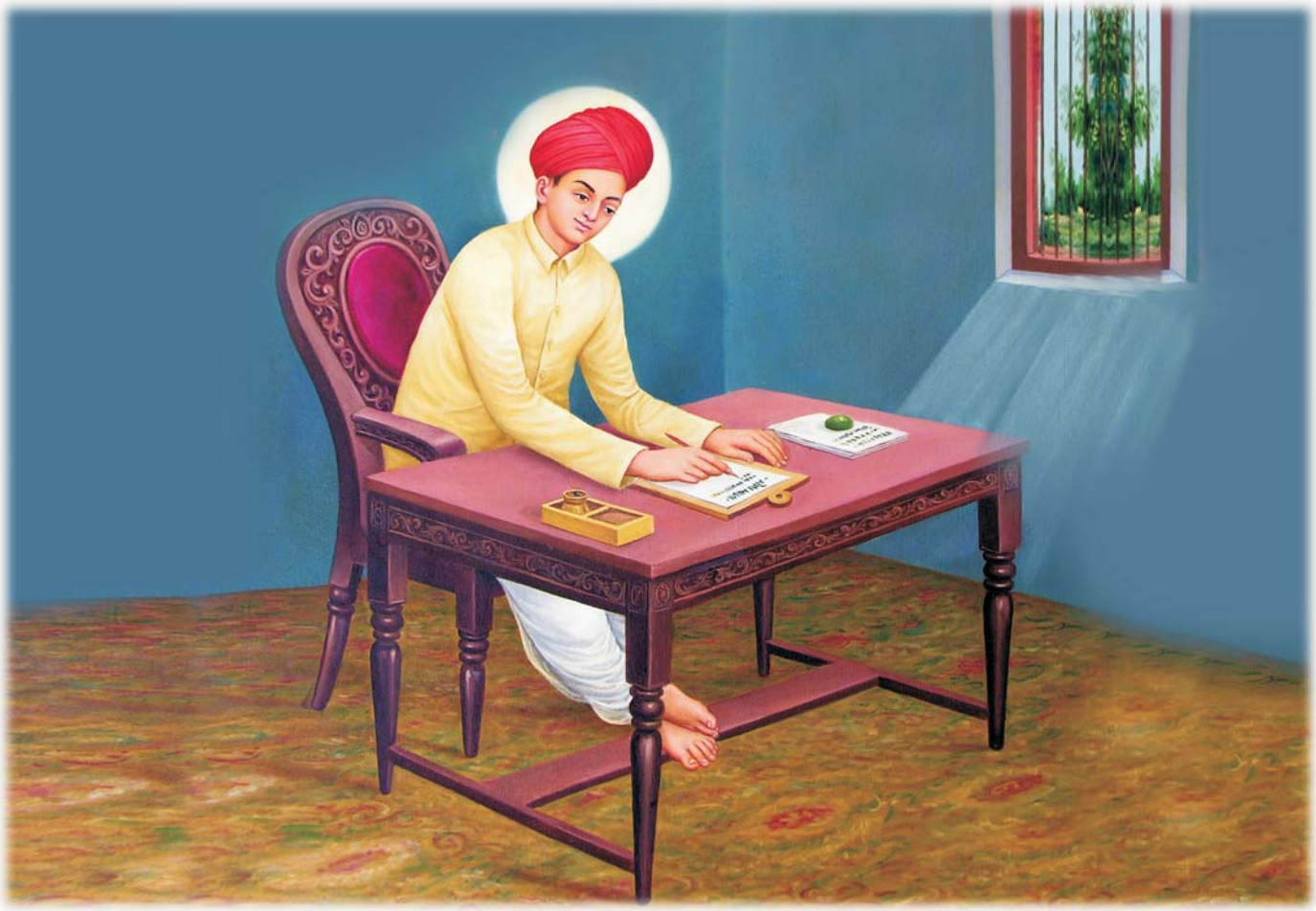

सं. १९४० में श्री पोपटभाई दफ्तरीने मोरबीमें श्रीमद्से विनति कर कहा कि बालकसे लगाकर वृद्ध भी आसानीसे समझ सके ऐसा एक ग्रंथ आप लिखें तो बहोत जीवोंको महान लाभका कारण होगा। इस विनंतिका स्वीकार कर पोपटभाई दफ्तरीके मकानमें ही दूसरे मजले पर बैठकर श्रीमद्ने तीन दिनमें इस मोक्षमालाकी रचना १०८ शिक्षापाठके रूपमें कर दी। इस 'मोक्षमाला' ग्रंथके बारेमें श्रीमद् स्वयं लिखते है–

" 'मोक्षमाला' हमने सोलह वर्ष और पाँच मासकी उम्रमें तीन दिनमें लिखी थी।

जैनमार्गको यथार्थ समझानेका उसमें प्रयास किया है। जिनोक्तमार्गसे कुछ भी न्यूनाधिक उसमें नहीं कहा है। वीतरागमार्गमें आबालवृद्धकी रुचि हो, उसका स्वरूप समझमें आये, उसके बीजका हृदयमें रोपण हो, इस हेतुसे उसकी बालावबोधरूप योजना की है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६७५)

"बहुत गहराईसे मनन करनेपर यह मोक्षमाला मोक्षका कारणरूप हो जायेगी। इसमें मध्यस्थतासे तत्त्वज्ञान और शीलका बोध देनेका उद्देश्य है।

इस पुस्तकको प्रसिद्ध करनेका मुख्य हेतु यह भी है कि जो उगते हुए बाल-युवक अविवेकी विद्या प्राप्त करके आत्मसिद्धिसे भ्रष्ट होते हैं, उनकी भ्रष्टता रोकी जाये।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६०)

"महासतीजी 'मोक्षमाला' का श्रवण करती हैं, यह बहुत सुखद और लाभदायक है। उनसे मेरी ओरसे विनती कीजियेगा कि इस पुस्तकका यथार्थ श्रवण करें और मनन करें। इसमें जिनेश्वरके सुन्दर मार्गसे बाहरका एक भी विशेष वचन रखनेका प्रयत्न नहीं किया है। जैसा अनुभवमें आया और कालभेद देखा वैसे मध्यस्थासे यह पुस्तक लिखी है। मैं मानता हूँ कि महासतीजी इस पुस्तकका एकाग्रभावसे श्रवण करके आत्मश्रेयमें वृद्धि करेंगी।"-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१९५)

आश्चर्यचकित कर दें ऐसे श्रीमद्के सूत्रार्थ

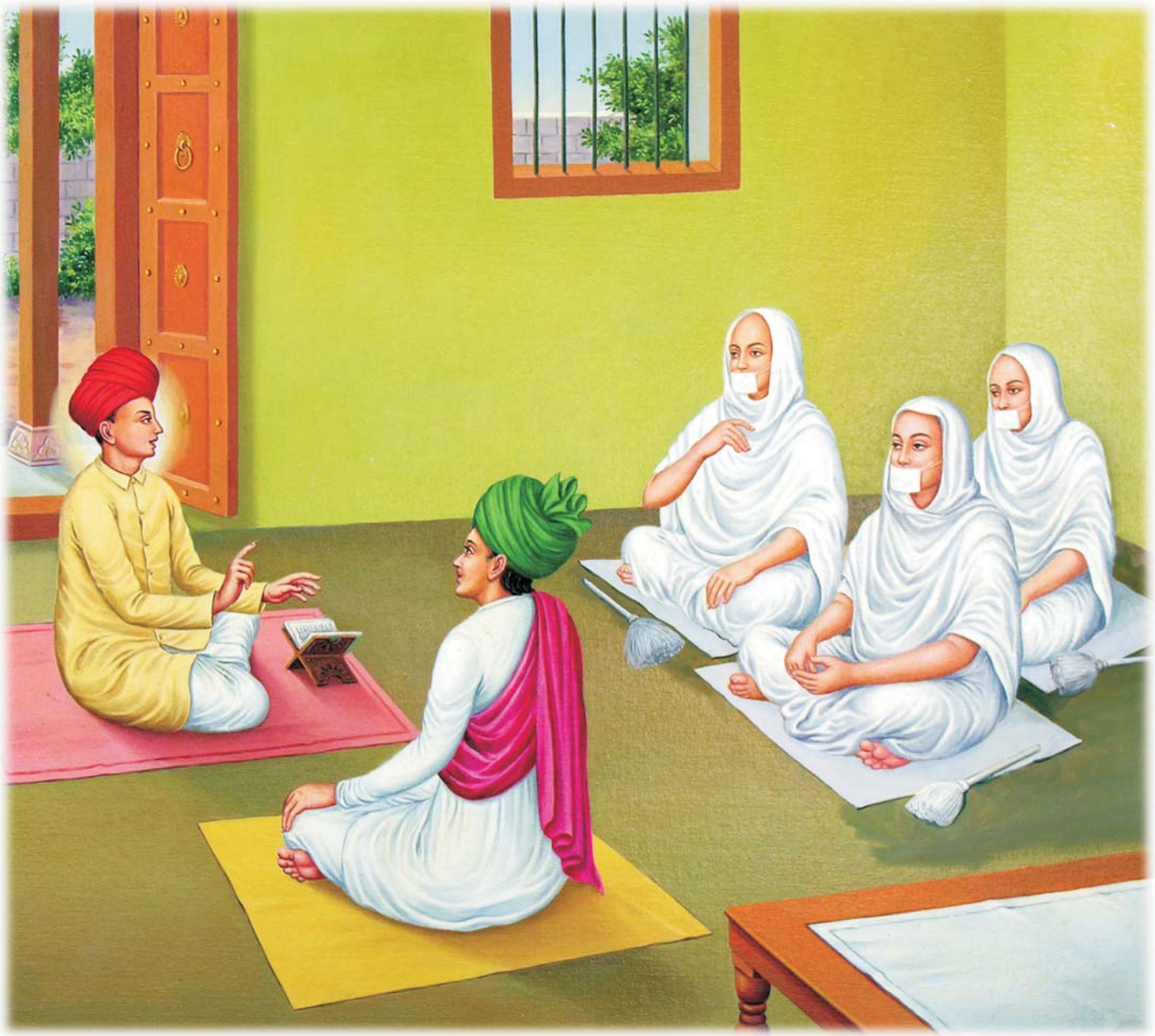

ववाणियामें तीन साध्वीजी आए थे । उन्होंने श्रीमद् बड़े विद्वान है ऐसी प्रशंसा सुनकर श्री पोपटभाई मनजीको कहा कि हमें उनके द्वारा 'सूयगडांगसूत्र' सुननेकी अभिलाषा है । श्रीमद्ने यह बात मान्य रखी और पोपटभाईसे कहा कि दोपहरको दो बजे जायेंगे । लेकिन तुम प्रतिदिन उपस्थित रहना ।

श्रीमद् पहेली बार उपाश्रयमें पधारे तब साध्वीजी पाट उपर बैठे हुए थे । श्रीमद्जी और पोपटभाई मनजी नीचे बैठ गये । 'सूयगडांगसूत्र'की दो गाथाओंका सविस्तार स्पष्ट वर्णन सुनकर साध्वीजी आश्चर्यचकित हो गए और पाट परसे उतरकर नीचे बैठ गये । फिर श्रीमद्के प्रति कहने लगे कि आपकी हमारेसे आशातना हुई है । अहो ! ऐसा वर्णन तो आज दिन तक हमने कोई साधु महाराजके पास भी नहीं सुना ।

इस प्रकार मोक्षमालाके शिक्षापाठभी श्रीमद्ने साध्वीजीको उपाश्रयमें एकबार समझाया था ।

"सूत्र, आत्माका स्वधर्म प्राप्त करनेके लिये बनाये गये हैं ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७८४)

वर्ष १६ **श्रीमद् राजचंद्र** वि.सं. १९४०

अष्टावधान देखकर मनजीभाईका आश्चर्य

श्री पोपटभाई मनजी कहते है :

सं. १९४० में मेरे पिताश्री मनजीभाई मोरबी गये थे। वहाँ पर श्रीमद्ने वसंत बागमें प्रथमबार मित्रमंडल समक्ष नयेनये विषयोंको लेकर आठ अवधान कर दिखाए। एक साथमें सब काम करना उसको अवधान कहा जाता है। दूसरे ही दिन बहोत लोगोंके आग्रहसे दो हजार लोगोंके बीच पवित्र उपाश्रयमें बारह अवधान कर दिखाये।

इस चमत्कृतिको देखकर मेरे पिताजी आश्चर्यचकित हो गए और ववाणिया आकर रातमें ही श्रीमद्के पिताके पास जा पहुँचे। मकान बंध था। फिर भी दरवाजा खुलवाया और हर्षमें आकर उनसे कहने लगे कि तुम्हारा पुत्र तो कोई दैवी पुरुष निकला। मोरबीमें आठ काम एक साथ करके धूम मचा दी वगैरह बाते करने लगे।

"अचिंत्य तुज माहात्म्यनो, नथी प्रफुल्लित भाव।
अंश न एके स्नेहनो, न मळे परम प्रभाव ॥" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २९८)

वर्ष १९ **श्रीमद् राजचंद्र** वि.सं. १९४३

बोटादमें बावन अवधान प्रयोग

"श्रीमद्‌जीने बोटादमें अपने एक लक्षाधिपति मित्र सेठ हरिलाल शिवलालके समक्ष बावन अवधान किये थे ।" -जीवनकला (पृ.८४)

"१. तीन व्यक्तियोंके साथ चौपड़ खेलते जाना–..... १
२. तीन व्यक्तियोंके साथ ताश खेलते जाना–..... १
३. एक व्यक्तिके साथ शतरंज खेलते जाना–..... १
४. झालरके बजते टकोरे गिनते जाना–..... १
५. जोड़, बाकी, गुणाकार एवं भागाकार मनमें गिनते जाना–..... ४
६. मालाके मनके पर ध्यान रखकर गिनती करना– १
७. आठेक नयी समस्याओंकी पूर्ति करना–..... ८
८. विवादको द्वारा निर्दिष्ट सोलह नये विषयोंपर निर्दिष्ट छंदोमें रचना करते जाना–..... १६
९. ग्रीक, अंग्रेजी, संस्कृत, अरबी, लेटिन, उर्दू, गुजराती, मराठी, बंगाली, मारवाड़ी, जाडेजी आदि सोलह भाषाओंके अनुक्रमविहीन चारसौ शब्द कर्त्ताकर्मसहित पुनः अनुक्रमबद्ध कह सुनाना, बीचमें दूसरे काम भी करते जाना–..... १६
१०. विद्यार्थीको समझाना–..... १
११. कतिपय अलंकारोका विचार–..... २
५२

इस प्रकार उपरोक्त किये गये बावन अवधानोंके सम्बन्धमें लिखनेकी यहाँ पर पूर्णाहुति होती है ।

ये बावन काम एक समयमें एक साथ मनःशक्तिमें धारण करने पड़ते है । अज्ञात भाषाके विकृत अक्षर सुकृत करने पड़ते है । संक्षेपमें आपसे कह देता हूँ कि यह सब याद ही रह जाता है ।" -जीवनकला (पृ.९७)

"इन सोलह भाषाओंके चारसौ अक्षर दिये गये थे। इन भाषाओंके अक्षरोंका विलोम रूप अर्थात् दिये गये अक्षरोंके क्रमका दृष्टान्त निम्नलिखित है–"-जीवनकला (पृ.९१)

संस्कृतका विलोम स्वरूप

स्ति	क्तो	ष्णा	स्व	स्व	र्ग	स्ति	क्तः	तृ	क्ष	व
हि	वि	यो	वि	वा	को	ष	नु	र	रो	को
घो	या	को	मु	ष	गी	कः	रा	वा	वि	प
म	कि	यः	दं	द्धो	ये	वि	न	हः	र	दे

उपरके अक्षरोको श्रीमद्जीने अपनी आत्मशक्तिसे काव्यके रूपमे निम्नलिखित बनाया।

"बद्धो हि को यो विषयानुरागी,
को वा विमुक्तो विषये विरक्तः।
को वास्ति घोरो नरकः स्वदेहः
तृष्णाक्षयः स्वर्गपदं किमस्ति ॥" -जीवनकला (पृ.९१)

गुजराती भाषाके वाक्यका विलोम स्वरूप

त	त्नो	ष्टि	ना	आ	जु	आ	सृ	था
शो	जे	प	द	ए	य	जो	थी	छे
र	सु	ने	भि	ई	नं	ह	वां	छे

उपरके अक्षरोसे श्रीमद्जीने इस प्रकारसे वाक्य बनाया:

"आपके जैसे रत्नोसे अभी तक सृष्टि सुशोभित है, इसको देखकर आनंद होता है।" -जीवनकला (पृ.९२)

ऐसे ही बाकीके अलग अलग चौदह भाषाओके क्रमविहिन अक्षरोको भी बराबर करके वाक्य रूपसे बनाकर बताया था।

इस प्रकार बावन कामोंका प्रारम्भ एक साथ करना। एक कामका कुछ भाग करके दूसरे कामका कुछ भाग करना, फिर तीसरे कामका कुछ भाग करना, फिर चौथे कामका कुछ भाग करना, फिर पाँचवें कामका–इस प्रकार बावन कामका थोड़ा-थोड़ा भाग करना। उसके बाद फिर पहले कामकी तरफ आना और उसका थोड़ा भाग करना, दूसरेका करना, तीसरेका करना–इस प्रकार सभी काम पूर्ण होने तक करते जाना।

एक जगह ऊँचे आसन पर बैठकर इन सब कामोंमें मन और दृष्टिको प्रेरित करना, लिखना नहीं या दुबारा पूछना नहीं और सभी स्मरणमें रखकर इन बावन कामोंको पूर्ण करना। -जीवनकला (पृ.८९)

मुंबईमें जिस सभागृहमें श्रीमद्जीने एकसो अवधान करके दिखाये थे वह फरामजी कावसजी इन्स्टीट्युट यह है।

मुंबईमें शतावधान

सं.१९४३ में उन्नीस वर्षकी उम्रमें श्रीमद्की मुंबईमें स्थिति थी । उस वक्त भी अनेक अवधानके प्रयोग करके दिखाये थे ।

मुंबईमें अपनी शतावधान (सो अवधान) करनेकी शक्ति फरामजी कावसजी इन्स्टीट्युटमें डॉ. पीटरसनके अध्यक्षपदमें हजारो प्रेक्षकोके समक्ष उन्होंने बताई थी । उसकी भूरी भूरी प्रशंसा 'मुंबई समाचार, 'टाइम्स ऑफ इन्डिया', 'जामे जमशेद', 'इन्डियन स्पेक्टेटर वगैरह वर्तमान पत्रोमें करनेमें आई. सर-चार्ल्सने यूरोप जाकर अपनी इस आत्मशक्तिओको बतानेकी श्रीमद्को सूचना दी । लेकिन ज्ञान बेचकर कीर्ति या कांचन इकट्ठा करनेकी लालच श्रीमद्में किंचित् भी नहीं थी । बीस सालकी उम्रके बाद अवधान भी आत्मोन्नतिमें बाधक लगनेसे उसका भी श्रीमद्ने त्याग कर दिया ।

श्रीमद्‌के अवधानकी समाचारपत्रोमें प्रशंसा

'मुंबई समाचार', 'टाइम्स ऑफ इन्डिया', 'जामे जमशेद', वगैरहमें श्रीमद् राजचंद्रकी अद्‌भुत शक्तिओके बारेमें लेख संवत् १९०१में आते थे । वे पुराने पेपरोके असल नमूने नीचे दिये गये है । उनका अवलोकन करते हुए घरके सदस्य—

મુંબઈ સમાચાર, શુક્રવાર, તારીખ ૨૪મી મે, ૧૯૦૧

શ્રીમાન રાજ્યચંદ્ર રવજીભાઈએ સત્તર વરસની વયે જામનગરમાં કરેલા બાર અવધાનો માટે તે વખતે પ્રગટ થતાં એક પત્રે કરેલું વીવેચન.

— मोगलीक नोंध. —

લખવાને અતીશય આનંદ ઉપજે છે કે વવાણીઆ બંદર નીવાશી દવાદશાવધાની શીઘ્ર કવી રાજ્યચંદ્રજી રવજીભાઈ મહેતાને હમણા ખાનગી કામ પ્રસંગને લીધે જામનગર જવાનું થયું હતું. ત્યાં તેઓના અદભુત અને અગાધ અવધાનના ચમતકારો દરશાવવા માટે જામનગરના પ્રખયાત વઈદરાજ મણીશંકર વીઠલજી રસેશા ધરમાચારય અને બીજા વીદવાનો તરફથી સીઘ્ર કવીશ્વરને આમંત્રણ થયું હતું. તે આમંત્રણ કવીશ્વરે સ્વીકારી નીમેલ વખતે તે ચમતકારો દરશાવવા માટે કબુલ કરયું. તારીખ ૧૬ મીને રોજ ત્યાંના પ્રખયાત વીદવાનો, કવીઓ, શાસ્ત્રીઓ, વઈદો, અને મુસદીઓ, અમલદારો અને પ્રખયાત શેઠ સાહુકારો મળી આશરે ૧૫૦ ગ્રહસ્થોની સમક્ષ તે અવધાનના ચમતકારો દરશાવી પોતાની ઇશ્વરદત દીવય સ્વભાવીકશક્તીથી સઘળી સભા રંજન કરી દીધી હતી. આપણા આ શીઘ્ર કવીશ્વરની અદભુત શક્તીથી સરવે સભાસદોનાં મનના આનંદનો કશો પાર રહયો ન હોતો. ચમતકારો દરશાવી રહયા બાદ તુરતજ પ્રખયાત વઈદરાજ મણીશંકરભાઈએ ઉઠીને શીઘ્ર કવીશ્વરની અદભુતશક્તીને માટે પ્રંસંશા કે આ અદભુત ચમતકારીક વીનોદથી હું અતયાનંદ પામયો છું. પુનરજનમ નહી માનનાર પુરૂષોને આ સીઘ્ર કવીશ્વરની અદભુતશક્તી પુનરજનમ છે. એમ મનાવવાને માટે પ્રયતક્ષ અને સબળ પુરાવો છે, વીગેરે વીગેર વઈદરાજે પ્રશંસા કરયા પછી વઈદરાજ સંભુભાઈ બાબુકીશોરી મોહન, શ્રી નારાયણ હેમચંદ, માસ્તર દામોદરદાસ, માસ્તર બલવંતરામ, માસ્તર શંકરલાલ અને કવી ફુલભદાસે એક પછી એક જણે ઉઠીને આપણા શીઘ્ર કવીશ્વરની અદભુતશક્તીને માટે અતીશય પ્રસંશા કરી ઉપકાર માનયો; અને કવીએ નરમતાપુરવક તેનો યોગય પ્રતયુતર આપયો, તયાર પછી સરવ સભા બરખાસ્ત થઈ. શીઘ્ર કવીરાજશ્રીને મહારાજા જામ સાહેબ બહાદુર તરફથી (૪૫૫) ચારસે પંચાવન ઇનામ દાખલ મળયા હતા.

જામે જમશેદ. મંગળવાર તા૦ ૧૬ મી એપરેલ ૧૯૦૧

સતાવધાની રાજ્યચંદ રવજીભાઈ

રાજકોટ, તા૦ ૧૩ મી એપ્રેલ.

અશટાવધાન એટલે એકી વખતે આઠ ક્રીયાઓ સાથે કરવી. તે અદભુત ને ચમતકારીક શક્તીવાળા પુરૂષો આંગળીને તેરવે ગણીએ તેટલા પણ થતા નથી. એ વાત જગ પ્રસીધ છે.

જે મકાનને વીષે શાસ્ત્રીજીએ અશટાવધાન કરયા હતા, તેજ મકાનમાં બીજેજ દીવસે શ્રીમંત રાજયચંદ બાર અવધાનો ૨૦૦૦ માણસો સમક્ષ કરી દેખાડયા. થોડા દીવસ પછી મુંબઇવાળા શેઠ લખમીદાસ ખીમજી મોરબી આવેલા, તેઓની સમક્ષ પાછાં ૧૨ અવધાનો કરી બતાવયાં. થોડા વખત પછી તેઓનું જામનગર જવું થયું. તયાં આગળ વીદવાનમંડળ આગળ ૧૬ અવધાનો કરી બતાવયા. આ વખતે નામદાર જામ સાહેબ તરફથી એક પરસ ભેટ થઈ. થોડા માસ પછી વઢવાણમાં કરનલ નટ સાહેબે રાજા રજવાડાઓને આમંત્રણ કરી બે હજાર દરશકોની એક ગંજાવર સભા કુળશવરની આ અદભુત શકતી બતાવવા માટે ભરી, કળશવરે ૧૬ અવધાનો ફતેહમંદ રીતે કરી બતાવયા. તયાંથી કળશવર પોતાના એક મીત્રને મળવા માટે બોટાદ ગયા. તયાં ૧૬ થી છલંગ મારી એકદમ પર અવધાનો કરી બતાવયા. ૧૭મે વરસે તેઓએ મુંબઈમાં પહેલ વહેલો પગ મુકયો. ફરામજી ઇનસટીટયુટમાં ૧૦૦ અવધાનો કરી બતાવયા. તયાં આગળ તેઓને સાક્ષાત સરસવતીનું ઉપનામ મળયું અને સોનાનો ચાંદ મળયો... તમામ ઇંગ્રેજી અને દેશી પત્રો તેઓની શક્તી માટે દરરોજ કતારો ને કતારો સતુતી લખવા લાગયા.

सुवर्णचन्द्रक भेट

श्रीमद्ने मुंबईमें अनेक स्थलो पर किए हुए आश्चर्यकारक स्मरणशक्तिके अवधानोसे प्रभावित होकर प्रजाजनोने उनके सन्मान हेतु एक सुवर्णचन्द्रक भेट किया; और 'साक्षात् सरस्वती' की पदवी भी दी गई ।

दूसरे सद्गृहस्थोने भी आनंदविभोर होकर श्रीमद्को अनेक प्रकारकी भेट प्रदान की ।

"अवधानोंके लिये इस मनुष्यको 'सरस्वतीका अवतार' ऐसा उपनाम मिला हुआ है । अवधान आत्मशक्तिका कार्य है, यह मुझे स्वानुभवसे प्रतीत हुआ है ।"

–श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१३७)

परमेश्वर गृह

मुंबईमें शतावधान प्रयोगके समय सभागृहमें अनेक अग्रगण्य विद्वान, पंडित और श्रीमान थे। उसमें अच्छे ज्योतिष भी थे। उन ज्योतिषीओको इस छोटी उम्रवाले प्रबल प्रतिभासंपन्न श्रीमद्के प्रति आकर्षण हुआ। श्रीमद्को भी ज्योतिष जाननेकी जिज्ञासा जागृत हुई। उसे पूरी करनेकी सामग्री भी उनके द्वारा प्राप्त हो गई।

पूरे भारतमें ज्योतिषकी नष्ट विद्याको जाननेवाला काशीमें केवल एक ही व्यक्ति था। वह दैवज्ञ हजारो रूपिया कमाता और लोग उसे पूजते भी थे। उस नष्ट विद्याको भी श्रीमद्ने सीख लिया। इस विद्याको प्राप्त करनेके लिये अत्यंत स्मरणशक्ति और चित्तकी प्रबल एकाग्रताकी आवश्यकता है, वो श्रीमद्को सहजमें ही प्राप्त थी।

एकबार दश विद्वान ज्योतिषीओने मिलकर श्रीमद्के ग्रह देखे। उसके बारेमें श्रीमद् उनके बहनोई रा. चत्रभुज बेचरको लिखते है–

"दस विद्वानोंने मिलकर मेरे ग्रहोंको परमेश्वरग्रह ठहराया है। वैराग्यमें झूमता हूँ।" आशुप्रज्ञ राजचंद्र

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१६७)

"मनुष्य परमेश्वर होता है ऐसा ज्ञानी कहते हैं।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१५९)

इसको कौन भोगेगा ?

श्रीमद् शतावधान करनेसे अनेक बड़े गिने जानेवाले लोगोके परिचयमें आये । ताता जमशेदजी नामके पारसी गृहस्थने विलायतसे मंगाया हुआ फर्नीचर वगैरह अनेक वस्तुओंसे सजाया हुआ अपना बंगला श्रीमद्को बताया । श्रीमद् बंगला देखकर बोल उठे कि 'इसको कौन भोगेगा ?' यह शब्द ताताके हृदयमें घर कर गये । इसके फलस्वरूप अपनी संपत्तिसे बहोत लोगोका परोपकार किया ।

श्रीमद्‌की अद्‌भुत स्पर्शशक्ति

श्रीमद्‌के परिचयमें आये हुए पंडित लालन कहते है–

"अब श्रीमद्‌जीके स्पर्शेन्द्रियका विकास देखें । एक अवधान प्रयोग मुंबईमें उन्होंने आर्यसमाजमें जस्टीस तैलंगनाके अध्यक्षपदमें किया था । श्रीमद्‌जीकी आँखो पर पट्टी बाँध दी गई । फिर एक के बाद एक पुस्तक उनको हाथमें देनेमें आई और उसका नाम कह दिया गया ।

श्रीमद्‌जीने उन पुस्तको पर बराबर अपना हाथ घुमाकर फिर रख दिया । इस प्रकारसे करीबन पचास पुस्तकें उनके हाथमें दी गई थी ।

उपर बताया हुआ प्रकार करनेके बाद कोई भी पुस्तक मांगने पर श्रीमद् पुस्तको पर अपना हाथ घुमा करके उस पुस्तकको बता देते थे । अथवा और कोई पुस्तकका अनुक्रम नंबर कहने पर भी उस पुस्तकका नाम बताकर उसे ढूँढ निकालते थे ।

इस प्रकारसे हम जिसे आँखोसे देखते है उसे श्रीमद् अपनी स्पर्शशक्तिसे भी देख सकते थे ।

आत्मोन्नतिमें बाधक जानकर ज्योतिष देखनेका त्याग

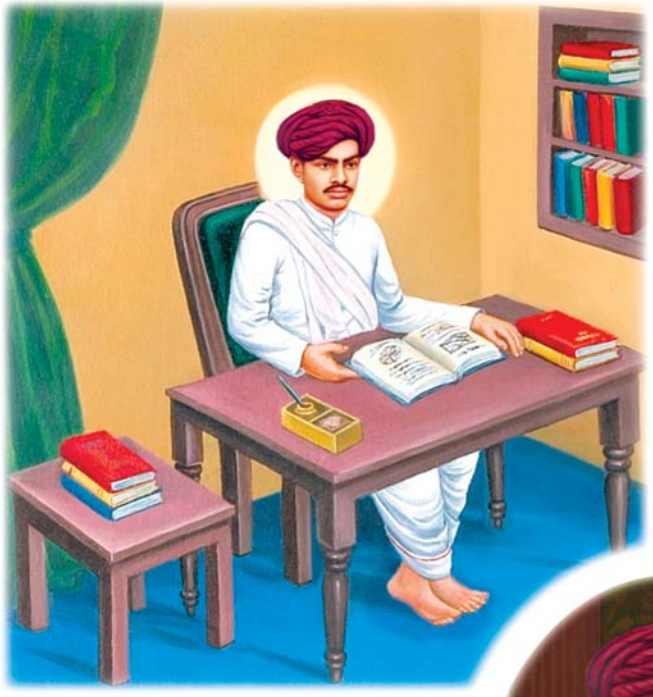

अल्प समयमें श्रीमद्ने ज्योतिष ग्रंथोका अवलोकन कर लिया। पूर्वधारी श्री भद्रबाहु-स्वामीकृत ज्योतिषका अपूर्व संस्कृत ग्रंथ 'भद्रबाहु संहिता'को भी पढ़ लिया।

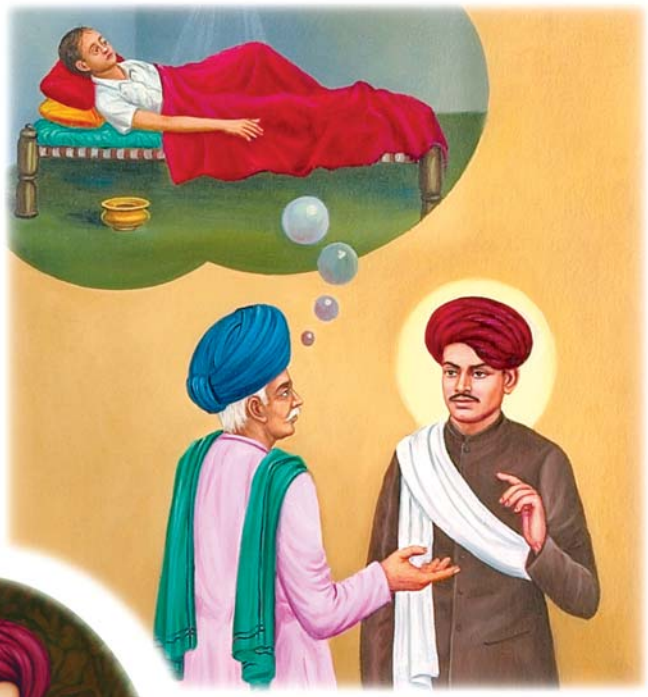

श्रीमद्के ज्योतिषज्ञानकी प्रशंसासे स्नेही आप्तजन और दूसरोने भी लाभ उठाया। एकबार बिमारीमें पडे हुए बालकके बारेमें पूछने पर श्रीमद् विचारमें पड गये।

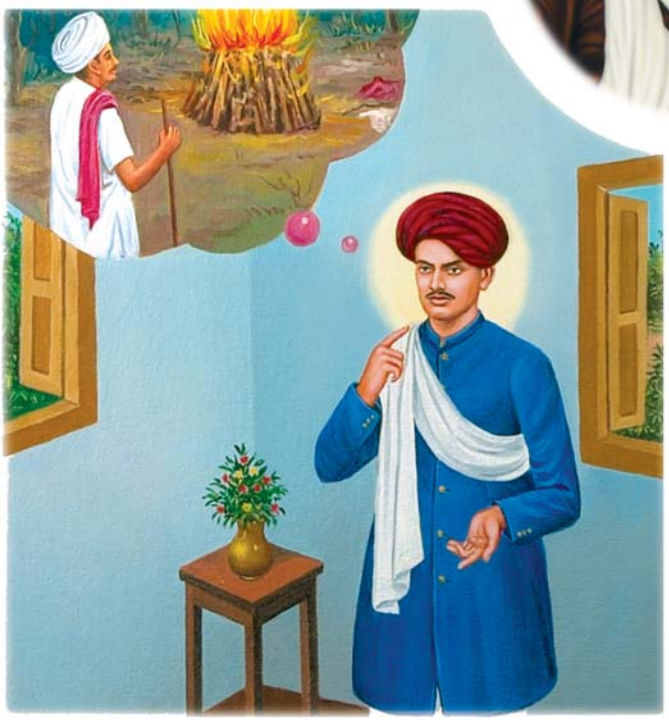

ज्योतिषज्ञानसे जाना कि यह बालक बिमारीसे बचेगा नहीं, उसकी मृत्यु होगी। इसके बारेमें पूछने पर श्रीमद्ने जवाब दिया कि क्या ऐसे अनिष्ट दुःखद समाचार हमें कहने पडेंगे ?

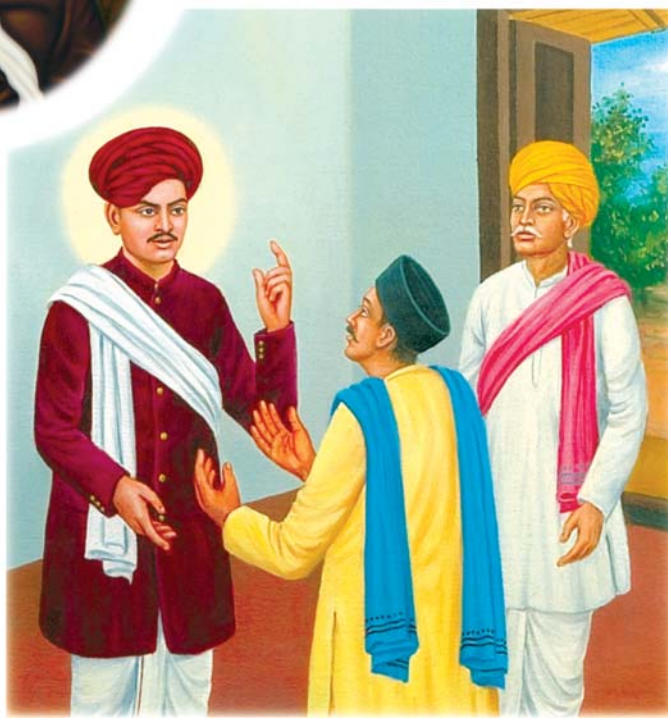

आजसे ज्योतिष देखनेका मैं बंध करता हूँ। लोगोने कहा—किसलिये बंध करते हो ? श्रीमद्ने कहा परमार्थमें विघ्नभूत एवं कल्पित जानकर हम इसका त्याग करते है।

पूर्वोपार्जित कर्मके कारण पाणिग्रहण

"जौहरी रेवाशंकरभाई जगजीवनदास मेहताके बड़े भाई पोपटलालभाईकी महाभाग्यशाली पुत्री झबकबाईके साथ श्रीमद्का शुभ विवाह सं० १९४४ माघ सुदी १२ के दिन हुआ था।" -जीवनकला (पृ.१२०)

"ज्ञानीकी प्रवृत्ति मात्र पूर्वोपार्जित कारणसे होती है, और दूसरोंकी प्रवृत्तिमें भावी संसारका हेतु है; इसलिये ज्ञानीका प्रारब्ध भिन्न होता है। इस प्रारब्धका ऐसा निर्धार नहीं है कि वह निवृत्तरूपसे ही उदयमें आये। जैसे श्री कृष्णादिक ज्ञानीपुरुष, जिन्हें प्रवृत्तिरूप प्रारब्ध होनेपर भी ज्ञानदशा थी, जैसे गृहस्थावस्थामें श्री तीर्थंकर। इस प्रारब्धका निवृत्त होना केवल भोगनेसे ही संभव है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३९९)

"स्त्रीके संबंधमें किसी भी प्रकारसे रागद्वेष रखनेकी मेरी अंश मात्र इच्छा नहीं है, परंतु पूर्वोपार्जनके कारण इच्छाके प्रवर्तनमें अटका हूँ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१९८)

"किसी भी प्रकारके अपने आत्मिक बंधनको लेकर हम संसारमें नहीं रह रहे हैं। जो स्त्री है उससे पूर्वमें बंधे हुए भोगकर्मको निवृत्त करना है। कुटुम्ब है उसके पूर्वमें लिये हुए ऋणको देकर निवृत्त होनेके लिये रह रहे है। रेवाशंकर है उसका हमारेसे जो कुछ लेना है उसे देनेके लिये रह रहे है। उसके सिवायके जो जो प्रसंग है वे उसके अन्दर समा जाते हैं। तनके लिये, धनके लिये, भोगके लिये, सुखके लिये, स्वार्थके लिये अथवा किसी प्रकारके आत्मिक बंधनसे हम संसारमें नहीं रह रहे हैं। ऐसा जो अंतरंगका भेद उसे, जिस जीवको मोक्ष निकटवर्ती न हो, वह जीव कैसे समझ सकता है?" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३६२)

मेघवृष्टि, युगप्रधान होनेका सूचन

श्री चत्रभुज बेचर कहते है–

"मोरबीसे श्रीमद्‌की बारात श्री ववाणिया गाँवमें लौटते हुए रास्तेमें मेघवृष्टि हुई । थोडेसे छाँटे पड़े । वह होनेके बाद जिस बैल गाड़ीमें काकुभाई वगैरह बैठे हुए थे उसमेंसे उतरकर, मैं श्रीमद् जिस रथमें बिराजमान थे वहाँ पासमें जाकर बाते करते हुए दस मिनिट उनके साथ चला था । उस वक्त श्रीमद्‌ने एक बात ऐसी कही कि बीते हुए युगमें ऐसे प्रसंग पर युगप्रधानी पुरुषो पर वृष्टियां होती थी । जिससे मुझे यह भी श्रीमद्‌के युगप्रधान होनेका सूचन है ऐसा लगा था । उन्होंने कही हुई यह बात मुझे निश्चितरूपसे याद है ।

"जीवको सत्पुरुषकी पहचान नहीं होती, और उनके प्रति अपने समान व्यावहारिक कल्पना रहती है, यह जीवकी कल्पना किस उपायसे दूर हो ?" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३२५)

"जो जीव सत्पुरुषके गुणका विचार न करे, और अपनी कल्पनाके आश्रयसे वर्तन करे, वह जीव सहजमात्रमें भववृद्धि उत्पन्न करता है, क्योंकि अमर होनके लिये जहर पीता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ८१८)

"इस युगप्रधान पुरुष श्रीमद् राजचंद्रने इस जन्मके तेतीस वर्षमें बहुत कार्य किये । लेकिन पूर्वजन्मकी साधना भी बहुत थी । सात वर्षकी उम्रमें इनको जातिस्मरणज्ञान हुआ था । जिससे पूर्व जन्मकी आराधना याद आ गई । इस जन्ममें छ दर्शनोका विचार करके सबसे श्रेष्ठ धर्म कौनसा है उसका निर्णय करके बताया ।" (बो.१ पृ.१९५)

व्यापारमें मुख्य नियंता श्रीमद् राजचंद्र

"श्री रेवाशंकर जगजीवन श्रीमद्के चाचा श्वसुर हुए वहाँसे वे श्रीमद्के साथ निकट परिचयमें आए। एकाद वर्षके बाद श्रीमद्ने उनको व्यापारमें उत्कृष्ट लाभ है, ऐसा ज्योतिषसे जानकर मुंबई जानेकी प्रेरणा दी। साथमें जवेरातके धंधेकी भी बात कही। उसके अनुसार श्री रेवाशंकरभाई वकालत छोडकर सं.१९४५ के अषाढ़ मासमें मुंबई आए।"

"श्री रेवाशंकर जगजीवनकी पेढ़ीका प्रारंभ सं. १९४५ के पर्युषणके बाद हुआ। उसमें श्री माणेकलाल झवेरी प्रेरणारूप थे, और अंत तक श्रीमद्के साथ भागीदारीमें टीके रहे। एक दो वर्षमें तो विलायत, अरबस्तान, रंगून वगैरहकी बड़ी बड़ी पेढ़ीओके साथ व्यापार जम गया।" (अ.पृ.७०)

"सं.१९४८ से सूरतवाले झवेरी नगीनचंद्र, कपूरचन्द्र और अहमदाबादवाले झवेरी छोटालाल लल्लुभाई भी शामिल हुए। सबमें नियंताके तौर पर श्रीमद् बहुत उपयोगी थे।"

"बहुत बहुत ज्ञानी पुरुष हो गये है, उनमें हमारे जैसे उपाधिप्रसंग और उदासीन, अतिउदासीन चित्तस्थितिवाले प्रायः अपेक्षाकृत थोड़े हुए है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३२६)

"वैश्यवेषसे और निर्ग्रंथभावसे रहते हुए कोटि-कोटि विचार हुआ करते हैं।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.८१८)

जैनकी प्रमाणिकता कैसी होनी चाहिये ?

श्री मोतीलाल गिरधरलाल कापडिया कहते है–

"मुंबईमें एकबार शामको घूमने गये थे । वहाँ पर धर्मचर्चा होनेके बाद, त्रिभुवनभाई भाणजीने श्रीमद्से प्रश्न किया कि "एक जैनकी प्रमाणिकता कैसी होनी चाहिये ?

उसके जवाबमें श्रीमद्ने हाईकोर्टका बुर्ज दिखाकर कहा कि जो दूर हाईकोर्ट दिखाई दे रही है, उसके अंदर बैठनेवाले न्यायाधीशकी प्रमाणिकता जैसी होती है उससे एक जैनकी प्रमाणिकता कम तो होनी ही नहीं चाहिए; अर्थात् उसकी प्रमाणिकता इतनी विशाल होनी चाहिए कि उसके बारेमें किसीके दिलमें शंका भी न हो ।

इतना ही नहीं लेकिन वह अन्यायी है ऐसा कोई कहे तो भी सुननेवाला इस बातको सत्य ही न माने, ऐसी जैनकी प्रमाणिकता सर्वत्र जाननेमें होनी चाहिए ।"

"जो मुमुक्षुजीव गृहस्थ व्यवहारमें प्रवृत्त हो, उसे तो अखंड नीतिका मूल प्रथम आत्मामें स्थापित करना चाहिये; नहीं तो उपदेशादिकी निष्फलता होती है । द्रव्यादि उत्पन्न करने आदिमें सांगोपांग न्यायसम्पन्न रहना, इसका नाम नीति है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४०४-५)

हमारे निमित्तसे किसीको दुःख न हो

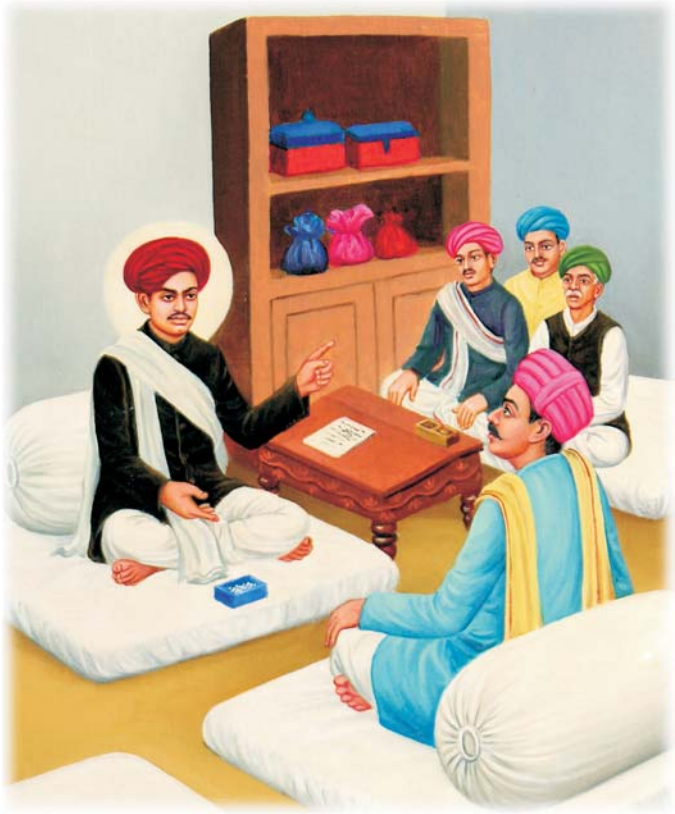

श्री सुखलालभाई जयमल कहते है–

एकबार एक भाई श्रीमद्के पास मोती बेचनेके लिये आये । मोती सच्चे थे लेकिन बड़े छोटे सब शामिल थे । इसलिये श्रीमद्ने कहा बड़े छोटे अलग अलग करके लाओ तो ज्यादा अच्छा दाम मिलेगा । रंगून भेजेंगे तो उससे भी ज्यादा अच्छा दाम मिलेगा ।

वे भाई मोती छोटे बड़े अलग करके बेचनेके लिये आए । तब श्रीमद्ने कहा : यह मोती तो तुमारे यहाँ गीरो रखे हुए है । गीरो रखनेवाला छूडानेके लिए आयेगा तब क्या करोगे ?

गीरोकी बात सुनकर वह भाई आश्चर्यचकित हुए और कहने लगे कि तीन चार वर्षसे गीरो है, अब तो क्या छुडायेगा; ऐसा सोचकर बेचनेके लिये आया हूँ । श्रीमद्ने मोती लेकर उसकी किंमत जो थी वह देदी ।

शामको वनमालीने श्रीमद्से कहा : भाई, वो मोती दे दो तो रंगून पार्सल कर रहे है उसमें भेज दे । तब श्रीमद्ने कहा : 'आज नहीं ।'

दूसरे दिन ही वह भाई हाँफता हुआ वापिस आया और कहने लगा–बापजी मोती गीरो रखनेवाला छूडानेके लिये आया है, मैंने तो आपको बेच दिया है तो अब मुझे क्या करना चाहिये ? मेरे पर दया करके वह मुझे वापिस दीजिये ।

श्रीमद्ने कहा : मैंने तुमको कल ही कहा था । तुमने हमको वे बेच दिये है; उसमेंसे हमको अच्छा नफा मिलनेवाला है; फिरभी अब तुम लेने आए हो तो खुशीसे ले जाओ । हमें किसीके दुःखका निमित्त बनना नहीं है । ऐसा कहकर वनमालीको मोती वापिस देकर उसकी दी हुई किंमत वापस लेनेको कह दिया और दयाभावसे, जो भी नफा मिलनेवाला था उसको छोड दिया ।

"परहितको ही निजहित समझना ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१६)

दूसरोके दुःखके प्रति करुणाभाव

मुंबईमें एक आरबको अपने बड़े भाईके समान मोतीका बड़ा व्यापार करनेकी इच्छा हुई । उसने दलालके साथ विश्वासपात्र झवेरी श्रीमद्के पास आकर अपना माल दिखाया । श्रीमद्ने भाव कसकर माल खरीदा और पैसे दे दिये । उसे लेकर आरब अपने घर पर आ गया ।

घरपर आकरके अपने बड़े भाईसे यह बात कही । उसने जिनका यह माल था उसका खत बताकर कहा कि इतनी किंमतके बिना यह माल बेचना नहीं है ऐसा उसने निश्चितरूपसे कहा है और तुमने यह क्या कर दिया । वह तो अब गभराने लगा ।

तुरंत ही वह श्रीमद्के पास आकर दीनभावसे करगरता हुआ बोला कि मैं तो ऐसी आफतमें आ गिरा हूँ । तब श्रीमद्ने कहा : यह तुमारा माल रहा; ऐसा कहकर वापिस सौंप दिया और दिये हुए पैसे गिन लिये । बहुत नफा होनेवाला था लेकिन जाने दिया । तबसे वह आरब श्रीमद्को खुदाके समान मानने लगा ।

"परदुःखको अपना दुःख समझना ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१६)

दूसरोंको दुःख देनेसे, सुख नहीं मिल सकता

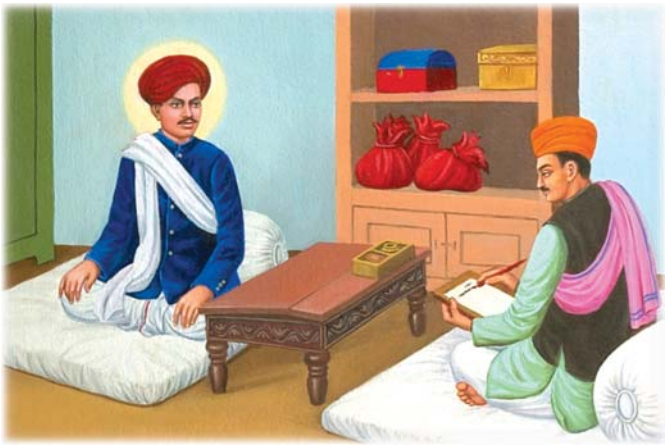

एकबार एक वेपारीके साथ श्रीमद्ने हीरा जवेरातका सौदा किया । उसमें ऐसा लिखा गया कि निश्चित समय पर निश्चित किये हुए भावसे यह वेपारी श्रीमद्को इतने हीरे देगा । इस प्रकारका खतपत्र भी लिखकर वेपारीने श्रीमद्को दे दिया ।

परंतु वह समय आने पर हीरेकी किंमत बहुत बढ़ गई । अब वेपारी खतपत्रके अनुसार श्रीमद्को हीरे दे तो उसको बड़ा नुकसान होता है । उसकी सारी संपत्ति बेचनी पडे । पर अब हो क्या सकता है ? श्रीमद्को जब हीरेके बाजारभावकी जानकारी मिली, तब तुरंत ही वे उस वेपारीकी दुकान पर जा पहुँचे ।

श्रीमद्को अपनी दुकान पर आये हुए देखकर वह वेपारी बेचारा गभराने लगा, और करगरता हुआ बोल उठा : रायचंदभाई, अपने बीचमें हुए हीरके सौदेके बारेमें मैं खूब चिंतामें गिर गया हूँ । मेरा जो होना होगा वह हो, लेकिन आप विश्वास रखना कि मैं बाजारभावसे आपको सौदा चुकते करुँगा । आप चिंता मत करे ।

यह सुनकर श्रीमद् करुणाभरी आवाज़में बोल उठे : वाह ! भाई, मैं चिंता किसलिये नहीं करुं ? तुमको सौदेकी चिंता होती हो तो मुझे भी क्यों नहीं होनी चाहिये ?

लेकिन अपने दोनोके चिंताका मूल कारण तो यह खतपत्र ही है न ? उसको ही नष्ट कर दें तो अपने दोनों की चिंता ही मिट जाय । ऐसा कहकर श्रीमद्ने बना हुआ दस्तावेज ही फाड़ डाला ।

फिर श्रीमद्ने कहा : 'भाई, इस खतपत्रके कारण तुमारे पाससे साठ सित्तेर हजार रुपये लेने निकलते है, इतनी बड़ी रकम मैं तुमारे पाससे लूं तो तुमारी क्या हालत होगी ? रायचंद दूध पी सकता है, खून नहीं ।' वह वेपारी तो आभारवश होकर श्रीमद्को फिरश्ताके समान देखता ही रह गया ।

"जिसमें किसी प्राणीका दुःख, अहित या असंतोष रहा है वहाँ दया नहीं है;
और जहाँ दया नहीं है वहाँ धर्म नहीं है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६६)

कर्मके फलस्वरूप नाटकको देखो

श्री मणिलाल सोभागभाई कहते है–

एकबार मैंने परमकृपालुदेवको कहा कि आज मुझे नाटक देखनेके लिये जाना है। तब परमकृपालुदेवने मुझे खिडकीके पास लेजाकर कहा कि कर्मके फलस्वरूप यह असली नाटकको देखो। यह घोड़ेगाड़ीमें लोग बैठे हुए है, गरीब लोग मांगकर खाते है, और बीमार गरीबोको बताकर कहा कि जीव जैसे जैसे कर्म करता है उसका वैसा वैसा फल भोगना पड़ता है। यह सब कर्मका नाटक है। कोई जानवर वगैरह बीमार, दुःखी अनेक व्याधिसे पीडित मार खाते हुए, और असह्य वेदनाको भोगते हुए दिखाई देते है। मनुष्यभी उपरसे सुखी दिखाई दे, इज्ज़तदार हो लेकिन उसको भी देणदारीका दुःख, लडकी लडकेकी शादी करनेका दुःख, आजीविका चलानेका दुःख, कुटुंबादिक उपाधिका दुःख अथवा स्त्रीपुत्रका दुःख होता है, यह जो दुःख पीड़ा मनमें भोगनी पडती है वह कोई कम दुःख नहीं है; यह सब कर्मोका नाटक है।

"यह संसार बहुत दुःखसे भरा हुआ है। ज्ञानी इसमेंसे तैरकर पार होनेका प्रयत्न करते हैं। मोक्षको साधकर वे अनंत सुखमें विराजमान होते हैं।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६२)

"मैं तुम्हें बहुतसी सामान्य विचित्रताएँ बताये देता हूँ; इनपर विचार करोगे तो तुम्हें परभवकी श्रद्धा दृढ़ होगी।

एक जीव सुन्दर पलंगपर पुष्पशय्यामें शयन करता है, और एकको फटी-पुरानी गुदड़ी भी नसीब नहीं होती। एक भाँति-भाँतिके भोजनोंसे तृप्त रहता है और एक दाने-दानेके लिये तरसता है। एक अगणित लक्ष्मीका उपभोग करता है और एक फूटी कौड़ीके लिये घर-घर भटकता है। एक मधुर वचनोंसे मनुष्यका मन हरता है और एक मूक-सा होकर रहता है। एक सुन्दर वस्त्रालंकारोसे विभूषित होकर फिरता है और एकको कड़े जाड़ेमें भी चीथड़ा भी ओढ़नेको नहीं मिलता। एकको दीनदुनियाका लेश भान नहीं है और एकके दुःखका अन्त भी नहीं है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६१-६२)

अहिंसा परमोधर्म

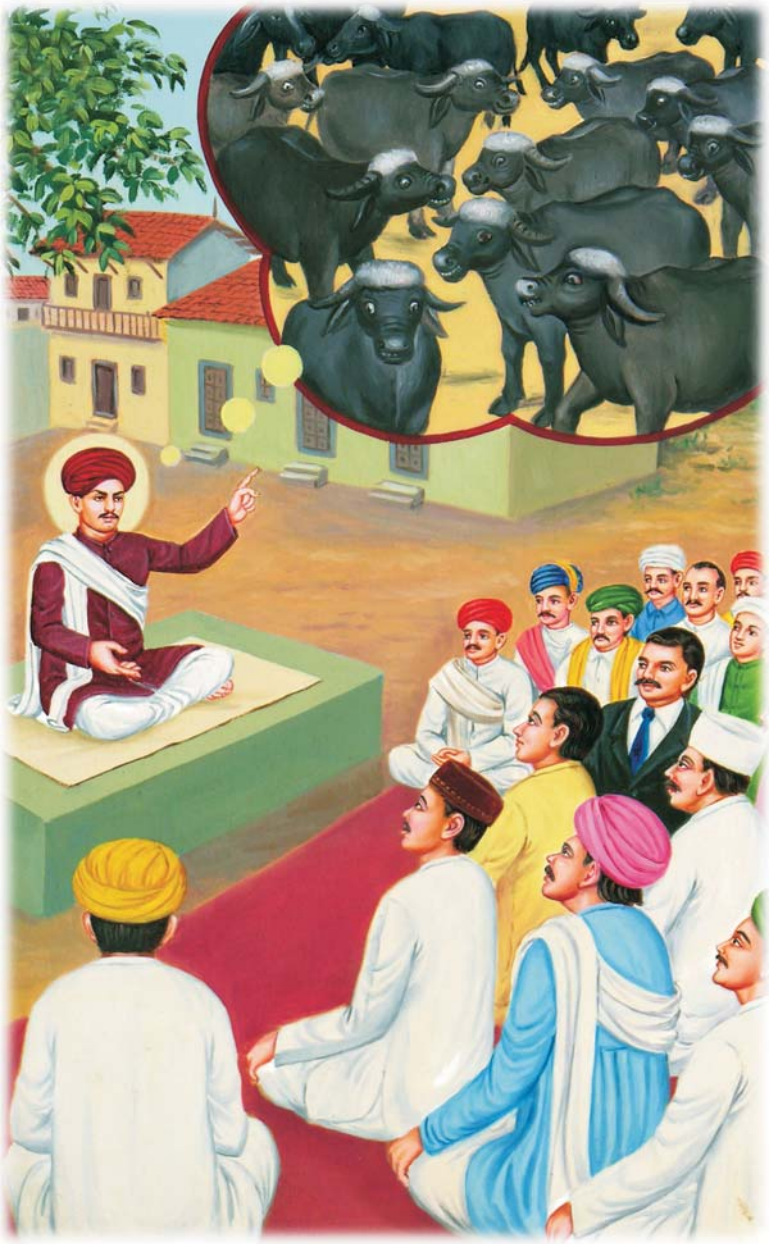

श्री पोपटलाल गुलाबचंद कहते है–

मैं बम्बईमें परमकृपालुदेव के समागममें था उस वक्त वहाँ पर ऐसे समाचार मिले कि आसो सुद १०के दशहरेके दिन धरमपुरमें एकसो आठ पाडेका वध होता है । उसके बचावके लिये परमकृपालुदेवने मुख्य व्यक्तिओसे बातचीत कर निश्चित किया कि धरमपुरमें लोगोंको इकठ्ठा करना और वहाँ माणेकलाल घेलाभाईको भेजना । इसके बारेमें मुंबईके शास्त्रीओके पाससे वेदके आधार भी निकलवाते थे । उसके अर्थ में अनर्थ होता देखकर परमकृपालुदेव उसका समाधान भी करते थे ।

इसके बारेमें भाषण करनेका काम जारी रखा था और कितने लोग पैसोके लोभी थे उनको पैसे भी देते थे ।

परमकृपालुदेव उनके बचावके लिये रातदिन परिश्रम उठाते थे । उसका अंतिम फल यह हुआ कि पाडे मारनेका काम बंध हो गया ।

"दया जैसा एक भी धर्म नहीं है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.८०)

"दयाका स्थापन जैसा (जैनधर्ममें) किया गया है वैसा दूसरे किसीमें नहीं है । 'मार' इस शब्दको ही मार डालनेकी दृढ़ छाप तीर्थंकरोने आत्मामें मारी है । श्री जिनेन्द्रकी छातीमें जीवहिंसाके परमाणु ही नहीं होंगे ऐसा अहिंसाधर्म श्री जिनेन्द्रका है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७१५)

"वारंवार यह ध्यानमें रखना चाहिये कि सब जीवोंकी रक्षा करनी है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.८१)

तुम आत्मा हो काशी नहीं

एकबार श्रीमद्ने अपनी पुत्री काशीबहन जो तीन सालकी थी उसे पूछा : तुम कौन हो ? काशीबहनने कहा : मैं काशी हूँ । श्रीमद्ने कहा : "नहीं, तुम आत्मा हो ।"

इतनेमें वहाँ श्री त्रिभुवनभाई आ पहोंचे । उनको श्रीमद्ने कहा : इसको अभी तक तीन साल भी पूरे नहीं हो पाए है, इसका नाम काशी रखा है; उसके संस्कार थोड़े समयके होते हुए भी इसको कहते है कि तुम आत्मा हो तो कहती है नहीं मैं तो काशी हूँ ऐसी जीवकी बाल अज्ञानदशा है ।

"देहमें अहंभाव माना हुआ है, इसलिये जीवकी भूल दूर नहीं होती । जीव देहके साथ मिल जानेसे ऐसा मानता है कि 'मैं वणिक हूँ, 'ब्राह्मण हूँ'; परंतु शुद्ध विचारसे तो उसे ऐसा अनुभव होता है कि 'मैं शुद्ध स्वरूपमय हूँ ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७१२)

"आत्माका सत्यस्वरूप केवल शुद्ध सच्चिदानंदमय है, फिर भी भ्रांतिसे भिन्न भासित होता है, जैसा कि तिरछी आँख करनेसे चंद्र दो दिखाई देते हैं ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१५७)

"सब शास्त्रोंके बोधका, क्रियाका, ज्ञानका, योगका और भक्तिका प्रयोजन स्वस्वरूपप्राप्तिके लिये है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१९५)

"जीवका स्वरूप क्या है ? जीवका स्वरूप जब तक जाननेमें न आये तब तक अनंत जन्म-मरण करने पड़ते है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७१२)

"जीव जहाँ जहाँ ममत्व करता है वहाँ वहाँ उसकी भूल है । उसे दूर करनेके लिये शास्त्र कहे हैं ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७१२)

" जहाँ जहाँ 'ये मेरे भाई' 'बंधु' इत्यादि भावना है वहाँ वहाँ कर्मबंधका हेतु है । " -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७१२)

श्रीमद्‌की तीव्र घ्राणशक्ति

श्री
छोटालाल
रेवाशंकर अजारिया कहते है–

श्रीमद्‌की नाककी शक्ति भी अद्‌भुत थी । वे रसोईमें नमक कम हो, ज्यादा हो या बिल्कुल नहीं हो वह मात्र देखनेसे ही कह सकते थे ।

श्री रेवाशंकरभाईके वहाँ एक दिन भोजनका प्रसंग था । हम सब बैठे थे । वहाँसे मैं खड़ा होकर रसोइयेके पास जा पहोंचा और रसोइयेको कहा कि रेवाशंकरभाईने खास कहलवाया है कि : दालमें हमेशाकी तरह नमक डालना और चनेके आटेका शाक नमकके बिना बनाना, और हरिसब्जीके शाकमें नमक ज्यादा डालना । रसोइया भद्रिक था इसलिये उसने ऐसा कर दिया ।

हम सब खाना खाने बैठे । थालीयोंमें भी सब वस्तुएँ रख दी गई । उस वस्तुओंके सामने थोडी बार देखकर, मेरे सामने दृष्टिपात करते हुए श्रीमद्‌ने कहा : "परीक्षा लेनेके लिये तैयार हुए हो या रसोइया भूल गया है ? एक शाक चनेके आटेका बिना निमकका है और हरीसब्जीका शाक ज्यादा निमकवाला है ।" रेवाशंकरभाईने चखा तो वैसा ही लगा । जिससे रसोइयेको डाँटने लगे । तब मैंने सत्य हकीकत बताकर सबको आनन्दित किया ।

सत्पुरुषके वचनके प्रति अखंड विश्वास

श्री जवलबहन भगवानदास मोदी कहते है–

एकबार परमकृपालुदेव उनके बहनोई श्री टोकरशी महेताको और उनके पुत्र श्री छगनभाईको इड़रके पहाड़ पर साथमें ले गए थे । वहाँ पर एक पत्थर पर दोनोंको बिठाकर कहा कि मैं सामने गुफामें जा रहा हूँ । एक घण्टेके बाद आऊँगा । तुम यहाँ पर बैठे रहना । इधर सामनेके रास्तेसे एक चिता पानी पीनेके लिए आएगा, लेकीन तुम घबराना मत । ऐसा कहकर अपने हाथसे लक्ष्मणरेखा उन दोनोंके चारो ओर फिराकर चले गए ।

थोड़े समयके बाद चितेको आता हुआ देखा । लेकिन परमगुरुके प्रतापसे भय रखे बिना बैठे रहे । चिता शांतिसे पानी पीकर चला गया ।

"सम्यक्प्रकारसे ज्ञानीमें अखंड विश्वास रखनेका फल निश्चय ही मुक्ति है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३२०)

"परमकृपालुदेव पर श्रद्धा करें । श्रद्धा ही आत्मा है । इतना मनुष्यभव प्राप्त कर एक सत्पुरुषको ढूँढकर उसकी सच्ची श्रद्धा हो जायेगी तो काम बन जायेगा ।" (उ.पृ.३४२)

"जिन जीवोंको परमकृपालुदेवकी श्रद्धा हुई है, उनके प्रति हमें पूज्यभाव होता है, क्योंकि वे सत्यसे चिपके है, जिससे उनका कल्याण होनेवाला है ।" (उ.पृ.३५०)

मुंबईमें श्रीमद्के बहनोई टोकरशीभाई गांठ और सन्निपातके दर्दसे बकवास करते और उठकर इधर-उधर भागते थे, जिससे चार आदमी उनको पकडकर रखते थे ।

श्रीमद् जब उनको मिलने आये तब सबको कहा कि दूर बैठिए तब उन्होंने कहा कि इधर-उधर भागेंगे, श्रीमद्ने कहा : नहीं भागेंगे ।

श्रीमद् जब उनके पास बैठे कि पाँच मिनिटमें ही टोकरशीभाई सावधान होकर श्रीमद्से

विनयपूर्वक पूछने लगे कि आप कब पधारे ? श्रीमद्ने कहा : अभी हाल । तुमको कैसा है ? जवाबमें टोकरशीभाईने कहा ठीक है, लेकिन गांठकी पीड़ा है । आधा घण्टा टोकरशीभाई शांत बैठे रहे । बाद श्रीमद् विक्टोरीया गाड़ीमें बैठकर अपनी दुकान पर चले गए ।

श्रीमद् चले गये कि पाँच मिनिटके बाद वापिस टोकरशीभाई सन्निपात वश हो गए । शामको सात बजे फिरसे श्रीमद् पधारे । फिरसे हम सभी दूर हठकर भींतके पास खड़े रहे । श्रीमद्ने टोकरशीभाईके पास बैठकर कुछ आँखके, हाथके और होठके इशारे किए । फिरसे पाँच मिनिटमें टोकरशीभाई शुद्धिमें आ गए और श्रीमद्को बुलाया । तब श्रीमद्ने पूछा :

लेश्या बदली जा सकती है

कैसा है अब ? टोकरशीभाईने कहा : ठीक है । अब गांठ की पीड़ा नहीं है । फिर उन्होंने संस्कृत-की एक गाथाका उच्चारण किया। तब श्रीमद्ने कहा कि यह गाथा कहाँपर सुनी थी ? टोकरशीभाईने कहा : ईड़रके जंगलमें आपके साथमें था तब । श्रीमद्ने कहा : यह गाथा बहुत अच्छी है, लिखकर रखने योग्य है । थोड़े समय बाद श्रीमद्ने टोकरशीभाईसे पूछा अब कैसा है ? टोकरशीभाईने कहा : आनन्द आनन्द है । ऐसी स्थितिका अनुभव मैंने कोई भी दिन नहीं किया । इतनेमें श्रीमद्ने एकबार हाथका ईशारा भाई टोकरशीभाईके मुँहकी ओर किया

और शीघ्र दूर जा बैठे; और दूसरोको कहा कि टोकरशी मेहताका देह छूट गया है, लेकिन तुम सब करीबन पौने घण्टे तक उनके पास मत जाना ।

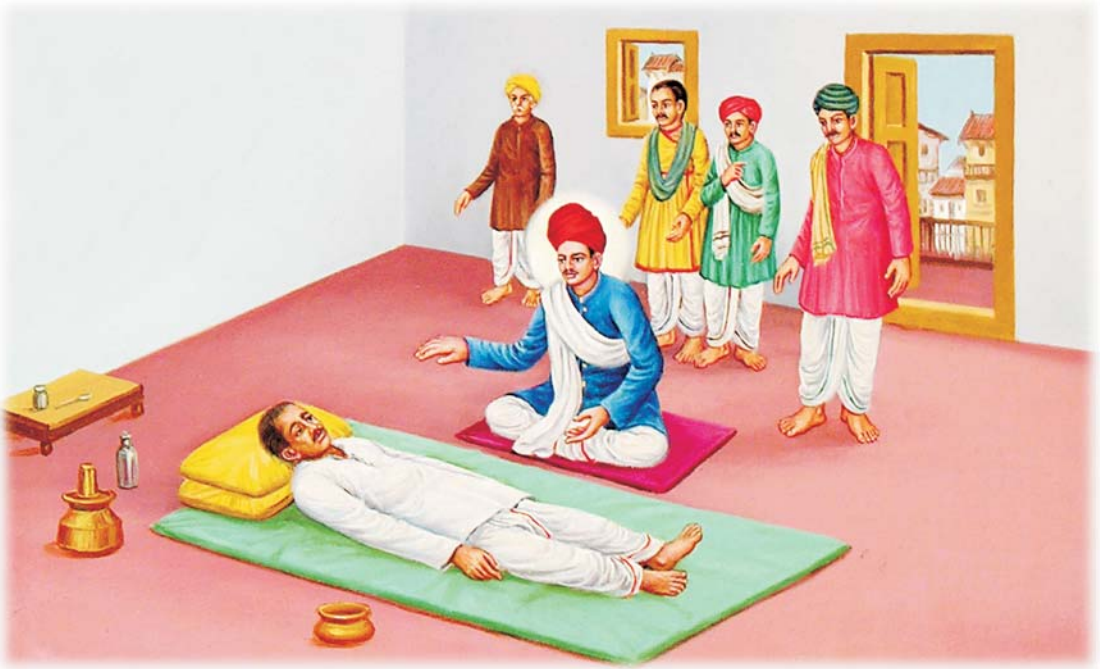

श्रीमद्ने स्वशक्तिबलसे उनकी लेश्या बदल दी । मृत्युके समय जिनकी जैसी लेश्या हो वैसी उनकी गति होती है ।

"चैतन्यमें चमत्कार चाहिये, उसका शुद्ध रस प्रगट होना चाहिये ।
ऐसी सिद्धिवाले पुरुष अशाताकी शाता कर सकते है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.८००)

जो सत्य होगा वही कहा जायेगा

एकबार ढूंढक मतके शेठ लोग श्रीमद्के पास आए । एकांतमें बातचीत कर कहा कि आप हमारे ढूंढक मतका विशेष प्रचार करें । उसके लिये आप जो कहेंगे उस मुताबिक आपको मानपान देंगे; इत्यादि अनेक प्रकारकी लालच दिखाकर बात कही । तब परमकृपालुदेवने कहा 'जो सत्य होगा वही कहा जायेगा' । हमको कोई मतभेद या किसीके प्रति राग, द्वेष नहीं है; और तुमने जो लालचकी बात कही, उनको हम तुच्छ मानते है ।

"वह (जगत) बिलकुल सोनेका हो तो भी हमारे लिये तृणवत् है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२७३)

संन्यासीका अहंकार पिघल गया

एक संन्यासी ववाणिया में आए थे । वहाँ श्रीमद्की प्रशंसा सुनकर उनको प्रश्न पूछनेकी इच्छा हुई । श्री पोपटभाई मनजी उनको श्रीमद्के पास ले आए । श्रीमद्ने यथायोग्य उनका सत्कार किया ।

उनका बर्ताव श्रीमद्के प्रति असभ्य था । उन्होंने श्रीमद्को १३ प्रश्न पूछे । श्रीमद्के द्वारा किये गए ४-५ प्रश्नों का ही समाधान सुनकर वे संन्यासी खड़े हो गये और तीन दंडवत् प्रणाम करके बैठकर कहने लगे कि आज मेरा अहंकार गलित हो गया । फिर अपने दोषोकी श्रीमद्के प्रति माफी मांगी ।

"मान और मताग्रह ये मार्गप्राप्तिमें अवरोधक स्तम्भरूप है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७७०)

विनाशकाले विपरित बुद्धि

ववाणियामें श्री भूपतसिंह लखमणजी गरासीया बापु थे। वे कृपालुदेवके पास कभी कभी आया करते थे। उनका घर कृपालुदेवके घरसे थोड़ा ही दूर था। कृपालुदेवने एकबार रास्तेमें भूपतबापुको कहा : बापु; आज सामैयामें मत जाना; और जाओ तो घोड़े पर मत चढ़ना। उन्होंने भी पहले मान्य किया लेकिन बादमें घोड़े पर सवार होकर सामैयामें गए। घोड़ेको दौड़ाने पर वह भड़क गया और बापुको नीचे गिरा दिया। थोड़ी देरमें ही उनकी मृत्यु हो गई।

"सच्चे पुरुषकी आज्ञाका आराधन करना परमार्थरूप ही है। उसमें लाभ ही होता है।
यह व्यापार लाभका ही है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७३७)

"सद्गुरुका योग मिलनेपर उनकी आज्ञाके अनुसार जो चला उसका सचमुच रागद्वेष गया।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७३२)

"अनंतकाल तक जीव अपने स्वच्छंदसे चलकर परिश्रम करे तो भी अपने आप ज्ञान प्राप्त नहीं करता;
परन्तु ज्ञानीकी आज्ञाका आराधक अन्तर्मुहूर्तमें भी केवलज्ञान प्राप्त कर लेता है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२६६)

"इस जीवने पूर्वकालमें जो जो साधन किये हैं, वे वे साधन ज्ञानीपुरुषकी आज्ञासे हुए मालूम नहीं होते, यह बात संदेहरहित प्रतीत होती है। यदि ऐसा हुआ होता तो जीवको संसारपरिभ्रमण नहीं होता।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४१९)

"ज्ञानीपुरुषकी आज्ञाका आराधन, यह सिद्धपदका सर्व श्रेष्ठ उपाय है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४१९)

अज्ञानके कारण जीवको मृत्युका भय

ववाणियामें एकबार श्रीमद्‌जी और मूलजीभाई भाटीया घूमने गये थे। स्मशानसे थोड़े दूर खड़े थे। वहाँसे स्मशानकी ओर देखने पर जलती हुई चीज चलती हुई दिखाई दी। फिर दो, चार, छ, दस, स्थान पर ऐसा प्रकाश चलता हुआ दिखाई दिया। मूलजीभाई यह देखकर भयभीत हो गए। तब परमकृपालुदेवने उस भयको दूर करनेके लिये कहा : चलो, अपन वहाँ चले। स्मशानकी ओर जाते हुए रास्तेमें एक आदमी मिला उसको पूछने पर मालुम हुआ कि एक मुसलमान गुज़र गया है और रात होनेसे कब्रस्तानकी ओर जाते हुए ये सब मशालची है।

अज्ञानके कारण जीवको भय लगता है। वैसे ही स्वरूप अज्ञानताके कारण यह जीव मृत्युसे भयभीत होता है।

"मुमुक्षुजीवको अर्थात् विचारवान जीवको इस संसारमें अज्ञानके सिवाय और कोई भय नहीं होता।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४४२)

"सर्व प्रकारसे ज्ञानीकी शरणमें बुद्धि रखकर निर्भयताका, शोकरहितताका सेवन करनेकी शिक्षा श्री तीर्थंकर जैसोंने दी है, और हम भी यही कहते हैं। किसी भी कारणसे इस संसारमें क्लेशित होना योग्य नहीं है।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३८६)

वर्ष २४ **श्रीमद् राजचंद्र** वि.सं.१९४८

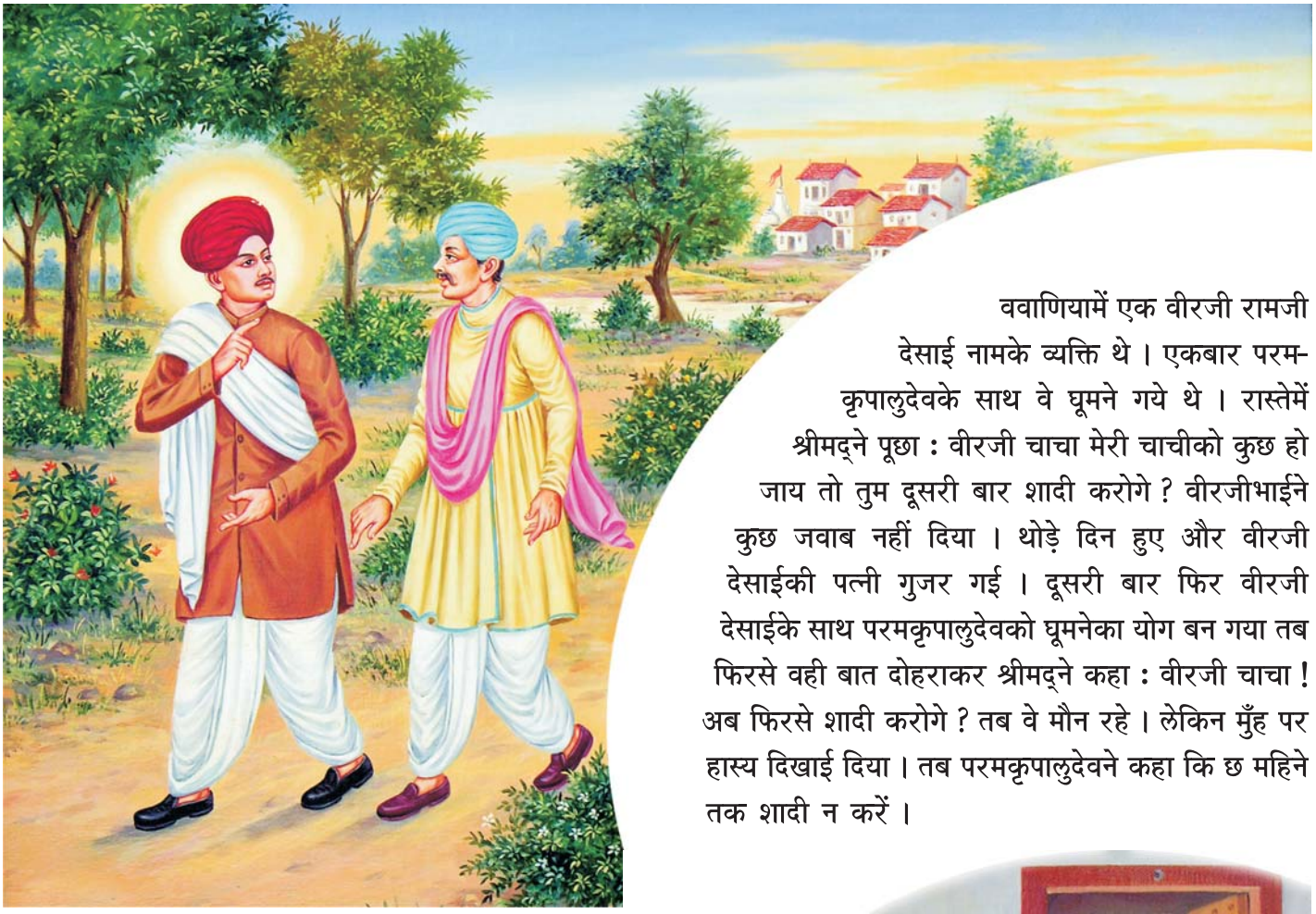

ववाणियामें एक वीरजी रामजी देसाई नामके व्यक्ति थे। एकबार परम-कृपालुदेवके साथ वे घूमने गये थे। रास्तेमें श्रीमद्ने पूछा : वीरजी चाचा मेरी चाचीको कुछ हो जाय तो तुम दूसरी बार शादी करोगे? वीरजीभाईने कुछ जवाब नहीं दिया। थोड़े दिन हुए और वीरजी देसाईकी पत्नी गुजर गई। दूसरी बार फिर वीरजी देसाईके साथ परमकृपालुदेवको घूमनेका योग बन गया तब फिरसे वही बात दोहराकर श्रीमद्ने कहा : वीरजी चाचा! अब फिरसे शादी करोगे? तब वे मौन रहे। लेकिन मुँह पर हास्य दिखाई दिया। तब परमकृपालुदेवने कहा कि छ महिने तक शादी न करें।

छ महिने हुए कि श्रावण सुद ६ की रात्रिमें उपाश्रयसे घर पर आते वक्त गटरमेंसे सर्प निकला और वीरजीभाईको काटा, जहर उतारनेकी बहुत महेनत की। उस वक्त वीरजीभाईने कहा; मेरे चोविहारका भंग मत करना; मुझे कहनेवालेने कह दिया है।

"प्रत्याख्यान आदि क्रियासे ही मनुष्यत्व मिलता है, उच्च गोत्र और आर्यदेशमें जन्म मिलता है, तो फिर ज्ञानकी प्राप्ति होती है; इसलिये ऐसी क्रिया भी ज्ञानकी साधनभूत ही समझनी चाहिये।"

–श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२२६)

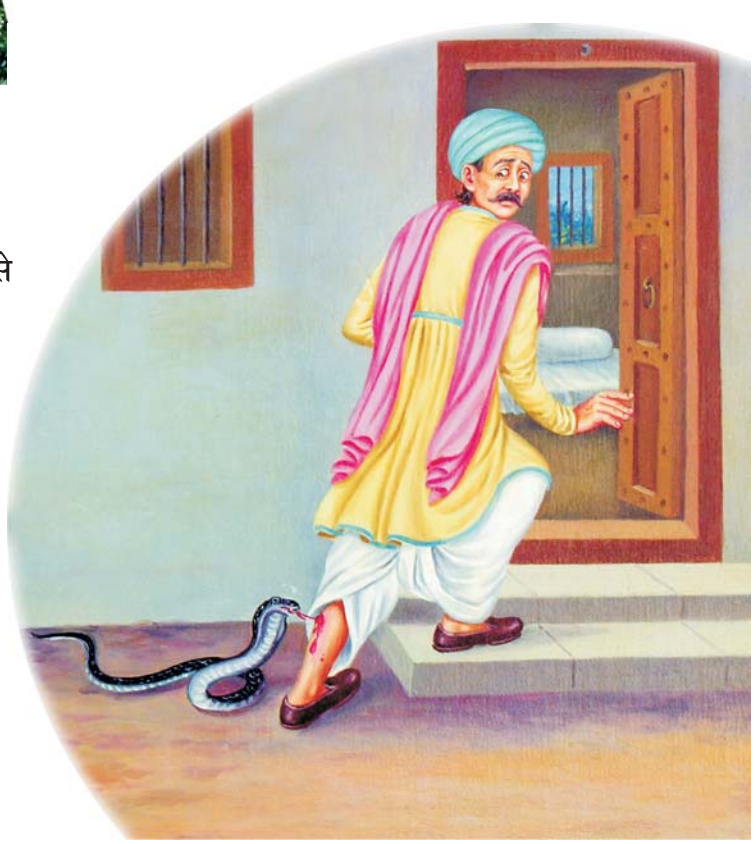

न्यायाधीश धारशीभाईकी श्रीमद्के प्रति श्रद्धाकी परीक्षा

श्री धारशीभाई कहते है–

मोरबीमें एक दिन दोपहरको, सख्त ग्रीष्म ऋतुमें, श्रीमद्के साथ धर्मकथा करता हुआ मैं दिवानखानेमें बैठा था। वहाँ पर श्रीमद्ने कहा : धारशीभाई घूमने जायेंगे ? मैंने कहा : जैसी आपकी इच्छा। पूरा दोपहरका समय होनेसे मैंने हाथमें छाता ले लिया। मोरबीकी एक सीधी लंबी बाज़ारमें जब आए तब श्रीमद्ने कहा : धारशीभाई छाता खोलो। मैंने तुरंत ही छातेको खोलकर लोकलाजकी परवा किये बिना उनके मस्तक पर धारण करके रखा। लंबी बाज़ारसे धर्मवार्ता करते हुए जब गाँवके बाहर निकले तब श्रीमद्ने कहा : धारशीभाई छाता बंध कर दो। मैंने कहा : गाँव बहार तो ज्यादा धूप लगती है, भले ही खुला रहे। तब श्रीमद्ने उपदेश दिया कि 'कषायका ताप आत्मामेंसे निकलना चाहिये। पूरा लोक त्रिविध तापसे आकुल-व्याकुल है। ज्ञानी लोग इस संसारके तापसे मुक्त हुए है। और जगतवासी जीवोंको त्रिविध तापसे मुक्त करनेके लिये दयाभावसे उपदेश देते है।

"कषायका कम होना वही कल्याण है, जीवके राग, द्वेष और अज्ञानका दूर होना कल्याण कहा जाता है।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७४६)

परमकृपालुदेवकी भक्तिसे आत्मज्ञान पाये हुए चार भक्तरत्न

श्री लघुराजस्वामी

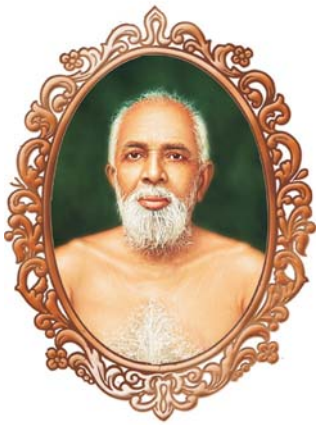

मुनि अवस्थामें परमकृपालुदेवके अनन्य उपासकके नामसे जिसने मुमुक्षु समुदायमें प्रसिद्धि पाई थी। सबको प्रभु कहकर बुलानेसे उनका उपनाम 'प्रभुश्रीजी' पड़ गया था। परमकृपालुदेव प्रबोधित वीतरागमार्गको विशेषरूपमें प्रकटमें लानेवाले यही थे। उन्होंने मात्र तीस वर्षकी उम्रमें दीक्षा ग्रहण की थी। वसो गाँवमें ४४ वर्षकी उम्रमें उनको आत्मज्ञानकी प्राप्ति श्रीमद्ने एक महिने तक वहाँ ठहर कर करवाई थी। प.पू.प्रभुश्रीजीके प्रतापसे श्रीमद् राजचंद्र आश्रम अगासकी स्थापना होनेसे हजारो भव्यात्माओको आत्मकल्याण साध्य करनेमें सुविधा प्राप्त हुई है। अगास आश्रममें ही ८२ वर्षकी उम्रमें जिन्होंने अद्भुत समाधिमरणको साध्य किया था।

श्री सोभागभाई

सायला निवासी श्री सोभागभाई परमकृपालुदेवसे ४४ वर्ष बड़े थे। श्रीमद्ने लम्बे लम्बे पत्र लिखकर उनकी अनेक शंकाओका समाधान किया था। मुंबई वगैरह स्थलोमें समागमके लिये श्रीमद्के साथ वे रहे थे। देह छूटनेसे ११ दिन पहेले वे परमकृपालुदेवको पत्रमें लिखते है कि : "यह पत्र अंतिम लिखकर कहता हूँ कि दिन आठ हुए आपकी कृपासे, अनुभवगोचरसे यह शरीर और आत्मा दो फाट जैसे अलग दिखाई देते है। गोसलियाके प्रति श्रद्धा बिल्कुल निकल गई है। आप पत्र लिखकर मुझे ऊँची दशामें ले जाइए।" श्रीमद्ने भी उनके अंत समयमें तीन पत्र जो 'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमें अंक ७७९, ७८०, ७८१ में छपे हुए है वो लिखकर भेजे थे। जिसके फलस्वरूप उत्कृष्ट पुरुषार्थ करके ७४ वर्षकी उम्रमें उन्होंने अपूर्व ऐसा समाधिमरण साध्य किया था।

श्री जूठाभाई

वे अहमदाबादके पूर्व संस्कारी धर्मात्मा और बुद्धिशाली व्यक्ति थे। श्रीमद्के प्रति अपूर्व भक्तिके कारण अल्पकालमें ही उनको 'सम्यक्त्व'की प्राप्ति हुई थी। केवल २३ वर्षकी अल्प आयुमें ही वे गुज़र गये थे। उनके देहान्त बाद उनके बारेमें पत्रांक ११७ में श्रीमद् लिखते है कि "मिथ्यावासना जिसकी बहुत क्षीण हो चुकी थी, वीतरागका जो परमरागी था, संसारके प्रति जिसे परम जुगुप्सितभाव था, भक्तिका प्राधान्य जिसके हृदयमें हमेशा प्रकाशित था...धर्मके पूर्णाह्लादमें आयुष्य अकस्मात् पूर्ण हो गया।"

श्री अंबालालभाई

वे खंभातके रहनेवाले थे। वे बहुत सेवाभावी, क्षयोपशमी, वैरागी और पुरुषार्थी थे। उनके अक्षर मोतीके दाने जैसे होनेसे उनके पास श्रीमद् पत्रोकी नकल करवाकर योग्य जीवात्माको भिजवाते थे। परमकृपालुदेवके साथ निवृत्तिस्थलोमें रहकर उनकी रसोई वगैरह भी स्वयं बनाते थे। सत्पुरुषकी सेवाके कारण उनको ऐसी लब्धि प्रकट हुई थी कि श्रीमद् जो उपदेश दे उसे आठ दिनके बाद भी अक्षरसः लिखकर वे ला सकते थे। परमकृपालुदेवके प्रतापसे जिनको सम्यक्दर्शनकी प्राप्ति हुई थी। केवल ३७ वर्षकी उम्रमें ही परमकृपालुदेवका स्मरण करते हुए खंभातमें उन्होंने अलौकिक समाधिमरणको साध्य किया था।

"अपारवत् संसारसमुद्रसे तारनेवाले सद्धर्मका निष्कारण करुणासे जिसने उपदेश किया है,
उस ज्ञानीपुरुषके उपकारको नमस्कार हो ! नमस्कार हो !" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४७२)

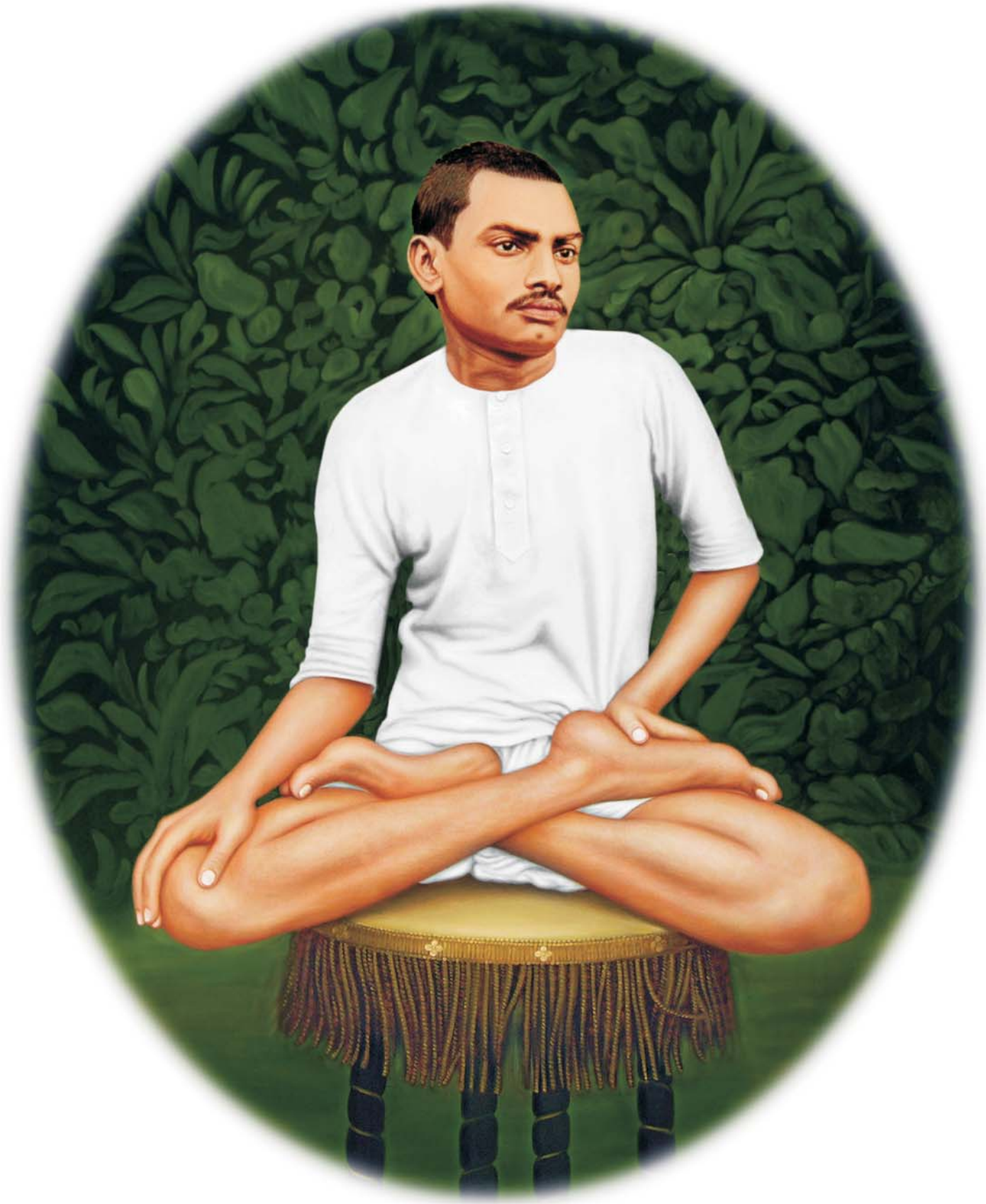

वर्ष २४ **श्रीमद् राजचंद्र** वि.सं. १९४८

श्री जूठाभाईको श्रीमद्‌की यथार्थ पहचान

संवत् १९४४में श्रीमद् मोक्षमाला छपवानेके लिये अहमदाबाद पधारे थे। तब शेठ श्री पानाचंदभाईके वहाँ पर ऊतरे थे। वहाँ शेठ श्री जेसंगभाई और भाई श्री जूठाभाई वगैरहका आना होता था। श्रीमद् उनके मनकी बातोको जानकर प्रकट कहते थे।

शेठ श्री दलपतभाईकी खुल्ली जमीनमें श्रीमद्‌ने अवधान भी कर दिखाये। वह देखकर और प्रतिदिनके परिचयसे श्रीमद्‌के सम्यग्दर्शनादि अंतरंग आत्मगुणोकी यथार्थ पहचान श्री जूठाभाईको हुई।

श्री जूठाभाई

शेठ श्री जेसंगभाईको व्यापारके कारण बहारगाम जाना होता था। उससे श्री जूठाभाईको श्रीमद्‌की देखभाल रखने लिये उन्होंने सूचना दी थी। जिससे परिचय बढ़नेसे और पूर्व संस्कारसे श्रीमद्‌के प्रति श्री जूठाभाईका पूज्यभाव बढ़ता गया और यह सच्चे ज्ञानीपुरुष है ऐसा उनको मालूम पड़ा।

"जीव कुसंगसे और असद्‌गुरुसे अनादिकालसे भटका है; इसलिये सत्पुरुषकी पहचान करे। सत्पुरुष कैसे हैं? सत्पुरुष तो वो है कि जिनका देहममत्व चला गया है, जिन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ है। ऐसे ज्ञानीपुरुषकी आज्ञासे आचरण करे तो अपने दोष घटते हैं, और कषाय आदि मंद पड़ते है तथा परिणाममें सम्यक्त्व प्राप्त होता है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पु.७४०)

पन्ने फिराने मात्रसे रहस्यकी जानकारी

एकबार शेठ श्री दलपतभाईका पुस्तक भंडार देखनेके लिए श्रीमद्, श्री जूठाभाईके साथ पधारे । वहाँ पर पुस्तकोके पन्ने मात्र फिराकर उसका रहस्य समझ लेते थे ।

उसके बाद श्री जूठाभाईका धर्म निमित्तसे श्रीमद्के साथ पत्र व्यवहार बढा । उस समयमें श्री जूठाभाईकी शरीर प्रकृति कमजोर रहती थी। लेकिन श्रीमद्के वचनोसे उनकी वैराग्यवृत्ति बहोत बढ चुकी थी ।

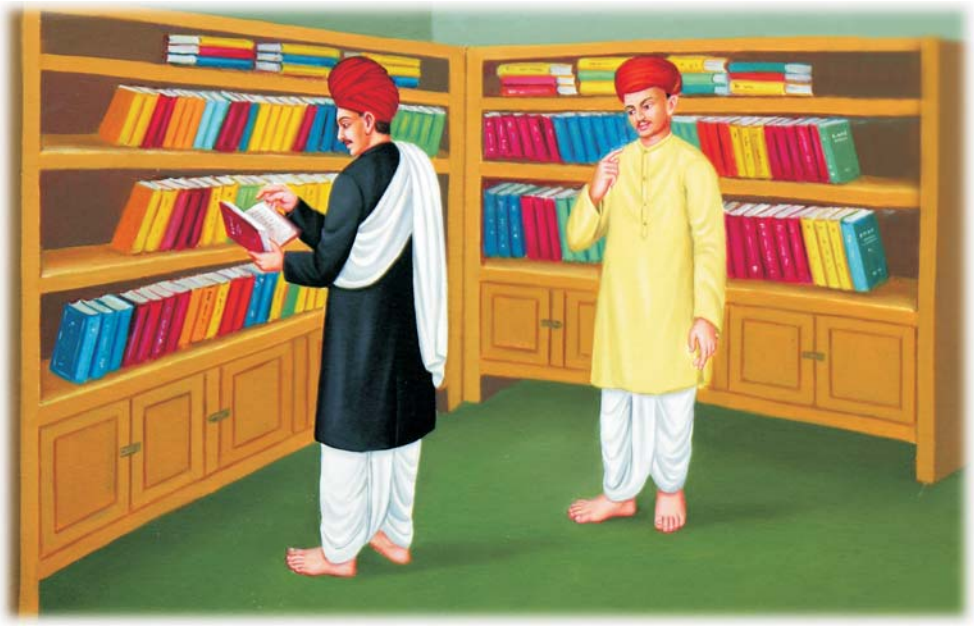

"एक श्लोक पढ़ते हुए हमें हजारों शास्त्रोंका भान होकर उसमें उपयोग घूम आता है "।

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६५८)

कौन प्रतिबंध करे ?

एकबार खंभातसे श्री अंबालालभाई, श्री छोटाभाई वगैरह लग्नके निमित्त अहमदाबाद आये थे । समान उम्र होनेसे शादीके वरघोड़ेमें आनेके लिये श्री जूठाभाईको कहा। तब उन्होंने उत्तर दिया—कौन प्रतिबंध करे ? यह सुनकर उनकी वैराग्यदशाको देखकर श्री अंबालालभाईने विशेष पूछा । तब श्री जूठाभाईने श्रीमद्के गुणग्राम किये और उनके आए हुए पत्रोको पढ़ाया । जिससे श्री अंबालालभाई वगैरहको भी धर्मका रंग लग गया ।

"सर्व प्रतिबंधसे मुक्त हुए बिना सर्व दुःखसे मुक्त होना संभव नहीं है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४८२)

श्री सोभागभाईको श्रीमद्‌का प्रथम मिलन

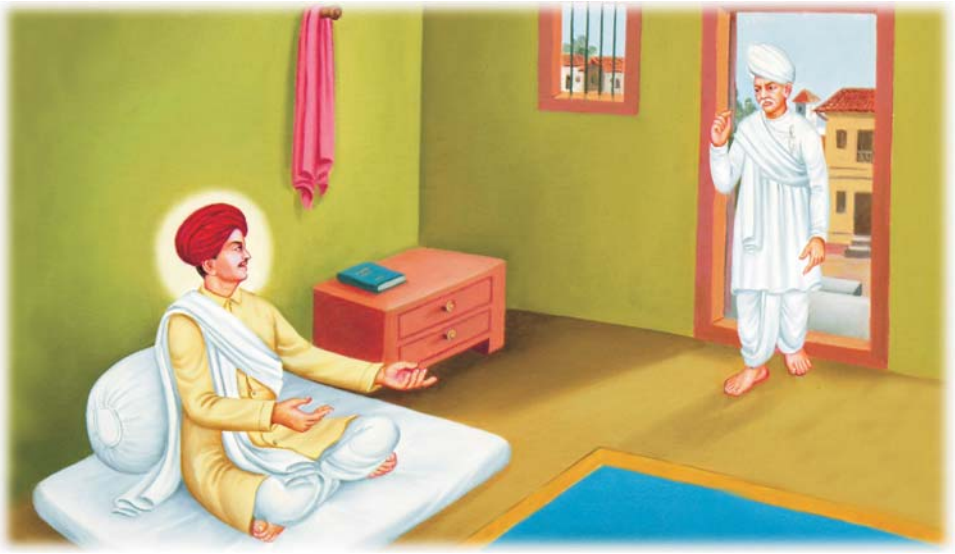

सायला गाँवके निवासी श्री लल्लुभाईको एक जैन साधुने बीजज्ञान दिया। उन्होंने वह अपने पुत्र श्री सोभागभाईको दिया और कहा कि कोई योग्य व्यक्ति हो उसे भी बताना। श्रीमद् राजचंद्रकी, शतावधानी, विद्वान, तत्त्वके जानकार और कविके रूपमें प्रशंसा सुनकर उनको यह बीजज्ञान देनेके लिये सोभागभाई मोरबी आये।

सोभागभाईने जैसे ही दुकानमें प्रवेश किया कि श्रीमद्‌ने कहा : 'आइये सोभागभाई' सोभागभाईको बड़ा आश्चर्य हुआ कि मुझे ये पहचानते ही नहीं फिरभी नाम देकर मुझे कैसे पुकारा ?

अब श्री सोभागभाई कुछ पूछे उससे पहले ही श्रीमद्‌ने कहा : इस पेटीमें एक कागजका टूकड़ा है उसको निकालकर पढ़ें। उसे पढ़नेसे जिस 'बीजज्ञान' को वे देने आये थे वही उसमें लिखा हुआ था। यह देखकर आश्चर्य पाकर सोचा कि यह कोई अलौकिक ज्ञान प्राप्त महापुरुष है। फिरभी श्रीमद्‌के ज्ञानकी विशेष परीक्षा करनेके लिये उन्होंने पूछा : सायलेमें अमारे घरका दरवाज़ा कौनसी दिशामें है ? श्रीमद्‌ने अंतरज्ञानसे जानकर कहा : 'उत्तर दिशामें' यह सुनकर सोभागभाईको श्रीमद्‌के प्रति पूज्यबुद्धि उत्पन्न हुई।

आपके सिवाय दूसरी स्मृति न हो

श्री सोभागभाईको श्रीमद्‌की ज्ञानशक्तिके प्रति भक्तिभाव उत्पन्न हुआ और तीन नमस्कार किये। उस वक्त श्रीमद् कोई अपूर्व समाधिमें लीन हो गये।

अंतिम बार सायलेसे श्रीमद्‌को बिदाई देनेके लिये जाने पर रास्तेमें नदी आई। वहाँ पर श्री सोभागभाईने श्रीमद्‌को कहा कि–"उगते हुए सूर्यकी साक्षीमें, नदीकी साक्षीमें, सत्पुरुषकी साक्षीमें इस सोभागको आपके सिवाय दूसरा स्मरण न हो।"

"राग करना नहीं, राग करना तो सत्पुरुषसे करना; द्वेष करना नहीं, द्वेष करना तो कुशीलसे करना।"

–श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १५७)

ईडरमें परमार्थका अपूर्व बोध

श्री सोभागभाईकी अंतिम अवस्थामें बुखार आता था । फिरभी दस दिनके लिये श्रीमद् उन्हें इडर ले जाकर वहाँ पर परमार्थकी अपूर्व समझ देकर पुरुषार्थमें प्रेरित किया और मुंबईसे भी समाधिमरणके लिये उनको खास पत्र लिखे । उसके फलस्वरूप अपूर्व समाधिमरणको उन्होंने प्राप्त किया ।

"हमें लगता है कि हरि हमारे हाथसे आपको पराभक्ति दिलायेंगे; हरिके स्वरूपका ज्ञान करायेंगे, और इसे ही हम अपना बड़ा भाग्योदय मानेंगे ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२९६)

"इस देहसे करने योग्य कार्य तो एक ही है कि किसीके प्रति राग अथवा किसीके प्रति किंचित्मात्र द्वेष न रहे । सर्वत्र समदशा रहे । यही कल्याणका मुख्य निश्चय है । यही विनती ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६१५)

"जो कोई सच्चे अंतःकरणसे सत्पुरुषके वचनोंको ग्रहण करेगा वह सत्यको पायेगा, इसमें कोई संशय नहीं है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६१६)

"अनादिसे उस देहका त्याग करते हुए जीव खेद प्राप्त किया करता है, और उसमें दृढ़मोहसे एकमेककी तरह प्रवर्तन करता है; यही जन्ममरणादि संसारका मुख्य बीज है । श्री सोभागने ऐसी देहका त्याग करते हुए महामुनियोंको भी दुर्लभ ऐसी निश्चल असंगतासे निज उपयोगमय दशा रखकर अपूर्व हित किया है, इसमें संशय नहीं है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६१६)

अपूर्व अवसरका सर्जन

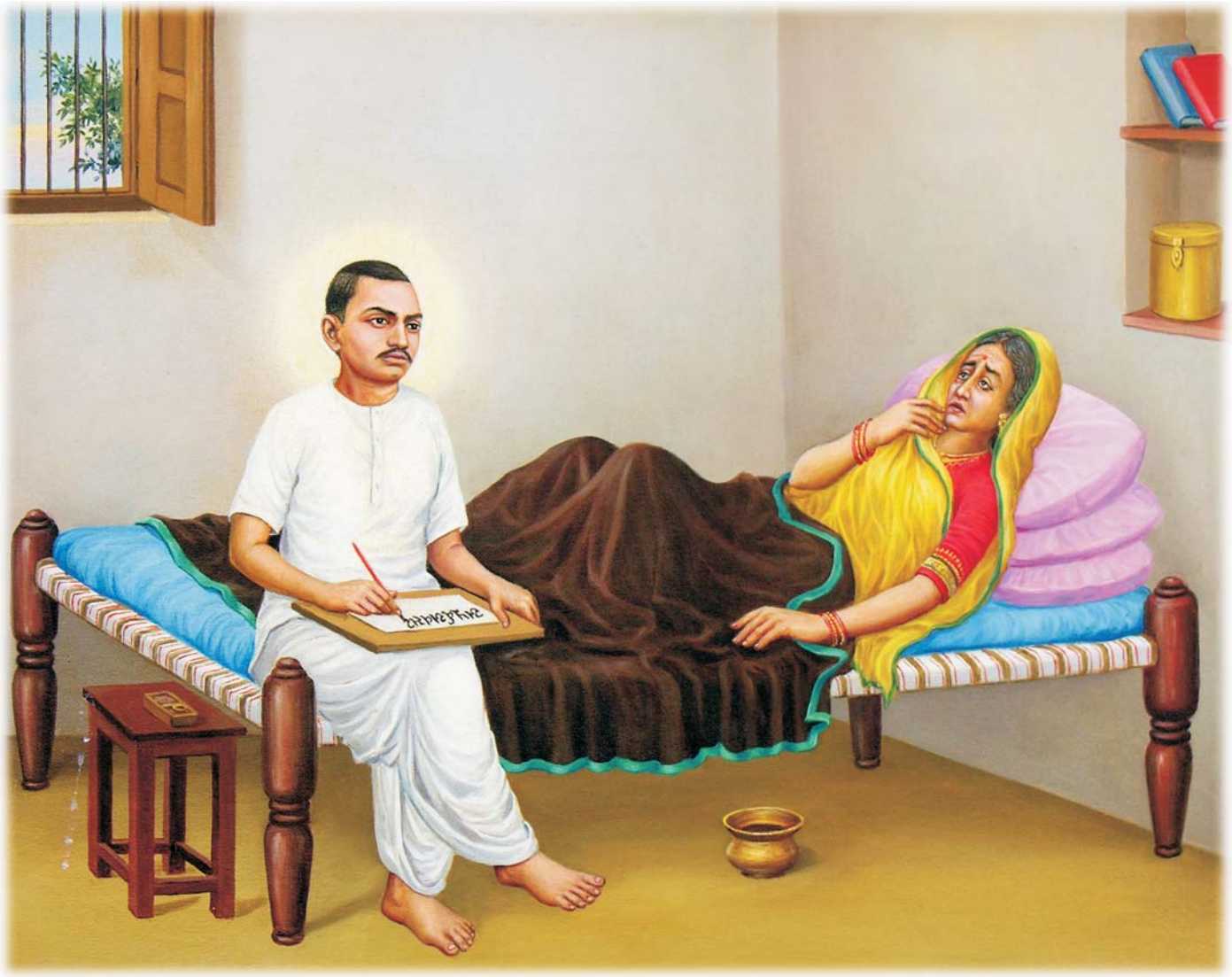

"अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे?
क्यारे थईशुं बाह्यांतर निर्ग्रंथ जो?
सर्व संबंधनुं बंधन तीक्ष्ण छेदीने,
विचरशुं कव महत् पुरुषने पंथे जो? अपूर्व०

परमकृपालुदेव नडियादमें थे तब ववाणियामें देवमाता बीमार है ऐसा समाचार मिलने पर तुरंत ववाणिया पधारे। माताजीकी सेवा अच्छी तरह की थी। स्वयं उनके पास ही बैठे रहते थे। बीमारीके कारण माताजी चलना भूल गये थे। श्रीमद् उनका हाथ पकडकर चलाते थे।

'अपूर्व अवसर'का भावनाबद्ध काव्य माताजीके खाट पर बैठे बैठे ही परमकृपालुदेवने रचा था।

"सिद्धदशाकी भावना करनी है। सिद्धको याद करना है। सिद्धदशामें मोह नहीं है। इस दशाको याद करनेके लिये 'अपूर्व अवसर' के काव्यकी रचना की है। अपना वास्तविक स्वरूप यही है। लेकिन जीव भूल गया है। आत्मामें रागद्वेष, मेरा तेरा कुछ है ही नहीं। जिसने आत्माको प्रकट किया है ऐसे ज्ञानीपुरुषमें अपनी वृत्ति जाए तो रागद्वेष नहीं होगा।" (बो. १ पृ. २४६)

उपाश्रयमें स्वाध्याय

खंभातमें इस स्थानकवासी उपाश्रयमें प.पू. प्रभुश्रीजीको परमकृपालुदेवका प्रथम मिलन हुआ था ।

उपर बताये हुए उपाश्रयके नीचेवाले खंडमें एक कोनेमें श्री लल्लुजी मुनि और शास्त्राभ्यासी श्री दामोदरभाई, 'भगवती सूत्र' के पन्ने उपरके खंडमेंसे आचार्य श्री हरखचंदजी महाराज पढ़कर भेजते थे उसे पढ़ते थे ।

उसी उपाश्रयमें सामने दूसरे कोनेमें श्री अंबालालभाई, श्री त्रिभोवनभाई और श्री छोटाभाई श्रीमद्जीके पत्र पढ़ते थे । तब श्री लल्लुजी मुनिने अंबालालभाईको कहा कि या तो उपर व्याख्यानमें जाइये या यहाँ पर आकर बैठिये ।

श्री लल्लुजी महाराजको श्रीमद्‌जीकी प्रथम जानकारी

उपाश्रयमें उपर जानेके बजाय तीनोही श्री लल्लुजी महाराजके पास आकर बैठे । भवस्थिति आदि प्रश्नोकी चर्चा हुई; लेकिन समाधान नहीं हो पाया । तब श्री अंबालालभाईने कहा कि सब आगमको जाननेवाले ऐसे श्रीमद् राजचंद्र नामके उत्तम पुरुष मुंबईमें है वे यहाँ पर खंभात आनेवाले है । तब लल्लुजी महाराजने कहा "हमको भी उनका परिचय करवाना ।"

"जो बातें जीवको मंद कर डालें, प्रमादी कर डाले वैसी बातें न सुनें । इसीसे जीव अनादिसे भटका हैं । भवस्थिति, काल आदिके अवलंबन न लें, ये सब बहाने हैं ।

कल्याणवृत्ति उदित हो तब भवस्थितिको परिपक्व हुई समझें ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७३७)

फिर लल्लुजी महाराजको श्रीमद्‌जीके पत्र पढ़नेके लिये दीये । उन्हें पढ़कर उनको भी तसल्ली हो गई कि यह पुरुष अवश्य अनेक प्रश्नोका समाधान कर सकेंगे । क्योंकि इस पत्रोमें तत्त्वसंबंधी जो गहरा चिंतन मालुम होता है वैसा तो कही भी देखनेमें नहीं आया ।

"जगतके अभिप्रायकी ओर देखकर जीवने पदार्थका बोध पाया है । ज्ञानीके अभिप्रायकी ओर देखकर पाया नहीं है । जिस जीवने ज्ञानीके अभिप्रायसे बोध पाया है उस जीवको सम्यग्दर्शन होता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३३२)

श्री लघुराजस्वामीका परमकृपालुदेवके साथ प्रथम मिलन

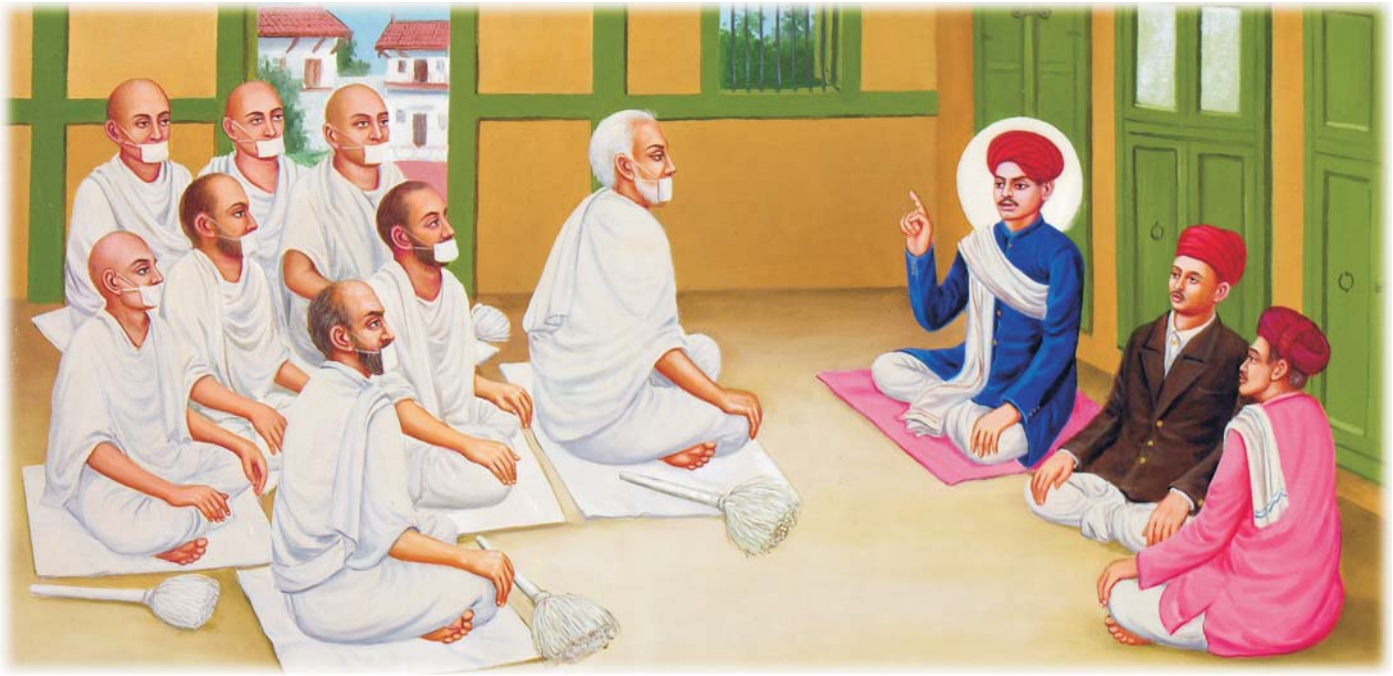

"सं० १९४६ में श्रीमद्का खंभातमें प्रथम पदार्पण हुआ । वे श्री अंबालालभाईके वहाँ ही ठहरे थे । श्री अंबालालभाई अपने पिता लालचंदभाईके साथ श्रीमद्को उपाश्रयमें ले गये । श्रीमद्ने अवधान करने छोड़ दिये थे । परन्तु लालचंदभाई तथा श्री हरखचंदजी महाराजके आग्रहसे श्रीमद्ने उस दिन उपाश्रयमें अष्टावधान कर दिखाये । सर्व साधुवर्ग इत्यादि श्रीमद्की विद्वता और अद्भुत शक्ति देखकर आश्चर्यचकित हो गये ।" -जीवनकला (पृ.१५७)

प्रथम मिलनमें ही साष्टांग दंडवत्

"श्री लल्लुजीने श्रीमद्को ऊपरके खंड पर पधारनेकी विनती की और श्री हरखचंदजी महाराजसे पूछा–"मैं उनके पाससे कुछ जानकारी लू ? श्री हरखचंद महाराजकी आज्ञा मिल गई । तब श्री लल्लुजीने ऊपर जाकर श्रीमद्को नमस्कार किया । श्रीमद् द्वारा नमस्कार करनेसे रोकने पर भी उन्होंने उत्तम पुरुष जानकर उमंगसे बिना रुके नमस्कार किया ।" -जीवनकला (पृ.१५८)

"वर्तमानमें बड़े विस्तारवाले 'श्रीमद् राजचंद्र आश्रम'के संस्थापकके रूपमें प्रसिद्ध श्रीमद् लघुराजस्वामीका सत्य मार्गमें प्रवेश करानेवाला वर्षगाँठका दिन माना जाय ऐसा मांगलिक प्रसंग बन गया ।" -जीवनकला (पृ.१५९)

"आत्मा विनयी होकर, सरल और लघुत्वभावको पाकर सदैव सत्पुरुषके चरणकमलमें रहे तो जिन महात्माओंको नमस्कार किया है उन महात्माओंकी जिस प्रकारकी ऋद्धि हैं उस प्रकारकी ऋद्धि संप्राप्त की जा सकती है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१८५)

समकित और ब्रह्मचर्य दृढ़ताकी मांग

श्रीमद्ने श्री लल्लुजीस्वामीसे पूछा–"आपकी क्या इच्छा है ?" स्वामीजीने विनयसहित हाथ जोड़कर याचनापूर्वक कहा –"समकित (आत्माकी पहचान) और ब्रह्मचर्यकी दृढ़ताकी मेरी इच्छा है ।"

श्रीमद् थोड़ी देर मौन रहे और कहा–ठीक है ।" फिर स्वामीजीके दायें पैरका अंगूठा खींचकर श्रीमद्ने ध्यानसे देखा; और उठकर नीचे गये । -जीवनकला (पृ. १५९)

"एक दिन श्री लल्लुजी स्वामीने श्रीमद्से कहा–"मैं ब्रह्मचर्यके लिये पाँच वर्षोंसे एकान्तरे उपवास (एक दिन उपवास और एक दिन भोजन) करता हूँ और कायोत्सर्ग (ध्यान) करता हूँ, फिर भी मानसिक पालन यथायोग्य नहीं हो पाता ।"

"श्रीमद्ने कहा–"लोकदृष्टिसे न करें; लोकदिखावेके लिये तपश्चर्या न करें । परन्तु स्वादका त्याग हो, और ऊनोदरी तप (पेट खाली रहे वैसे, अर्थात् खूब डट कर नहीं खाना) हो वैसे आहार करें; स्वादिष्ट भोजन दूसरोंको दे दें ।" -जीवनकला (पृ.१६१)

"योग्यताके लिये ब्रह्मचर्य एक बड़ा साधन है । असत्संग एक बड़ा विघ्न है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२६५)

प्रभुश्री धर्ममार्गमें आत्मज्ञानी मुनि होंगे

श्री अंबालालके घर जाते हुए श्रीमद्ने बताया–"यह पुरुष संस्कारी है । ये रेखा-लक्षण धारण करनेवाला पुरुष संसारमें उत्तम पद प्राप्त करता है; धर्ममें आत्मज्ञानी मुनि होता है ।" -जीवनकला (पृ.१५९)

"दूसरे दिन श्री लल्लुजी स्वामी श्रीमद्के समागमके लिये श्री अंबालालके घर गये, वहाँ श्रीमद्ने एकान्तमें उन्हें पूछा–"आप हमें सन्मान क्यों देते हैं ?"

स्वामीजीने कहा–"आपको देखकर अति हर्ष एवं प्रेम आता है; और मानो आप हमारे पूर्वभवके पिता हो इतना अधिक भाव उठता है; किसी प्रकारका भय नहीं रहता; आपको देखते ही ऐसी निर्भयता आत्मामें आती है ।" -जीवनकला (पृ.१५९)

श्रीमद्ने फिर पूछा–"आपने हमें कैसे पहचाना ?"

स्वामीजीने कहा–"अंबालालभाईके कहनेसे आपके संबंधमें जाननेमें आया । हम अनादिकालसे भटक रहे है, इसलिये हमारी सँभाल लीजिये ।" -जीवनकला (पृ.१६०)

स्वामीजीने फिर पूछा–"मैं जो जो देखता हूँ वह भ्रम है, झूठ है ऐसा अभ्यास करता हूँ ।"

श्रीमद्ने कहा–**"आत्मा है ऐसे देखा करें ।"**

-जीवनकला (पृ. १६१)

'आतम भावना भावतां जीव लहे केवलज्ञान रे'

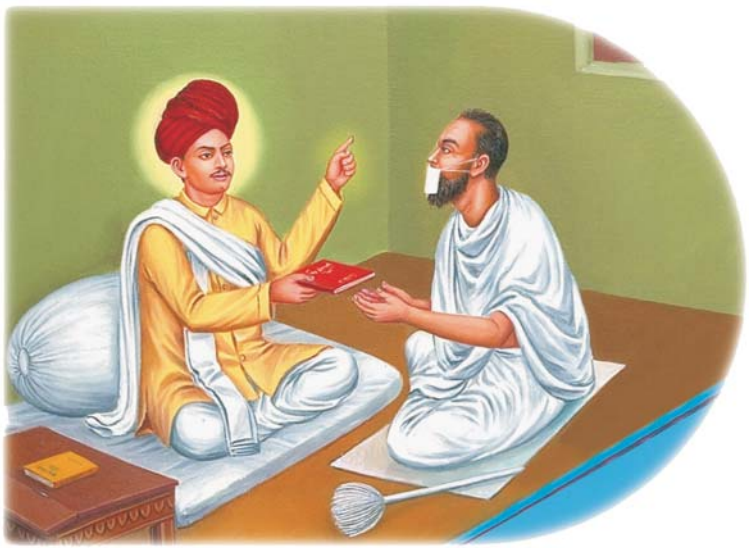

श्रीमद्जीके समागमके लिये श्री लल्लुजी मुनिने मुंबईमें चातुर्मास किया । श्री लल्लुजी मुनि दुकान पर समागमके लिये आतेही श्रीमद्जी उठकर बाजुके कमरेमें जाकर उनको 'समाधिशतक' वगैरह समझाते थे । 'समाधिशतक' की सतरह गाथाओंको समझाकर वह पुस्तक पढ़ने एवं विचारनेके लिये मुनिश्रीको दिया ।

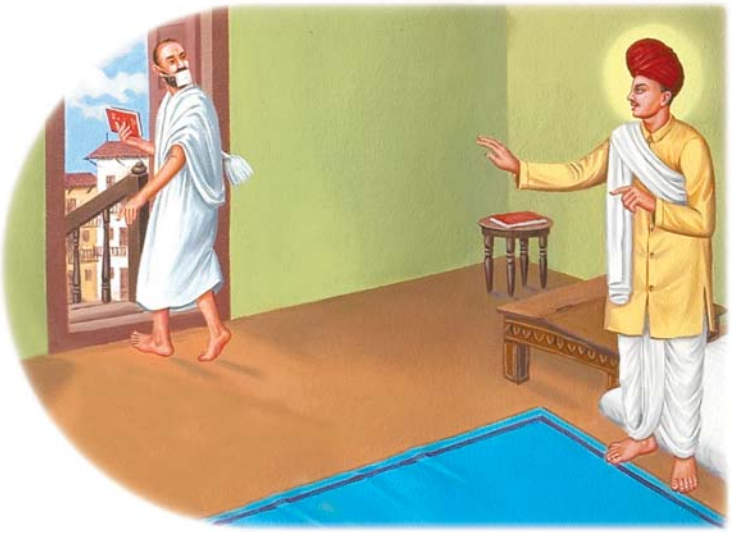

वह पुस्तक लेकर सीढ़ी तक पहुंचे कि श्री लल्लुजी मुनिको श्रीमद्ने वापिस बुलाया ।

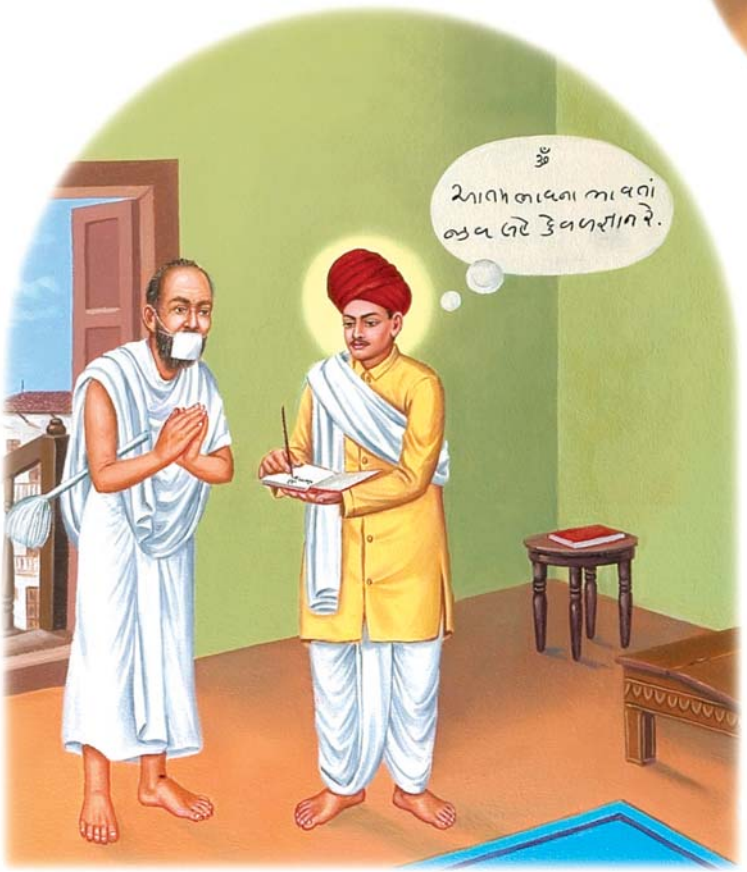

वापिस बुलाकर उस 'समाधिशतक' के पहले पन्ने पर नीचे लिखी हुई अपूर्व पंक्तिको लिखकर दिया ।

"आतम भावना भावतां
जीव लहे केवलज्ञान रे"

इस आतम भावनाकी कैसे भावना की जाय उसे 'श्रीमद् राजचंद्र ग्रंथमें श्रीमद् इस प्रकार बताते है–

"मैं देहादिस्वरूप नहीं हूँ, और देह, स्त्री, पुत्र आदि कोई भी मेरे नहीं है, शुद्ध चैतन्यस्वरूप अविनाशी ऐसा मैं आत्मा हूँ, इस प्रकार आत्मभावना करनेसे रागद्वेषका क्षय होता है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (पृ. ५११)

मिथ्यादृष्टिकी क्रिया सफल, सम्यक्दृष्टिकी क्रिया अफल

मुंबईमें चिंचपोकली के उपाश्रयमें श्री देवकरणजी महाराजने श्रीमद्को पूछा कि इस 'सूत्रकृतांग'में मिथ्यादृष्टिकी क्रिया सफल और सम्यक्दृष्टिकी क्रिया 'अफल' ऐसा लिखा हुआ है वह लेखनदोष है या बराबर है ?

श्रीमद्ने कहा : लेखन दोष नहीं है, बराबर है । क्योंकि मिथ्यादृष्टि क्रिया करें उसका पुण्य या पापरूप फल आता है, इसलिये वह 'सफल' है और सम्यक्दृष्टि क्रिया करे उसको पाप या पुण्यरूप फल आता नहीं लेकिन कर्मोकी निर्जरा होती है, इसलिये वह 'अफल' है; ऐसा परमार्थ समजने योग्य है । इस समाधानसे श्री देवकरणजीको श्रीमद् महान बुद्धिशाली पुरुष जान पड़े और श्री लल्लुजी महाराज कहते थे वह बात सत्य है ऐसा भास्यमान हुआ ।

हीरा, माणेक मोती
कालकूट जहर समान

एक दिन प्रभुश्रीजी और देवकरणजी श्रीमद्के पास आये । तब देवकरणजी मुनिको श्रीमद्जी-ने पूछा : व्याख्यानमें कितने लोग आते है ? देवकरणजीने कहा : करीबन हजार लोग आते है । श्रीमद्ने पूछा : स्त्रीओकी सभा देखकर विकार होता है ? श्री देवकरणजीने कहा : "कायासे होता नहीं लेकिन मनसे होता है ।" श्रीमद्ने कहा : मुनिको तो मन, वचन, काया तीनो योगसे संभालना चाहिये । तब श्री देवकरणजीने आक्षेप करते हुए कहा : आप गद्दी-तकीये पर बैठते है और हीरामाणेक आपके पास पड़े होते है तब आपकी वृत्ति चलायमान नहीं होती होगी ? तब श्रीमद्जीने कहा : **"मुनि, हम तो कालकूट विष देखते है"** तुम्हें ऐसा होता है ? यह सुनकर श्री देवकरणजी स्तब्ध हो गये ।

"ज्ञानी जगतको तृणवत् समझते हैं, यह उनके ज्ञानकी महिमा समझें ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६८१)

छ पदके पत्रका उद्‌भव

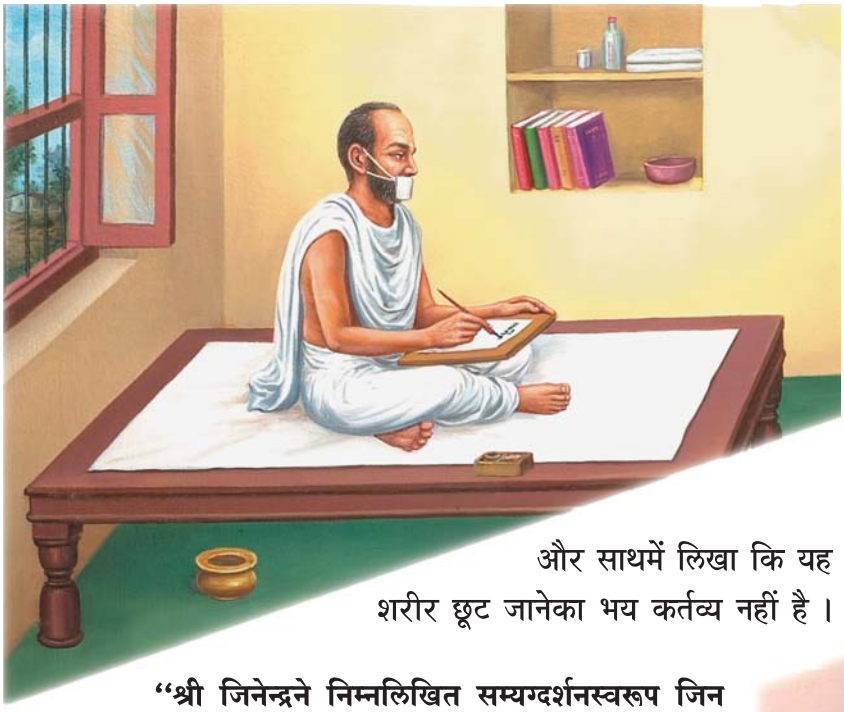

और साथमें लिखा कि यह शरीर छूट जानेका भय कर्तव्य नहीं है ।

वि.सं. १९५० में श्री लल्लुजी मुनिको सूरतमें दस बारा महीनेसे बुखार आता था । जिससे चिंता हुई कि शायद देह छूट जाय । इसलिये परमकृपालुदेवको बारबार पत्र लिखकर मालूम किया कि "हे नाथ ! अब यह शरीर बचे ऐसा नहीं है और मैं समकितके बिना जाउंगा तो मेरा यह मनुष्यभव वृथा चला जायेगा । इसलिये कृपा करके मुझे समकित दीजिये ।

श्री लल्लुजी मुनिके पत्रके उत्तरमें श्रीमद्‌ने अनंत कृपा करके 'छ पद' का पत्र लिखकर भेजा;

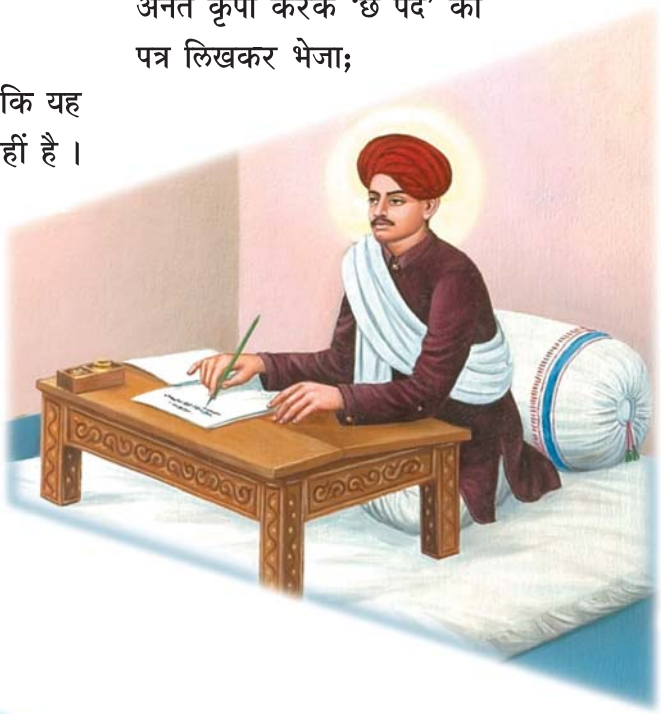

"श्री जिनेन्द्रने निम्नलिखित सम्यग्दर्शनस्वरूप जिन छः पदोंका उपदेश दिया है, उनका आत्मार्थी जीवको अतिशय विचार करना योग्य है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ८१७)

"छः पदका पत्र अमृतवाणी है । पत्र तो सभी अच्छे है, पर यह तो लब्धिवाक्य जैसा हे । छह मास तक इसका पाठ करे तो प्रभु ! कुछसे कुछ हो जाता है । चाहे जैसी बाधा विघ्न आयें, उन्हें भगा देना चाहिये । दिनमें एकबार इस पर विचार करनेका रखें, फिर देखें । यह समकितका कारण है ।" (उ.पृ.२७२)

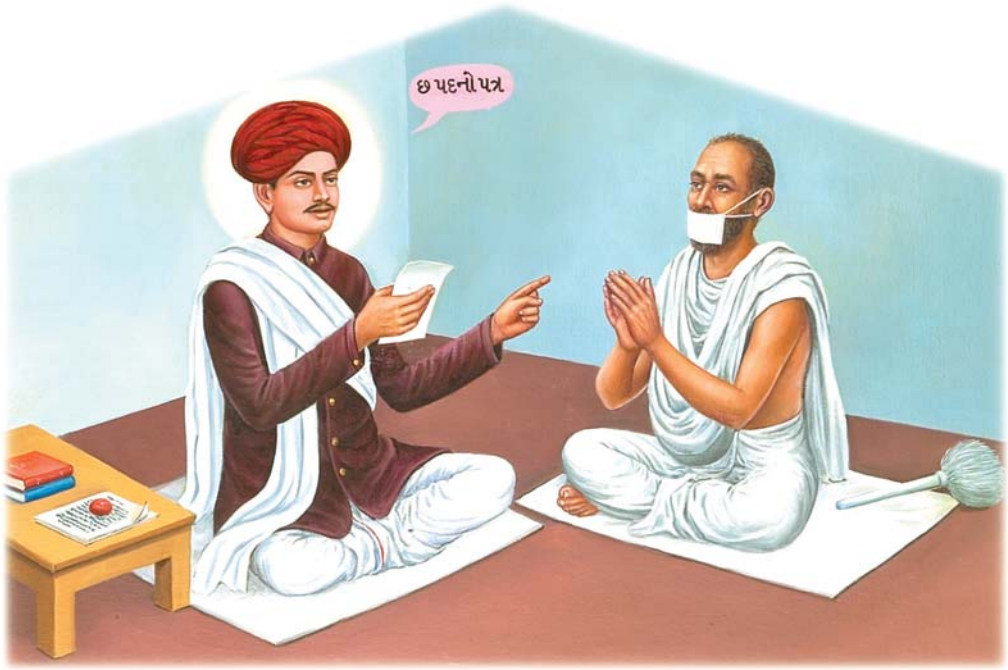

जब श्रीमद् सूरत पधारे तब उस 'छ पद' के पत्रका विशेष विवेचनकर उसका परमार्थ श्री लल्लुजी मुनिको समजाया और उस पत्रको मुखपाठ करके बारबार विचारनेकी सूचना उनको दी ।

जीवकी योग्यता हो तो सम्यक्त्व प्राप्त हो जाये ऐसी विचारणा उत्पन्न कर दे ऐसा यह अद्‌भुत पत्र है ।

अचिंत्य महात्म्यवान ऐसा आत्मा

श्री कीलाभाई गुलाबचंद कहते है कि–

'सं. १९५० के पर्युषण पर्व श्रीमद्ने वडोदरामें कीये थे । उस वक्त वडोदरामें शेठ फकीरभाई परमकृपालुदेवको राज दरबारमें ले गये । वे सरकारके झवेरी थे । वहाँ करोड़ो रुपियोंके झवेरात थे । उसमें नौ लाखका एक हीरा था । वह कृपालुदेवको फकीरभाईने बताया । कृपालुदेवने देखकर कहा : अचिंत्य जिसका माहात्म्य है ऐसा आत्माका चमत्कार जीवको भास्यमान नहीं होता लेकिन ऐसे चमकीले दागरहित पत्थरका जीवको माहात्म्य लगता है ।

"गुप्त चमत्कार ही सृष्टिके ध्यानमें नहीं है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१५८)

"जौहरी लोग ऐसा मानते हैं कि एक साधारण सुपारी जैसा सुन्दर रंगका, पाणीदार और घाटदार माणिक (प्रत्यक्ष) दोषरहित हो तो उसकी करोड़ों रुपये किंमत गिनें तो वह कम है । यदि विचार करें तो इसमें मात्र आँखकी तृप्ति, और मनकी इच्छा तथा कल्पित मान्यताके सिवाय दूसरा कुछ नहीं है । तथापि इसमें केवल आँखकी तृप्तिरूप करामातके लिये और दुर्लभ प्राप्तिके कारण जीव उसका अद्भुत माहात्म्य बताते है; और जिसमें आत्मा स्थिर रहता है, ऐसा जो अनादि दुर्लभ सत्संगरूप साधन है, उसमें कुछ आग्रह-रुचि नहीं है यह आश्चर्य विचारणीय है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३८६-७)

श्रीमद्‌जीके साथ गांधीजीका प्रथम मिलन

श्री राष्ट्रपिता गांधीजी लिखते है–

"श्री रायचंदभाई (श्रीमद्‌)की मुझे प्रथम पहचान सन् १८९१के जून महिनेमें जब में विलायतसे बम्बई पहुँचा उसी दिन हुई । बम्बईमें मेरा ठहरना डाक्टर-बेरिस्टर और हालमें रंगूनके प्रसिद्ध झवेरी प्राणजीवनदास मेहताके वहाँ था । रायचंदभाई उनके बडेभाईके जामाता होते थे । डाक्टरने ही उनका परिचय करवाया था ।

डॉक्टरने रायचंदभाईको कवि कहकर मुझे पहचान करवाई और कहा कि श्रीमद् कवि होते हुए भी हमारे साथ व्यवसायमें है । वे ज्ञानी है, शतावधानी है ।

किसीकी सूचनासे मैंने श्रीमद्‌जीको अलग अलग भाषाओंके अनेक शब्द कहे । उसी क्रममें श्रीमद्‌जीने एक के बाद एक धीरेसे सभी शब्द कह दिये । मैं बहोत खुश हुआ, चकित हुआ और श्रीमद्‌जीकी स्मरणशक्तिके बारेमें मेरा उच्च अभिप्राय दिलमें स्थापित हुआ ।

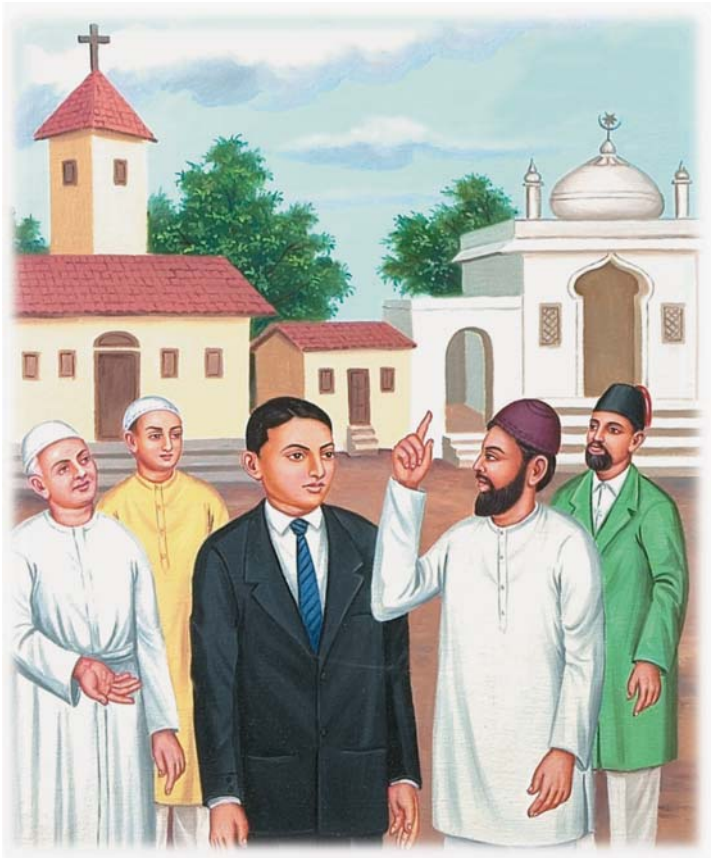

धर्ममंथन कालमें श्रीमद्‌जीके पत्रोसे शांति

सन् १८९३में गांधीजी दक्षिण आफ्रिकामें थे । वहाँ पर ख्रिस्ती सज्जन उनको ख्रिस्ती बनानेके लिये प्रयत्न करते थे और मुसलमान मुस्लिम धर्म समझानेका प्रयत्न करते थे । लेकिन श्रीमद्‌के पूर्व परिचयसे श्रीमद्‌जीके साथ गांधीजीने पत्र व्यवहार शुरु किया । उसके फलस्वरूप गांधीजी लिखते है कि "मुझे शांति हो गई । हिन्दु धर्ममें मुझे जो चाहिये वह मिल सकता है ऐसा मुझे विश्वास आ गया । उसके कारण श्रीमद्‌जी ही थे । इसलिये मेरा मन उनके प्रति कितना आकर्षित हुआ होगा उसका ख्याल पढ़नेवालेको कुछ आ सकता है ।"

श्रीमद्‌जीके साथ गांधीजीका दो साल निकट परिचय

विचक्षण गांधीजी कहते है–

"जो वैराग्य 'अपूर्व अवसर'की गाथाओमें ज्वाजल्यमान है वह मैंने दो सालके गाढ़ परिचयसे उनमें प्रतिक्षण देखा है ।

उनके लेखनकी एक विशेषता है कि उन्होंने जो अनुभव किया वही लिखा है । उसमें कहीं भी कृत्रिमता नहीं है । दूसरोंके उपर छाप ड़ालनेके लिये एक भी लीटी लिखी हो ऐसा मैनें नहीं देखा । उनके पास हमेशा एक धार्मिक पुस्तक और कुछ लिखनेके लिये डायरी पडी ही रहती थी । उस डायरीमें जो मनमें विचार आये वो लिख डालते । कोई बार गद्य तो कोई बार पद्य ।

भोजन करते, बैठते, सोते, प्रत्येक क्रिया करते उनमें वैराग्य तो होता ही था । किसी भी समय विश्वके किसी भी वैभवके प्रति उनको आसक्ति हुई हो ऐसा मैंने नहीं देखा ।

उनका रहन सहन मैं आदरपूर्वक लेकिन सूक्ष्मतासे जाँच करता था । भोजनमें जो मिले उससे संतुष्ट रहते थे । उनका पहेरवेष सादा था । शर्ट, धोती, खेस और पघड़ी था । वे बहोत इस्त्रीबंध रहेते ऐसा मुझे याद नहीं है । जमीन पर बैठना या कुर्सी पर बैठना दोनों उन्हें समान था । सामान्य तोरपर अपनी दुकानमें गद्दी पर बैठते थे ।

उनकी चाल धीमी थी । उसको देखनेवाला समज सके कि वे चलते हुए भी विचारमें लीन है । आँखोमें चमत्कार था । अत्यंत तेजस्वी और आँखोमें जरा भी विह्वलता नहीं । आँखे बिलकुल एकाग्र थी । मुँह गोलाकार, होठ पतले, नाक अणीदार नहीं, चपटा भी नहीं, शरीर पतला, कद मध्यम, वर्ण श्याम, दिखनेमें शांतमूर्ति लगते थे । उनके कंठमें इतनी मधुरताथी कि उनको सुननेमें लोग थकते नहीं थे । हसमुखा मुखकमल प्रफुल्लित था । मुखकमल पर अंतर आनन्दकी छाया दिखाई देती थी ।

भाषा इतनी परिपूर्ण थी कि उनको अपने विचार बतानेके लिये कोई शब्दको ढूंढना नहीं पड़ा ऐसा मुझे याद है । पत्र लिखते समय कोई शब्दको बदलना पड़ा हो ऐसा कभी नहीं देखा फिरभी पढ़नेवालेको ऐसा नहीं लगेगा कि कोई विचार अपूर्ण है या वाक्य रचना टूटती हो अथवा शब्द पसंदगीमें कमी है ।

ये वर्णन संयमीके बारेमें ही संभव है । बाह्य आडंबरसे मनुष्य वीतराग नहीं बन सकता । वीतरागता, आत्माकी प्रसादी है । अनेक जन्मोंके प्रयत्नसे मिल सकती है । ऐसा कोई भी मनुष्यके अनुभवमें आ सकेगा । रागको निकालनेका प्रयत्न करनेवाला जानता है कि रागरहित होना कितना कठिन है । ये रागरहित दशा श्रीमद्‌जीकी स्वाभाविक थी ऐसा मेरे पर प्रभाव पड़ा था ।

श्रीमद्‌जीने बहोत सारे धर्म पुस्तकोका सुंदर अभ्यास किया था । उनको संस्कृत एवं मागधी भाषा समझना बिलकुल मुश्किल नहीं था । वेदांतका अभ्यास भी उन्होंने किया था । उसी प्रकार भागवत् और गीताजीका भी । जैन साहित्य तो जो भी हाथ लगता उसको पढ़ डालते थे । उनकी ग्रहणशक्ति अगाध थी । उन पुस्तकोको एकबार पढ़कर उनका रहस्य जानना उनके लिये आसान था । कुरान, झंद, अवस्ता, इत्यादिका पठन भी अनुवादोके द्वारा उन्होंने कर लिया था ।"

श्रीमद्‌जीके प्रति विचारवान गांधीजीके उच्च अभिप्राय

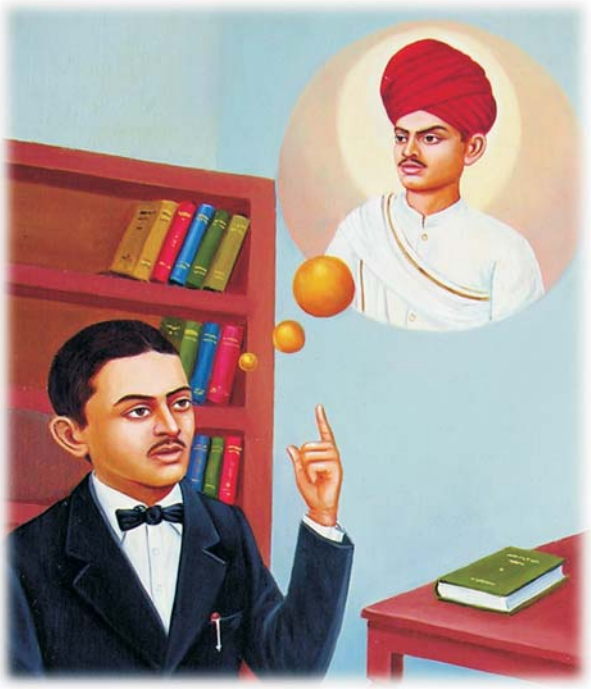

श्रीमद्‌जी जैसी छाप दूसरे डालनेमें असमर्थ :– "बहोत धर्माचार्योंके प्रसंगमें मैं आ चुका हूँ लेकिन जो छाप मेरे उपर श्रीमद्‌जीने डाली वह कोई भी नहीं डाल सका । उनके वचन मेरे हृदयमें उतर जाते थे । उनकी बुद्धिके प्रति मुझे मान था । उनकी प्रामाणिकताके प्रति भी उतना ही मान था । इस वजहसे मैं जानता था कि वे मुझे इरादापूर्वक गलत रास्ते पर नहीं ले जायेंगे और मनमें जो होगा वही कहेंगे । इससे मेरी आध्यात्मिक समस्याओंमें मैं उनका आधार लेता था । मेरे जीवन पर श्रीमद्‌जीका ऐसा स्थायी प्रभाव पड़ा है कि मैं इसका वर्णन नहीं कर सकता ।"

श्रीमद्‌जी जैसे उत्तम पुरुष कहीं भी नहीं देखे :– "मैं कितने वर्षोंसें भारतमें धार्मिक पुरुषकी खोजमें हूँ लेकिन इनके जैसा धार्मिक पुरुष हिंदमें आज दिन तक नहीं देखा कि जो श्रीमद्‌जीकी तुलनामें आ सके । इनमें ज्ञान, वैराग्य और भक्ति थी । ढोंग, पक्षपात या रागद्वेष नहीं थे ।"

जगतमें चलता झूठ, पाखंड श्रीमद्‌जीको असह्य :– "श्रीमद्‌जी बहोत बार कहते थे कि चारों ओरसे कोई चप्पुए मेरे शरीरमें भोंक दे तो वह मैं सहन कर सकता हूँ लेकिन दुनियामें झूठ, पाखंड, अत्याचार चल रहे है, धर्मके नाम पर अधर्मका प्रवर्तन हो रहा है, वह चप्पु मेरेसे सहन नहीं होती । अत्याचारोसे व्याकुल मनवाले उनको मैंने बहोत बार देखा है । उनको पूरा विश्व अपने कुटुंबके समान था । अपने भाई बहनको मरते देखकर जो क्लेश अपनेको होता है उतना क्लेश उनको जगतमें दुःख और मृत्युको देखकर होता था ।"

श्रीमद्‌जीका वायुके झपाटेकी तरह मोक्षकी ओर आगे बढ़ना :– "हम संसारी जीव है । जबकी श्रीमद् असंसारी (संसारसे विरक्त) थे । हमको अनेक योनियोमें भटकता पडेगा जबकि श्रीमद्‌जीको कदाच एक ही भव काफी होगा । हम मोक्षसे दूर भागते होंगे जबकि वायुवेगके समान श्रीमद्‌जी मोक्षकी तरफ आगे बढ़ रहे थे ।"

रागद्वेषसे रहित होना यही मुक्तिका मार्ग :– "श्रीमद् राजचंद्रकी दृष्टिसे मोक्ष पाना हो तो संपूर्ण रागद्वेषसे रहित होना यही मोक्षका उपाय है ।"

जीवनपर्यंत ब्रह्मचर्यको पालनेमें श्रीमद्‌जीका प्रभाव :– "अपनी स्वपत्नीके साथ भी ब्रह्मचर्यका पालन करना ये मुझे दक्षिण आफ्रिकामें स्पष्ट समझमें आया । किस प्रसंगसे या किस पुस्तकके प्रभावसे ये विचार मनमें जन्मा ये मुझे अभी पूरा याद नहीं है । लेकिन इतना स्मृतिमें है कि इसमें श्रीमद्‌जीके उपदेशका विशेष प्रभाव था ।"

श्रीमद्‌जी व्यापारी नहीं लेकिन शुद्ध ज्ञानी :– "जो व्यक्ति लाखोके सौदेकी बात करके तुरंतही आत्मज्ञानीकी गूढ़ बातें लिखने बैठ जाये उसकी जाति व्यापारीकी नहीं लेकिन शुद्ध तत्वज्ञानीकी है । उसका मुझे अनुभव एकबार नहीं लेकिन अनेक बार हुआ था । मैंने उनको कभी मोहमूर्छित स्थितिमें नहीं देखा । मेरे साथ उनका कोई स्वार्थ नहीं था ।"

श्रीमद्‌जीके उत्तम गुणोसे आकर्षित हुए:– "जिस पर में मुग्ध हुआ वह मुझे पीछे पता चला । वह था उनका विशाल शास्त्रज्ञान, उनका शुद्ध चारित्र और उनका आत्मदर्शन करनेका तीव्र पुरुषार्थ ।"

आत्मधर्म समझनेके लिये श्रीमद्‌जीका साहित्य:– "जिसको आत्मक्लेश मिटाना है, जो अपना कर्तव्य समजनेमें उत्सुक है उसको श्रीमद्‌जीके साहित्यमें बहोत कुछ मिलेगा ऐसा मुझे विश्वास है । फिर चाहे वो हिन्दु हो या अन्य धर्मी ।"

श्रीमद्‌जीके पाससे महात्मा गांधीजीने प्राप्त किया हुआ सत्य और अहिंसाका बल

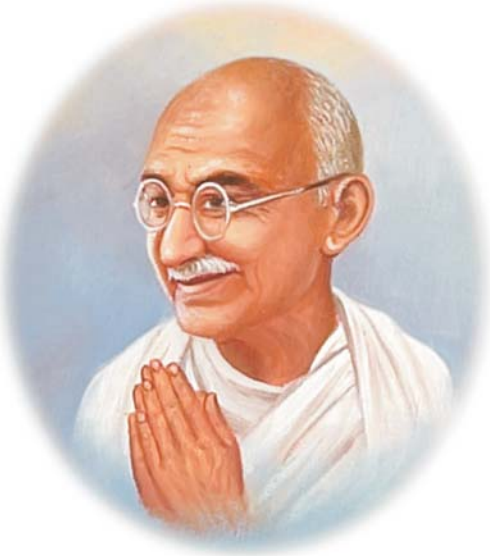

श्रीमद्‌जीके उपदेशकी मुख्य नीव अहिंसा :– "बहोत बाबतोमें श्रीमद्‌जीका निर्णय, तुलना, मेरी अंतरआत्माको, मेरी नैतिक भावनाको खूब समाधानकारक होता था। श्रीमद्‌जीके सिद्धांतका मूल आधार निःसंदेह 'अहिंसा' था। कविके अहिंसाके क्षेत्रमें सूक्ष्मसे सूक्ष्म प्राणीसे लगाकर पूरे मनुष्य जातिका समावेश होता है।"

मुख्य सीखने योग्य सत्य और अहिंसा :– "उनके जीवनमेंसे सीखने योग्य दो बड़ी बात है वह है सत्य और अहिंसा। स्वयं जो सत्य मानते वही कहते और आचरण करते थे। वे अहिंसाके आधार पर जैन थे और स्वभावसे वह उनके पास ही थी।"

श्रीमद्‌जीके वचनानुसार चलने पर मोक्ष सुलभ :– "श्रीमद् राजचंद्र एक विशेष व्यक्तित्ववाले पुरुष थे। उनका साहित्य उनके अनुभवके ही बिन्दु समान है। उसको पढ़नेवाले, उसका विचार करनेवाले, उस आधारपर चलनेवालोके लिये मोक्षकी प्राप्ति सुलभ होगी, उसके कषाय मंद होंगे, उसको संसारके प्रति उदासीनता आयेगी और शरीरका मोह छोड़कर वे आत्मार्थी बनेंगे।"

खून करनेवालेके प्रति भी प्रेम और दया धर्मका पात्र भर भरके पान :– "श्रीमद्‌जीके साथ मेरा परिचय एक दिनका नहीं था। उनके देहान्ततक मेरा संबंध उनके साथ निकटसे निकट रहा है। बहोतबार कहकर लिख दिया है कि मैंने बहोत लोगोके जीवनमेंसे बहोत लिया है लेकिन सबसे ज्यादा किसीके जीवनमेंसे मैंने ग्रहण किया हो तो वह कविश्री श्रीमद्‌जीके जीवनमेंसे है। दयाधर्मभी मैं उनके जीवनमेंसे सीखा हूँ। खून करनेवालेके प्रति भी प्रेम करना ऐसा दया-धर्म मुझे कविश्री श्रीमद्‌जीने सिखाया है। इस अहिंसा धर्मका उनके पाससे मैंने पात्र भर भरके पान किया है।"

समाधान हो तभी भोजन करुँगा

श्री मणिलाल रायचंद कहते है कि–

"हडमतिया गाँवमें केशवलालने दुधका प्याला पीनेको कहा। तब श्रीमद्ने कहा : इस मणिलालने बोटादसे रवाना होते वक्त ऐसा संकल्प किया है कि 'मेरे मनका समाधान, मेरे कहे बिना करे तो ही भोजन करुँगा। अब ये खाना न लें तो अपनेसे कैसे लिया जाय?

फिर एक माईल दूर जाकर मुझे पूछा : तेरे घरके उपर जाकर अकेला बैठकर क्युं रोया? मैंने कहा आप नजदीक पधारे फिर भी आपके दर्शनके लिये घरके बड़े लोगोंकी मनाई होने पर मुझे रोना आ गया कि मेरा जैसा निर्भागी कौन? वगैरह समाधान किया।"

"जिनका परम माहात्म्य है ऐसे निःस्पृह पुरुषोंके वचनमें ही तल्लीनता, यह 'श्रद्धा' 'आस्था' है।"

–श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२२९)

मनकी इच्छा पूर्ण हुई

"एक कमरेमें साहेबजी, श्री सोभागभाई और श्री डुंगरशीभाई आदि खाना खाने बैठे। जगह नहीं होनेसे मैं बैठा नहीं। लेकिन मनमें ऐसा होता था कि साहेबजीके साथ बैठकर भोजन करनेको मिले तो बहोत आनंद आ जाए। तब साहेबजीने कहा : मणिलालके बैठनेके लिये जगह करो। मैं बैठा तो फिर दिलमें विकल्प हुआ कि साहेबजी आग्रह करके एक रोटी लेनेको कहे तो बड़ा आनंद हो। इतनेमें साहेबजीने एक भाईको आज्ञा दी कि एक रोटी लाओ और मणिलालको रक्खो। साथमें घी और शक्कर खूब दो। इस प्रकार मनकी भावना पूर्ण हुई।"

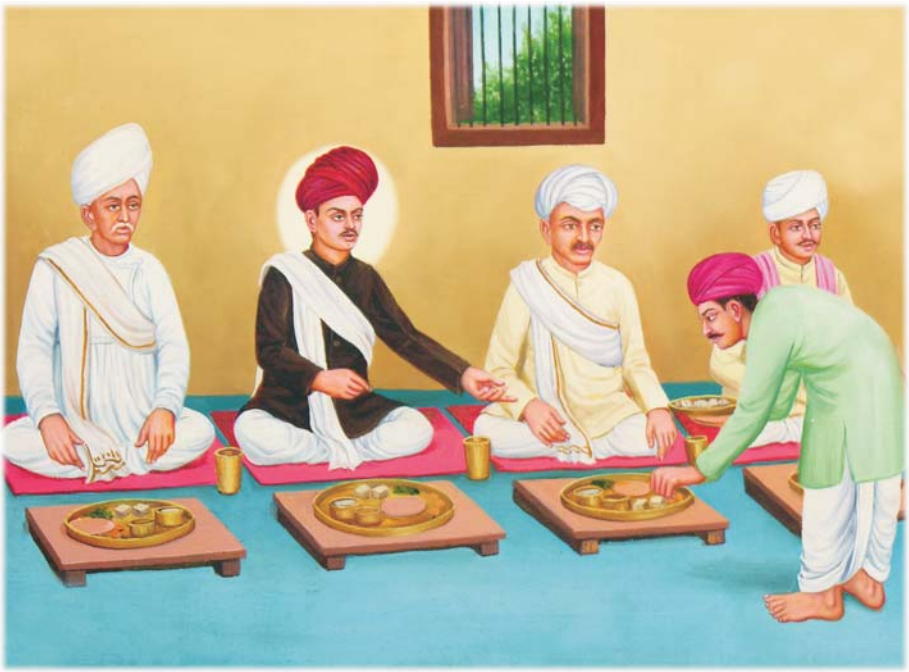

'भगतको आया प्रेम तो मेरे क्या नेम?" (उ.पृ.२०५)

अंतर्यामी

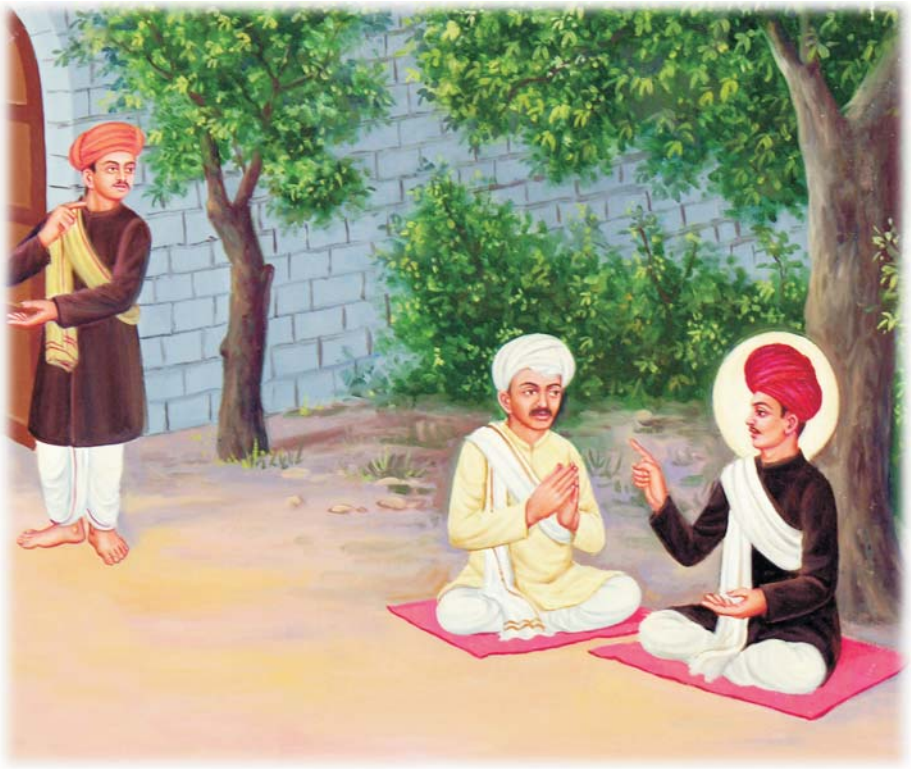

श्री मणिलाल कहते है कि मैं और साहेबजी एक वृक्षके नीचे बैठकर धर्मउपदेशकी बाते करते थे । तब गाँवके दरवाजे पर खड़े खड़े आणंदजी मोरारजी कुछ सोच रहे थे । साहेबजीके कहनेसे उन्हें नजदीक बुलाया । फिर साहेबजीने पूछा : तुम्हारा नाम आणंदजी है ? हा जी । तुम सामने खड़े ऐसा सोच रहे थे कि श्रीमद्, मणिलालको दीक्षा लेनेके लिये कह रहे है, इसलिये बोटाद जाकर रतनशी गांधी और रायचंद गांधीको कह देना है । कहिये ये बात सच है ? आणंदजीने कहा ! अहो साहेबजी, आपने मेरे मनकी बात जान ली । मेरी बहोत भूल हो गई । आप तो महान पुरुष है । अच्छी शिक्षा ही देते होंगे ।

साहेबजीने कहा : तुम आठ प्रश्न मनमें रखकर आये हो, उसका यह एक ही जवाब है । आणंदजीने कहा : आपको धन्यवाद है । बहोतसे साधु लोगभी इसका समाधान नहीं दे सके थे, वे सब आपके पाससे मिल गये । मेरी किसीभी प्रकारसे आपकी आशातना हुई हो उसकी मैं क्षमा माँगता हूँ ।

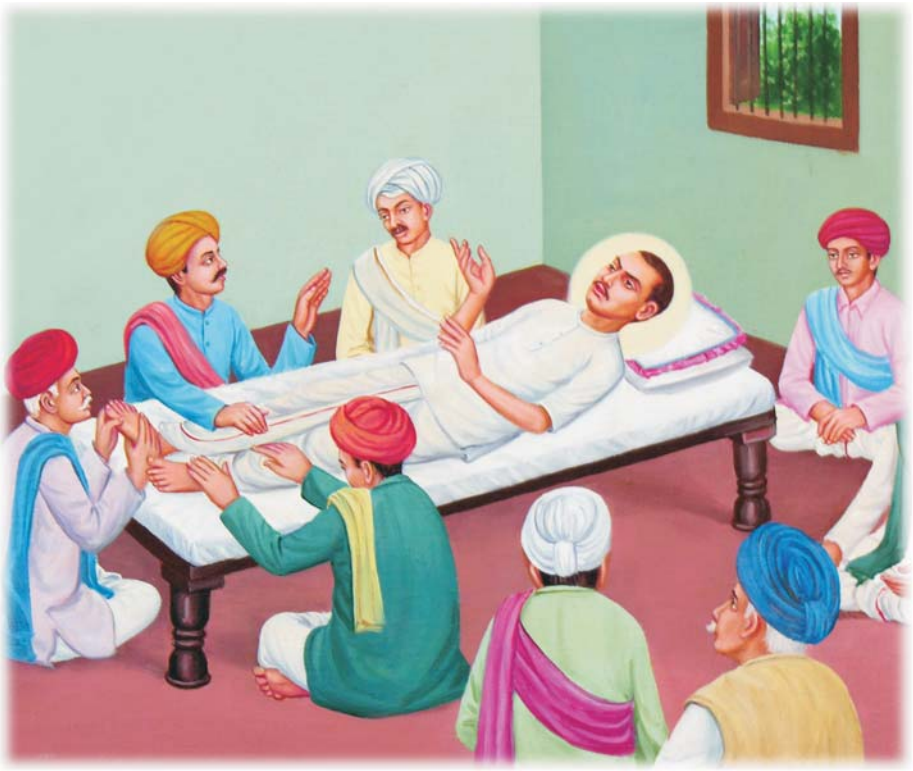

सेवा करनेका लाभ

रातको धर्मचर्चा चली । सब मुमुक्षु सोनेके लिये गये । साहेबजी एक खाट पर सोये थे । चार-पांच मुमुक्षु सेवा करते हुए पगचंपी करते थे । उन्हें मैंने धीरेसे कहा : मुझे भी सेवा करनेका लाभ दो तब कहा :

तुम बाजुमें बैठो । जिससे मुझे बहुत खेद हुआ कि मुझे पहली बारही दर्शन हुए और यह लाभ मुझे मिलेगा नहीं । ऐसा सोचते हुए मनमें बहुत दुःखी हुआ । इतनेमें तो साहेबजीने सेवा करनेवालोको कहा : तुम सब बाजुमें बैठो । मणिलालकी अभिलाषा है इसलिये सेवा करने दो । फिर वो बाजुमें खिसक गए और बहुत आनंदसे यथाशक्ति मैंने सेवा की ।

रातको सब मुमुक्षुओके साथ मुझे सोनेके लिये ले गये। वहाँ पर मैं सोया नहीं लेकिन विचार करता था कि साहेबजीके पास सोनेको मिले तो बड़ा आनंद आ जाय। लेकिन आज्ञाके बिना मेरेसे किस प्रकार जाना हो। ऐसा सोचकर खेद करता था, इतनेमे एक मुमुक्षुभाई दीपक लेकर मुझे बुलाने आये और कहा : मणिलाल चलो, तुमको साहेबजी याद करते है। तुम्हारे सोनेके लिये साहेबजीके पास निश्चित हुआ है।

रातको करीबन चार बजे मैं जगा। तब साहेबजी पाट पर बिराजमान थे। मैंने हाथ जोड़कर दर्शन किये।

"देव अरिहंत, गुरु निर्ग्रंथ और केवलीका प्ररूपित धर्म, इन तीनोंकी श्रद्धाको जैनमें सम्यक्त्व कहा है। मात्र गुरु असत् होनेसे देव और धर्मका भान नहीं था। सद्गुरु मिलनेसे उस देव और धर्मका भान हुआ। इसलिये सद्गुरुके प्रति आस्था यही सम्यक्त्व है। जितनी जितनी आस्था और अपूर्वता उतनी उतनी सम्यक्त्वकी निर्मलता समझें। ऐसा सच्चा सम्यक्त्व प्राप्त करनेकी इच्छा, कामना सदैव रखें।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६९८)

"इस कालमें सत्पुरुषकी दुर्लभता है, बहुत कालसे सत्पुरुषका मार्ग, माहात्म्य और विनय क्षीणसे हो गये हैं और पूर्वके आराधक जीव कम हो गये हैं, इसलिये जीवको सत्पुरुषकी पहचान तत्काल नहीं होती। बहुतसे जीव तो सत्पुरुषका स्वरूप भी नहीं समझते। या तो छकायके रक्षक साधुको, या तो शास्त्र पढ़े हुएको, या तो किसी त्यागीको और या तो चतुरको सत्पुरुष मानते हैं, परन्तु यह यथार्थ नहीं है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६९७)

"मुमुक्षुजन सत्संगमें हों तो निरंतर उल्लासित परिणाममें रहकर आत्मसाधन अल्पकालमें कर सकते हैं, यह वार्ता यथार्थ है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३५४)

जितनी श्रद्धा उतनी निर्भयता

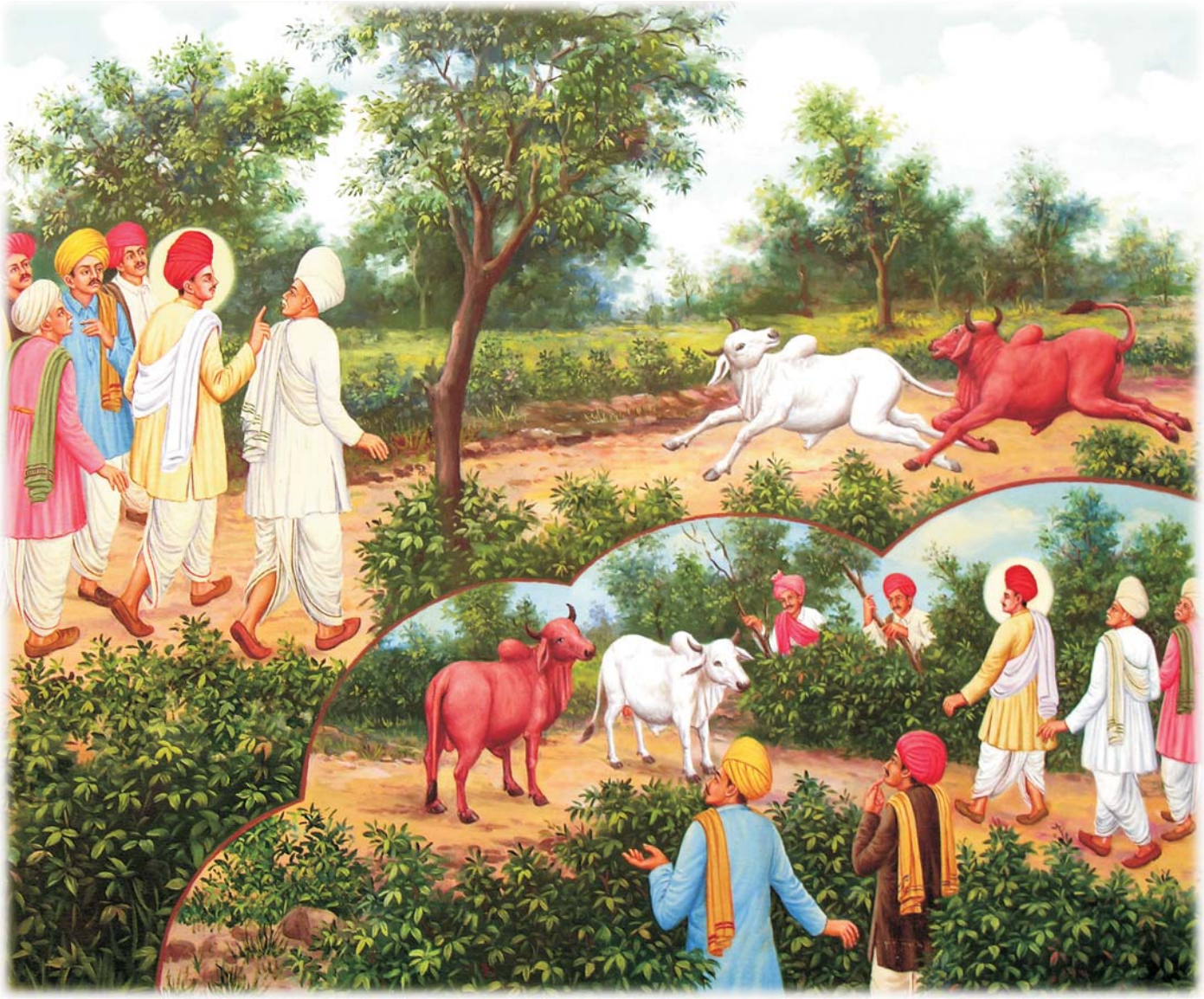

सं. १९५१के आसो महिनेमें श्रीमद् धर्मज पधारे थे। वहाँसे वीरसद पधारे। वहाँ जंगलमें एक छोटे रास्तेसे जाना हुआ था। मुमुक्षु परमकृपालुदेवके साथ चल रहे थे। वहाँ सामनेसे दो बैल लड़ते हुए तेजीसे आ रहे थे।

परमकृपालुदेवने वह देखकर कहा कि दोनों बैल नजदीक आने पर शांत हो जायेंगे। लेकिन श्रद्धाकी कमीके कारण मुमुक्षुलोग खेतमें घुस गये। परमकृपालुदेव बिलकुल निर्भयताके साथ चल रहे थे। उनके साथ श्री सोभागभाई और डुंगरशीभाई भी शांतिसे चल रहे थे। दोनों बैल पासमें आते ही शांत होकर खड़े रह गये।

"ईश्वर पर विश्वास रखना यह एक सुखदायक मार्ग है। जिसका दृढ़ विश्वास होता है वह दुःखी नहीं होता, अथवा दुःखी होता है तो दुःखका वेदन नहीं करता। दुःख उलटा सुखरूप हो जाता है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२२७)

"वीतरागरूप ज्ञानीके वचनमें अन्यथा भाव होना सम्भव ही नहीं है। उसका अवलंबन लेकर ध्रुवतारेकी भाँति श्रद्धा इतनी दृढ़ करना कि कभी विचलित न हो। जब जब शंका होनेका प्रसंग आये तब तब जीवको विचार करना चाहिये कि उसमें अपनी भूल ही होती है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६८६)

शुद्ध समकितकी प्राप्ति

"ओणीससें ने सुडतालीसे, समकित शुद्ध प्रकाश्युं रे;
श्रुत अनुभव वधती दशा, निज स्वरूप अवभास्युं रे" धन्य०

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.८०१)

"आत्माने ज्ञान पा लिया यह तो निःसंशय है, ग्रन्थिभेद हुआ यह तीनों कालमें सत्य बात है । सब ज्ञानियोंने भी इस बातका स्वीकार किया है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२५१)

"सम्यक्दर्शनका मुख्य लक्षण वीतरागता जानते हैं, और वैसा अनुभव है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३२२)

"विपरीत कालमें एकाकी होनेसे उदास ! ! !"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३८९)

श्रीमद्के मनमें पूरी मुंबई स्मशान

एकबार श्रीमद् घूमने गये थे । स्मशानभूमि आने पर उन्होंने अपने साथवाले व्यक्तिसे पूछा – "यह क्या है ?" उस व्यक्तिने उत्तर दिया–"स्मशान ।" श्रीमद्ने कहा– "हम तो सारी बंबईको स्मशानके समान देखते है ।"

-जीवनकला (पृ.१३३)

"सकळ जगत ते एठवत्,
अथवा स्वप्न समान ।
ते कहीए ज्ञानीदशा,
बाकी वाचाज्ञान"

आत्मसिद्धि गाथा ॥१४०॥

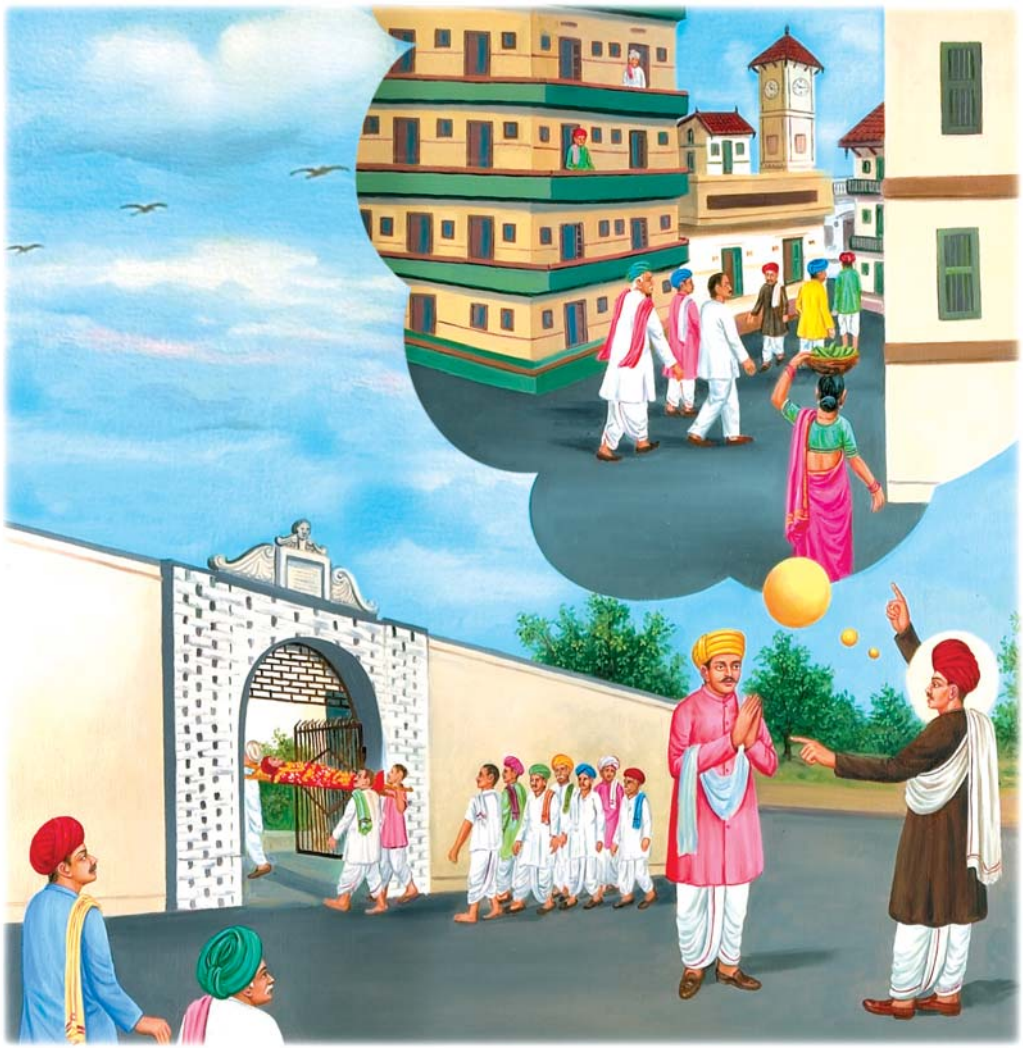

जिसने समस्त जगतको जूठनके समान जाना है, अथवा जिसे ज्ञानमें जगत स्वप्नके समान लगता है, वह ज्ञानीकी दशा है; बाकी मात्र वाचाज्ञान अर्थात् कथनमात्र है ।" ॥१४०॥ -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ५६६)

वर्ष २४ **श्रीमद् राजचंद्र** वि.सं. १९४८

भगवान महावीरका जुलुस (वरघोडा)

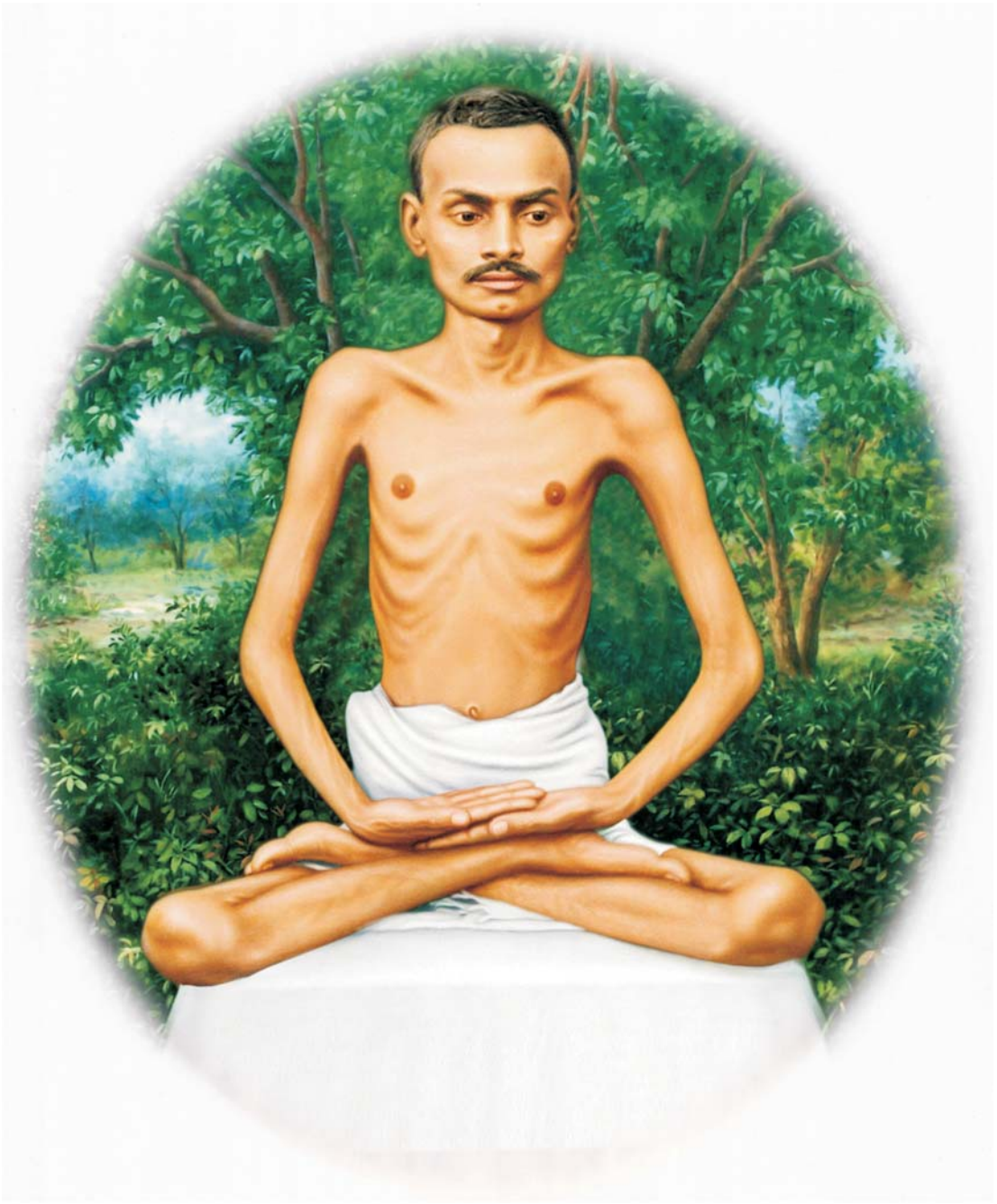

वर्ष ३३ **श्रीमद् राजचंद्र** वि.सं.१९५६

अंतरंग अद्‌भुत आत्मदशाका आलेखन

⟸ संवत् १९५२में भगवान महावीरकी जन्म जयन्तिके दिन झवेरी बाज़ारमें वरघोडा निकला । उसे अपनी दुकानके बाहरसे परमकृपालुदेवने देखा । उसी दिन अपनी अंतरंग अद्‌भुत आत्मदशाका आलेखन आत्मार्थी जीवोंके कल्याणके लिये अपनी निजी डायरीमें श्रीमद्‌ने किया । उस लिखानकी शुरुआत नीचे मुजब थी –

ॐ मुम्बई, चैत्रवद १३, १९५२

"जिसकी मोक्षके सिवाय किसी भी वस्तुकी इच्छा या स्पृहा नहीं थी और अखंड स्वरूपमें रमणता होनेसे मोक्षकी इच्छा भी निवृत्त हो गयी है, उसे हे नाथ ! तुम तुष्टमान होकर भी और क्या देनेवाले थे ? हे कृपालु ! तेरे अभेद स्वरूपमें ही मेरा निवास है... ॐ श्री महावीर (निजी)" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.५०५)

'सहजात्मस्वरूप परमगुरु' मंत्रका उद्‌भव

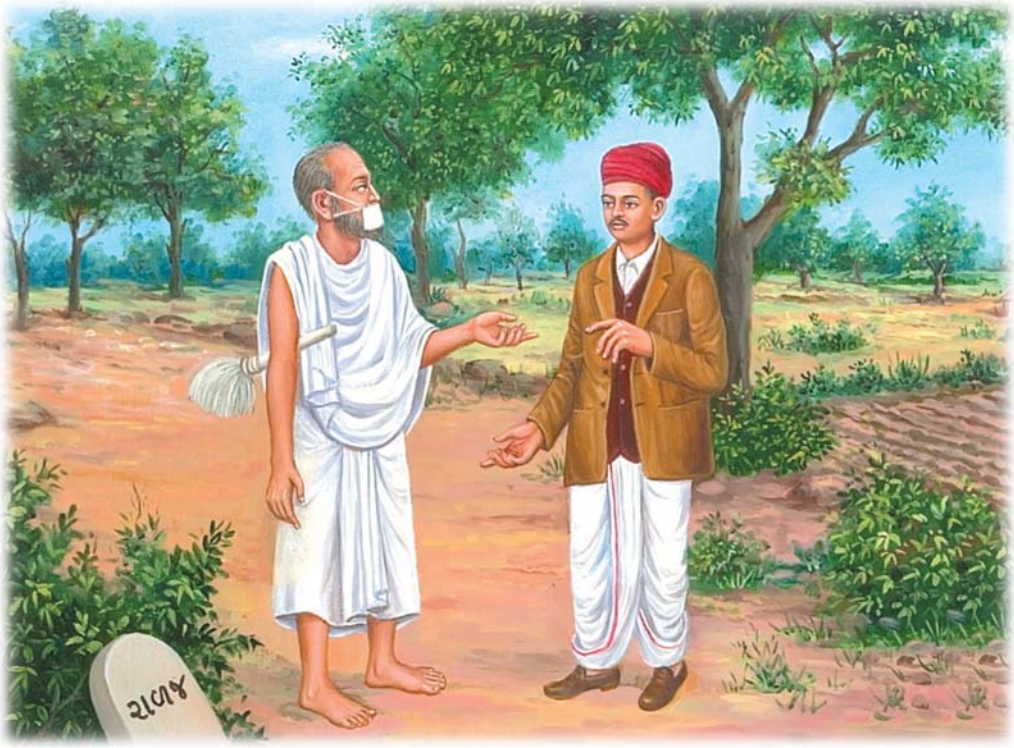

संवत् १९५२में खंभातके पास आये हुए राळज गाँवमें श्रीमद् एकांत निवृत्तिके लिये ठहरे थे । वहाँ मुमुक्षुओको बोध भी देते थे । वह जानकर श्री लघुराजस्वामी (श्री लल्लुजी मुनि) खंभातसे चलते चलते राळजके गाँवके बाहर तक पहुँच गये । फिर एक आदमीको भेजकर श्री अंबालालभाईको बुलाया और श्रीमद्‌की आज्ञा लानेके लिये कहा ।

जैन मुनि चातुर्मासमें विहार करके दूसरे गाँव जा नहीं सकते ऐसा आचार है । इसलिये श्रीमद्‌ने अंबालालभाईके द्वारा कहलवाया कि मुनिश्रीके मनमें असंतोष रहता हो तो मैं उनके पास आकर दर्शन करवाउं और उनके दिलमें शांति रहे तो वापिस चले जाये ।

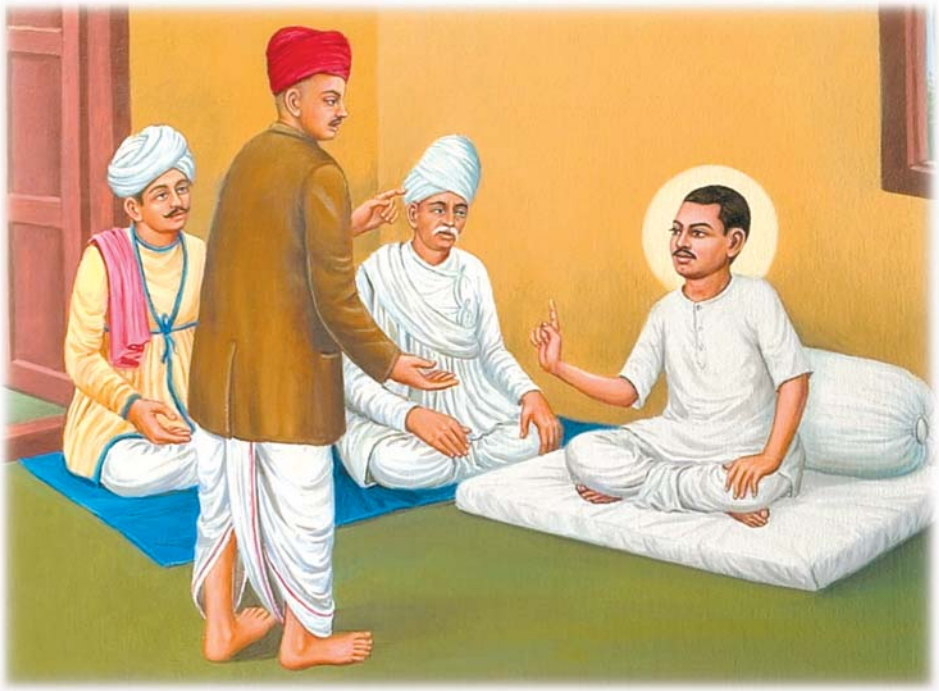

" 'सत्' में प्रीति, 'सत्' रूप संतमें परम भक्ति, उसके मार्गकी अभिलाषा, यही निरंतर स्मरण करने योग्य है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२८४)

आज्ञाका पालन यही धर्म

'मेरेसे आज्ञाका पालन हो ऐसा करना है'' इसलिये मैं वापिस चला जाता हूँ ऐसा कहकर खेदखिन्न होकर आँखोमेंसे गिरते आँसूके साथ श्री लघुराज स्वामी वापिस खंभात पहुँचे और वह रात्रि बड़ी मुश्किलसे व्यतीत की ।

दूसरे दिन सुबह श्री अंबालालभाई, श्री सोभागभाई और श्री डुंगरशीभाईको राळजसे श्रीमद्ने खंभात भेजा ।

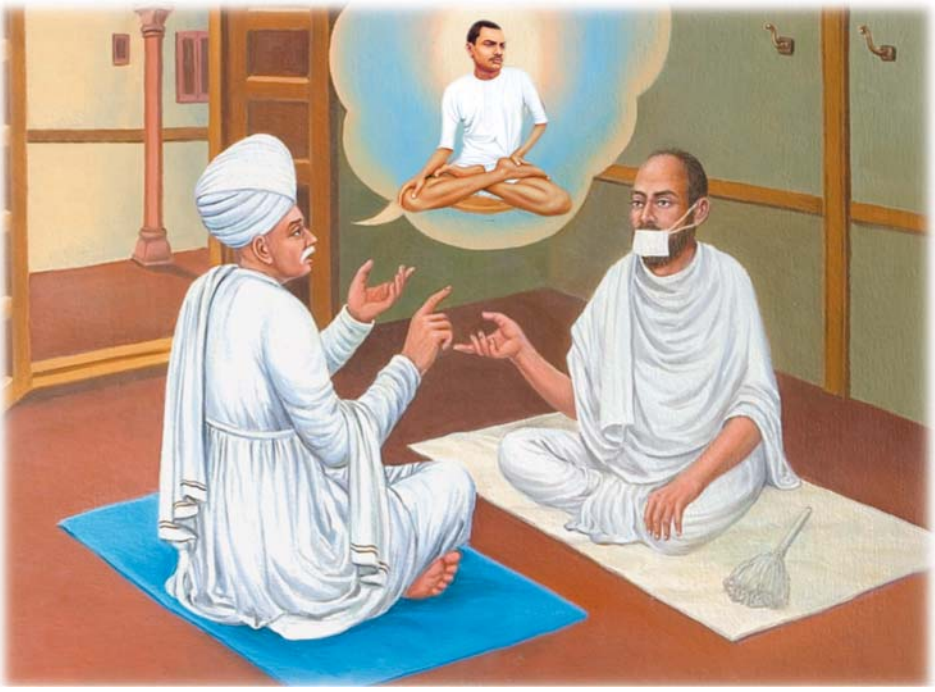

'सत्संग आत्माका परम हितैषी औषध है ।'' -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७८)

मंत्र मिलने पर महाशांति

श्री सोभागभाईने उपाश्रयमें जाकर श्री लघुराज स्वामीको आश्वासनके रूपमें कहा कि 'परमकृपालुदेव आपको समागम करायेंगे और आपको कहने योग्य जो बात कही है वह आपको अकेलेमें ही बतानी है ।' इसलिये श्री अंबालालभाईके घर पर जाकर दोनों एकांतमें बैठे ।

श्री सोभागभाईने श्रीमद्का बताया हुआ मंत्र कह सुनाया और पाँच मालाएँ रोज गिननेकी आज्ञा दी है ऐसा कहा । श्री लघुराज स्वामीको इससे बड़ा संतोष हुआ और परमकृपालुदेवका समागम होगा ऐसा जानकर बड़ी खुशी हुई ।

श्रीमद्का राळजसे रथमें वडवा आगमन

"श्री लल्लुजीमुनिके समागमसे दूसरे पाँच मुनियोंको भी श्रीमद्के प्रति प्रेम जागृत हुआ था, इसलिये खंभातके पास वड़वामें उनके पधारनेके निश्चित समाचार मिलते ही छहों मुनि उनके स्वागतके लिये गये थे । -जीवनकला (पृ.१८२)

"रालजसे श्रीमद् तथा श्री सोभाग्यभाई रथमें बैठकर आ रहे थे । मुनियोंको देखते ही श्री सोभाग्यभाई रथमेंसे उतर गये और वडवाके मकान तक मुनियोंके साथ-साथ चले ।" -जीवनकला (पृ.१८२)

समागमका विरह असह्य

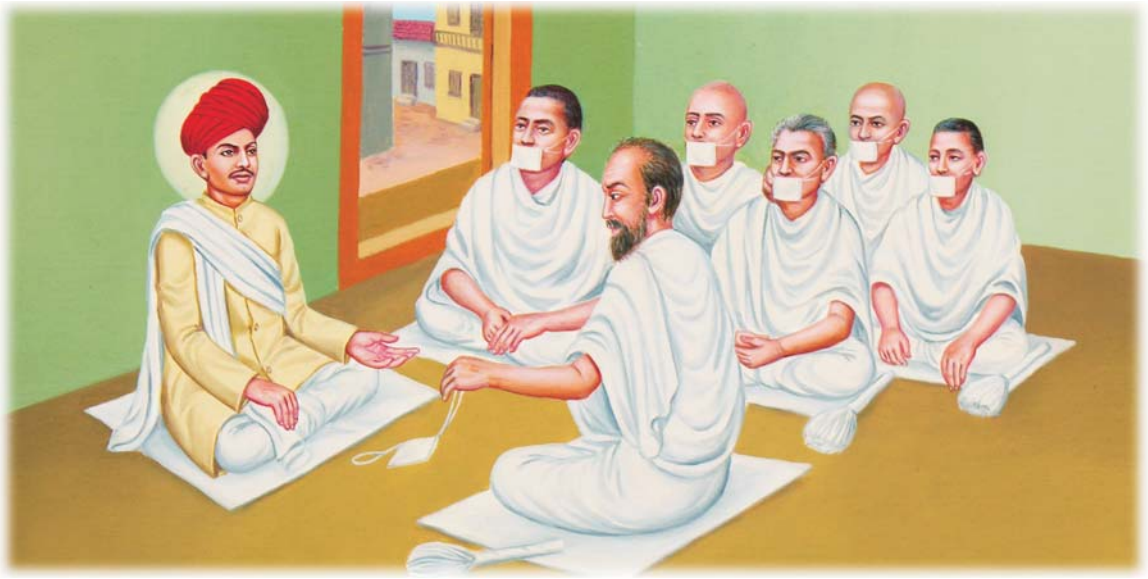

"श्री लल्लुजीका हृदय भर आया और बोले–"हे नाथ ! आपके चरणकमलमें मुझे निशदिन रखिये । यह मुँहपत्ती मुझे नहीं चाहिये ।" ऐसा कहकर उन्होंने श्रीमद्के आगे मुँहपत्ती डाल दी और आँख भर जानेसे गद्गद वाणीसे बोले–"मुझसे समागमका विरह सहन नहीं होता ।" -जीवनकला (पृ.१८२)

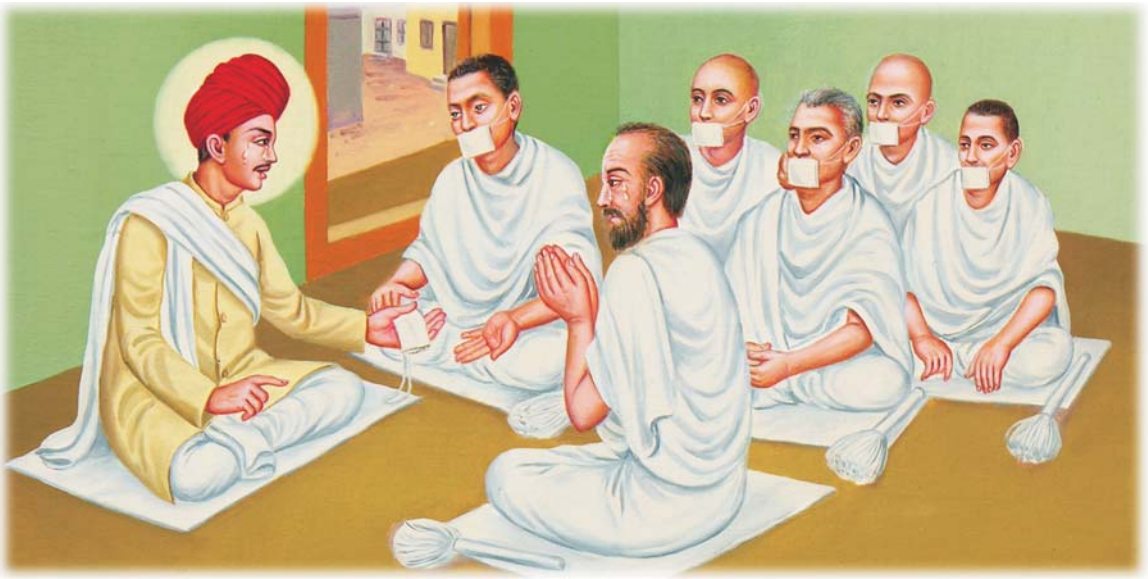

"यह दृश्य देखकर श्रीमद्का कोमल हृदय भी रो पड़ा, उनकी आँखोसे सतत अश्रुधारा बहने लगी–किसी तरहसे भी रुके नहीं । श्री लल्लुजी स्वामीके मनमें भी ऐसा हुआ कि मैंने यह क्या किया ? अहो ! भक्तवत्सल भगवान् ! मुझसे अविनय, अपराध हुआ होगा ? अब क्या करूँ ? इत्यादि पश्चात्तापके विचारमें वे लीन हो गये । सभी आश्चर्यचकित होकर मौन बैठे रहे । लगभग घंटे तक ऐसी उदासीन, मौन स्थितिमें रहनेके बाद श्रीमद्ने श्री देवकरणजी मुनिसे कहा–"यह मुँहपत्ती श्री लल्लुजीको दो । अभी रखो ।" -जीवनकला (पृ.१८२)

"जब (सत्पुरुषकी) पहचान होती है, तब जीवको कोई ऐसा अपूर्व स्नेह आता है, कि उस मूर्तिके वियोगमें एक घड़ी भर भी जीना उसे विडंबनारूप लगता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२७१)

छूटनेके स्थान पर बंधन हो वह भयंकर है

वडवामें परमकृपालुदेव वटवृक्षके नीचे मुनिओ एवं मुमुक्षुओको कुलमतके आग्रहको छोड़नेका उपदेश दे रहे थे। दूसरोके प्रश्नोका उत्तर उपदेशमें ही मिल जाता था। वहाँ पर एक गटोरभाई नामके व्यक्तिने क्रोधसे हाथ लंबाकर धुजते हुए कहा : "मुँहपत्ती बाँधकर बोलना चाहिये। श्रीमद्ने कहा कि शास्त्रमें मुँहपत्तीका विधान है लेकिन दोरेसे मुँह पर बाँधकर रखनेका विधान नहीं है। फिर कहा—जो भी कहना हो वह शांतिसे कहना चाहिए। जिस स्थान पर मुक्त हो सके वही पर जीव नया बंधन करे तो फिर दूसरे कौनसे स्थान पर कर्मोसे मुक्ति मिलेगी। इसके बारेमें श्रीमद्जी कहते है—

"जिस जीवको अनन्तानुबन्धीका उदय है उसको सच्चे पुरुषकी बात सुनना भी नहीं भाता।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७०६)

"ज्ञानीपुरुषकी अवज्ञा बोलना तथा उस प्रकारके प्रसंगमें उमंगी होना, यह जीवके अनंत संसार बढ़नेका कारण है, ऐसा तीर्थंकर कहते है।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३५०)

पश्चात्तापसे आत्मशुद्धि

परमकृपालुदेव समुद्रकी ओर घूमनेके लिये गये थे । तब श्री अंबालालभाईने उनको पूछा कि ढुंढक मतके आग्रही गटोरभाई मोतीचंद सभामें आपके सामने कषायभावमें आकर बहोत बोल उठे थे । तब साहेबजीने कहा कि थोड़े समयमें वह सत्य मार्गको पायेंगे, इसलिये तुम सब उसकी निंदा मत करना, मनमें विक्षेप भी मत रखना । उसके लिये उसको बहुत ही पश्चात्ताप होगा ।

"जगत आत्मस्वरूप माननेमें आये, जो हो वह योग्य ही माननेमें आये, परके दोष देखनेमें न आये, अपने गुणोंकी उत्कृष्टता सहन करनेमें आये तो ही इस संसारमें रहना योग्य है, दूसरी तरहसे नहीं ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३१३)

मुनिश्री देवकरणजीके व्याख्यानमें ज्ञानीकी आशातनाके बूरे हालका वर्णन सुनकर गटोरभाई हाथ जोडकर रोने लगे । मैंने साहेबजी पर आक्षेप कर कर्म बाँध लिये । अब मैं किस प्रकारसें छूटकारा पाउंगा ? तब मुनिश्रीने बताया कि सच्चे हृदयसें पश्चात्ताप करने पर कर्मोसे छूट सकोगे । और अंबालालभाई वगेरह के समागममें जाते रहना जिससे वे अंबालाल-भाई के समागममें प्रतिदिन आते रहते थे ।

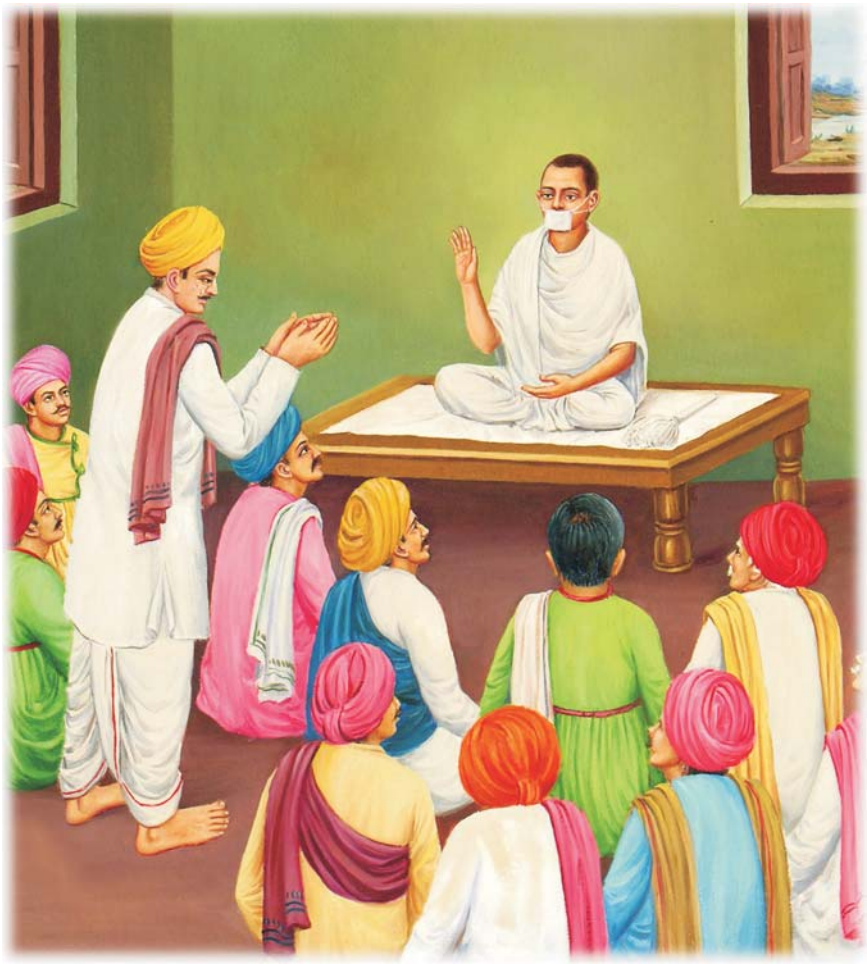

श्रीमद्ने भी पुष्पमालामें कहा है कि–

"कुछ अयोग्य हुआ हो तो
पश्चात्ताप कर और शिक्षा ले ।"
-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७)

वडवा तीर्थकी भविष्यवाणी

१) उस समय परमकृपालुदेवने भविष्यवाणी की थी कि यह सुवर्णभूमि है यहाँ पर चंद्रप्रभस्वामीकी स्थापना होगी । उसी स्थान पर वर्तमानमें यह श्रीमद् राजचंद्र आश्रम नामका वडवा तीर्थ बना है ।

२) जिस मकानके उपर श्रीमद् रहे थे उसी मकानके उपरके कमरेकी बारीमेंसे श्री अंबालालभाई आदि मुमुक्षुओको सामनेकी जगहकी ओर अंगुली निर्देश करके परमकृपालुदेवने कहा कि 'यह सुवर्ण भूमि है, यहाँ पर चंद्रप्रभ स्वामीकी स्थापना होगी ।'

३) जिस मकानके उपर श्रीमद् रहे थे वही पतरेवाला उपरका कमरा है । जिसके बाजुमे ही पानीकी बावडी (वाव) आई हुई है । उस समय यह वडवा बिलकुल निर्जन स्थान था ।

"ईडर और वसोके शांत स्थान याद करनेसे तद्रुप याद आ जाते हैं । तथा खंभातके पास वडवा गाँवमें ठहरे थे, वहाँ बावडीके पीछे थोड़े ऊँचे टीलेके पास बाड़के आगे जाकर रास्ता, फिर शांत और शीतल अवकाशका स्थान था । उन स्थानोमें स्वयं शांत समाधिस्थ दशामें बैठे थे, वह स्थिति आज उन्हें पाँच सौ बार स्मृतिमें आयी है । दूसरे भी उस समय वहाँ थे । परन्तु सभीको उस तरहका याद नहीं आता । क्योंकि वह क्षयोपशमके आधीन है । स्थल भी निमित्त कारण है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७८२)

उपदेश सुननेकी तीव्र इच्छा

श्री छोटालाल माणेकचंद कहते है कि–

सं. १९५२के आसोज महीनेमें परमकृपालुदेव खंभात पधारे तब मेरे मकानमें १८ दिनकी स्थिरता की थी। साहेबजी जब उपदेश देते थे उस वक्त मेरा मकान श्रोताजनोसे भर जाता था। प्रत्येक हॉलमें लोग बैठे होनेसे पैर रखने तककी जगह भी रहती नहीं थी। इस कारण बहोतसें लोग मकानके बाहर नीचे खड़े खड़े उपदेश सुनते थे। प्रश्न पूछना है ऐसा सोचकर आए हुए लोगोका सब समाधान उपदेशमें ही हो जाता था। जिससे लोग आश्चर्य सहित आनंद पाकर सोचते थे कि हमारे मनके भाव उनके जाननेमें न आ गए हो!

"उपदेशकी आकांक्षा रहा करती है ऐसी आकांक्षा मुमुक्षु जीवके लिये हितकारी है, जागृतिका विशेष हेतु है।"

-श्रीमद् राजचंद्र (पृ.४०५)

"किसी साधुने एक महिना उपवास किया था । कृपालुदेव उस वक्त आणंदमें थे । उस साधुके वंदन हेतु बहोत लोग आणंद होकर खंभात जाते थे । कृपालुदेवने उस वक्त इस 'मूळमार्ग' पद्यकी रचना की और कहा कि 'मूळमार्ग' तो यह है और तुम मानते हो वह कुळमार्ग है । (बो.-२ पृ.३३)

इसके बारेमें श्री पोपटलाल गुलाबचंद खंभातवाले बताते है कि–जिस वक्त आणंदमें स्टेशनके सामने आई हुई प्रेमचंद मोतीचंदकी धर्मशालामें कृपालुदेव बिराजमान थे तब मेरे भाई नगीनदासको उन्होंने कहा कि लो यह 'मूळमार्ग' तुम्हारे मामाको देना और कहना कि जैनमार्ग इस प्रकारसे है ऐसा कहकर विस्तारसे मूळमार्गका अर्थ बताया था ।

"मूळ मारग सांभळो जिननो रे, करी वृत्ति अखंड सन्मुख; मूळ मारग०
नोय पूजादिनी जो कामना रे, नोय व्हालुं अंतर भवदुःख. मूळ मारग०"

अर्थ : भगवानके द्वारा कहे हुए मूलमार्गको, अपनी वृत्ति को स्थिर करके सुनिये, मार्ग बतलानेमें हमें मानपूजा आदिकी कोई कामना नहीं है । अगर गलत मोक्षमार्ग बतलाए तो संसारका दुःख बढता है । इसलिये वैसा करना हमें पसंद नहीं है ।

तुम्हारे नमस्कार चौदह राजलोकमें बिखेर देना है

खंभातके श्री पोपटलाल गुलाबचंद बताते है कि–

परमकृपालुदेव आणंद धर्मशालामें बोध देते थे तब साणंदके भाई मोतीभाई दर्शनार्थ आये थे। उनको चौदह प्रश्न पूछने थे वे सब अपनी पघड़ीमें खोस रखे थे। उनके बगैर पूछे ही चौदह प्रश्नोका समाधान परमकृपालुदेवने उपदेशमें ही कर दिया। जिससे वे खड़े होकर परमकृपालुदेवको हाथ जोड़कर बोलने लगे कि आप तो प्रभु है इत्यादि बहुत ही प्रशंसा की, फिर बैठ गये। मनमें ऐसा विचार आया कि यह पुरुष तो गृहस्थावासमें है इसलिये उनको नमस्कार कैसे करे? ऐसा उसके मनमें आते ही परमकृपालुदेवने कहा कि तुम्हारे नमस्कार हमें नहीं चाहिये। उसका कुछ भी पैसा मिलता नहीं है और हमको कोई पूजा या मान्यता करवानेकी इच्छा नहीं है। तुम्हारे नमस्कार चौदह राजलोकमें बिखेर देना है–इत्यादि बहोत उपदेश किया था।

'जिसने सारे जगतका शिष्य होनेरूप दृष्टिका वेदन नहीं किया वह सद्गुरु होने योग्य नहीं है।'' –श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१६०)

श्री आत्मासिद्धि शास्त्रका मांगलिक सर्जन

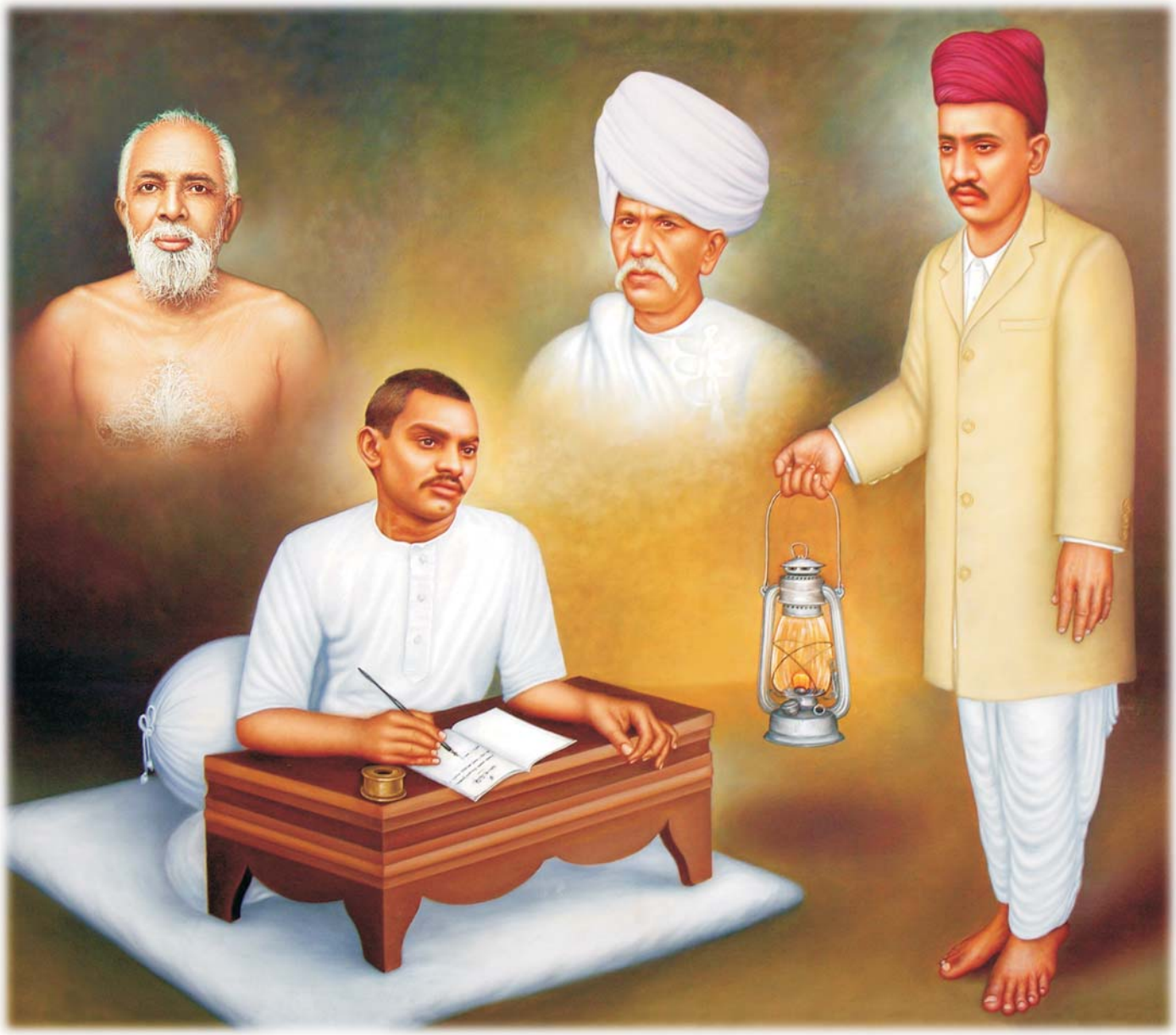

कृपालुदेव सं. १९५२में खंभात पधारे तब श्री सोभागभाई भी आये थे । प.पू. प्रभुश्रीजीकी प्रेरणासे श्री सोभागभाईने कृपालुदेवसे विनंति की कि—यह छ पदका पत्र याद रहता नहीं है इसलिये काव्यके रूपमें हो तो मुखपाठ हो जाय । इस बातके बीस दिन बाद कृपालुदेवने घण्टे ड़ेढ घण्टेमें १४२ गाथाओकी इस आत्मसिद्धिकी रचना नडियाद गाँवमे की । (बो.-२ पृ.३०६)

"एक दिन श्रीमद् बाहर घूमने गये थे वहाँसे बंगलेपर वापस आये तब शाम ढल चुकी थी । लालटेन मँगवाकर श्रीमद् लिखने बैठे और श्री अंबालालभाई लालटेन थामकर खड़े रहे । कलम चली । एक सौ बयालीस गाथाएँ पूरी होने तक श्री अंबालालभाई हाथमें लालटेन थामे चिरागदानकी भाँति खड़े रहे। -जीवनकला (पृ.१९०)

"शरद पूर्णिमाके दिन जो मेघबिंदु सीपके मुखमें पड़ता है वह मोतीरूप बन जाता है; उसी तरह यह विनती ऐसे समयमें और ऐसे पुरुष द्वारा हुई कि वह श्रीमद्के हृदयमें आत्मसिद्धिरूपी अमूल्य मोती उत्पन्न करनेमें समर्थ हुई । तथा सं०१९५२ की शरद पूर्णिमाके दूसरे दिन मुक्तिमार्गके प्रवासी श्रीमद् राजचंद्रने जिस आत्मस्वरूपका निरंतर प्रत्यक्ष उनको स्वसंवेदन था उसे आबालवृद्ध समझें वैसी सरल भाषामें श्री आत्मसिद्धिशास्त्र द्वारा पद्यात्मकरूपसे प्रगट किया ।" -जीवनकला (पृ.१९१)

श्री आत्मसिद्धि शास्त्रका माहात्म्य

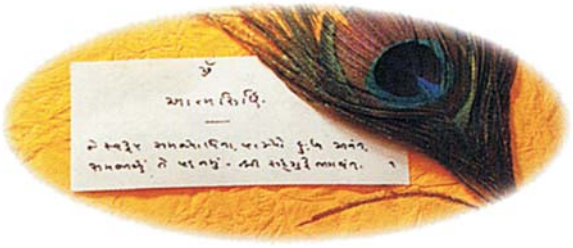

(परमकृपालुदेव, प.पू. प्रभुश्रीजी और पू.श्री ब्रह्मचारीजी के शब्दोमें)
'आत्मसिद्धिशास्त्र' विशेष विचार करने योग्य है। (व.पृ.५६८)

" 'आत्मसिद्धि' ग्रन्थके संक्षिप्त अर्थकी पुस्तक तथा कितने ही उपदेश-पत्रोंकी प्रति यहाँ थी, उन्हें आज डाकसे भेजा है। दोनोंमें मुमुक्षु जीवके लिये विचार करने योग्य अनेक प्रसंग है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६१५)

" 'आत्मसिद्धि' ग्रन्थ आप अपने पास रखें। त्रंबक और मणि विचार करना चाहे तो विचार करें; परन्तु उससे पहले कितने ही वचन तथा सद्ग्रन्थोंका विचारना बनेगा तो 'आत्मसिद्धि' बलवान उपकारका हेतु होंगी, ऐसा लगता है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६१७)

" 'आत्मसिद्धि' मिल गयी तो सब मिल गया, कुछ शेष नही रहा।" (उ.पृ.४३६)

" 'आत्मसिद्धि' क्या ऐसी वैसी है? एक गाथा पर विचार करे तो काम बन जाय।" (उ.पृ.४५७)

" 'आत्मसिद्धि' चमत्कारिक है, लब्धियोंसे परिपूर्ण है। मंत्र समान है। माहात्म्य समझमें नहीं आया है। फिर भी प्रतिदिन पाठ किया जाय तो काम बन सकता है।" (उ.पृ.३५९)

" 'श्री आत्मसिद्धि'में आत्माका गुणगान है। उसमें किसी धर्मकी निंदा नहीं। सभी धर्मोंको माननेवालोके लिये विचारणीय है। हमें भी यदि आत्माकी पहचान करनी हो तो उसका वारंवार चिंतन करना चाहिये। चौदह पूर्वका मर्म इसमें भरा है।" (उ.पृ. १०१)

" 'आत्मसिद्धि' मोतीके हार जैसी है। भावसे इसे पढ़े तो कोटी कर्मका क्षय हो जाय।" (बो.-१ पृ.२९३)

"प्रतिदिन 'आत्मसिद्धि' बोलीये। आत्मसिद्धिको रोज विचारनेसे इस देहमें आत्मा है, पता चलेगा।"

(बो.-१ पृ.२८६)

" 'आत्मसिद्धि' और 'मोक्षमाला'में कृपालुदेवको जो कहना है वह सब कह दिया है।" (बो.-१ पृ.३०)

"इसकालमें जीवोका आयुष्य कम होनेसे सब शास्त्रोका सार कृपालुदेवने 'आत्मसिद्धि'में बता दिया है।"

(बो.-१ पृ. २७०)

" 'आत्मसिद्धि'में सब शास्त्रोंका सार है, अपूर्व ग्रंथ है, इस कालमें परमात्मदशा पाकर कृपालुदेवने इस ग्रंथकी रचना की है। इसमें छ दर्शनका समावेश है।" (बो.-१ पृ.१२६)

" 'आत्मसिद्धि' चमत्कारिक चीज है, सबसे उठाकर आत्माके उपर ला रखे ऐसी आत्मसिद्धि है।" (बो.-२ पृ.३११)

" 'आत्मसिद्धि'में से मुझे आत्मा प्रकट करना है ऐसा लक्ष्य रखे तो बहुत काम बन जाय ऐसा है। वास्तविक सुखका मार्ग दिखाया है।" (बो.२ पृ.३०८)

"जिस प्रकार 'मोक्षमाला' धर्मकी जिज्ञासा उत्पन्न करनेके उद्देश्यसे लिखी गई है, उसी प्रकार 'आत्मसिद्धि शास्त्र' आत्माका निर्णय कराकर आत्मज्ञान प्रगट करानेके उत्तम उद्देश्यसे लिखा गया है।" -जीवनकला (पृ.१९३)

"चौदह पूर्वमें मध्यका–सातवाँ पूर्व 'आत्मप्रवाद' नामका है। उन सब पूर्वके साररूप 'श्री आत्मसिद्धिशास्त्र'की रचना श्रीमद्ने आत्मस्वरूपका अनुभव करके सुगम शैलीमें मध्यस्थतासे की है।" -जीवनकला (पृ.२१०)

" 'आत्मसिद्धि' शास्त्र मात्र गानेके लिये ही नहीं लेकिन विचारनेके लिये है। आत्मार्थीके लक्षण कहनेके बाद इसमें छ पदकी बात शुरु होती है। पहले शिष्य शंका करता है कि 'आत्मा नहीं है' फिर सद्गुरु 'आत्मा है' ऐसा समाधान करते है–इसी प्रकार छ पद पूरे शंका समाधानके रूपमें समजाया है। इसकालमें बहोतसे शास्त्र है लेकिन 'आत्मसिद्धि' जैसा सरल भाषामें कृपालुदेवने लिखा है ऐसा कोई शास्त्र नहीं है।" (बो.२ पृ.३०७)

सेवाभावी श्री अंबालालभाई

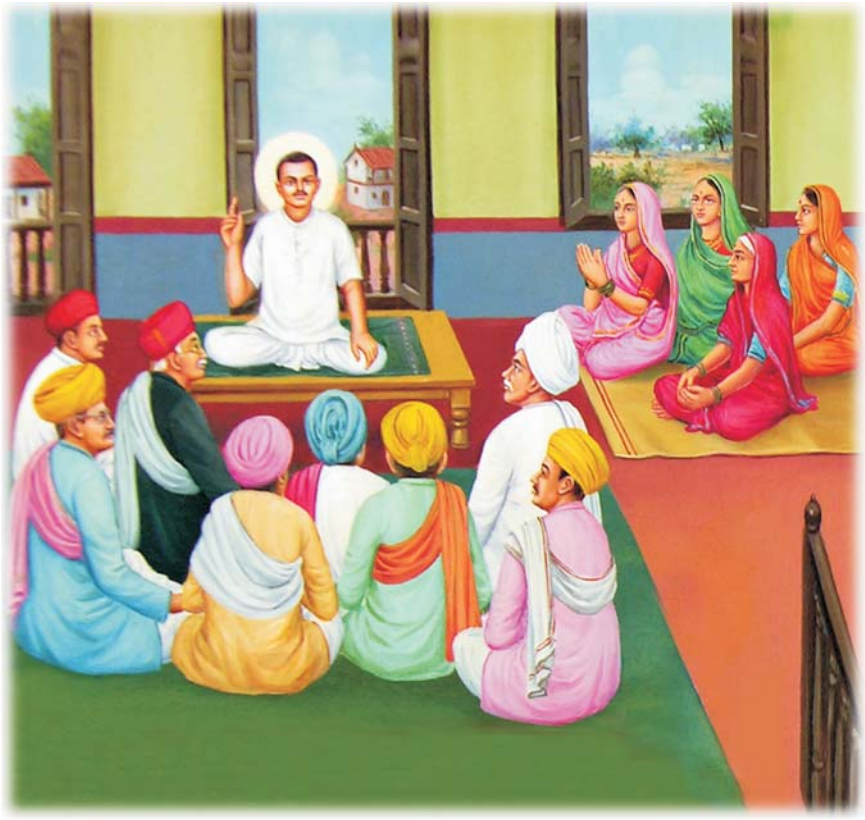

सं. १९५४में दूसरी बार श्रीमद् काविठा पधारे । तब भी उनका निवास श्री झवेरभाई शेठके मकानकी पहली मंजिल पर ही था । श्रीमद् प्रतिदिन सुबह, दोपहर और रात्रिमें उपदेश देते थे ।

उपदेशमें श्रीमदजीने कहा :

"देहकी जितनी चिंता रखता है उतनी नहीं परन्तु उससे अनन्त गुनी चिंता आत्माकी रख, क्योंकि अनंत भवोंको एक भवमें दूर करना है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२०२)

समय समय पर गाँवके बाहर जाकर वृक्षके नीचे या तालाबके किनारे पर बैठकर श्रीमद् ध्यान करते थे ।

उनकी रसोई इस बार श्री अंबालाल-भाई बनाते थे । श्री अंबालालभाई श्रीमद्की रसोई जहाँ बनाते थे वह मकान श्रीमद्के निवाससे थोड़ा दूर था । फिर भी श्रीमद् जो उपदेश देते थे वह रसोई बनाते हुए भी अंबालालभाईकी स्मृतिमें आता था और दूसरे दिन भी वे उस उपदेशको लिखकर ला सकते थे । ऐसी उनको लब्धि प्राप्त हुई थी । श्रीमद्को समय पर उपयोगपूर्वक भोजन करवाकर श्री अंबालालभाई सेवाका लाभ लेते थे ।

"सेवासे सद्गुरु कृपा,
(सद्)गुरु-कृपासे ज्ञान;
ज्ञान हिमालय सब गळे,
शेष स्वरूप निर्वाण ।" (उ.पृ.३७)

श्रीमद्के दर्शन और समागमकी इच्छा

खंभातसे श्री अंबालालभाई, श्री गांडाभाई और श्री सबूरभाई परमकृपालुदेवके दर्शनार्थ अमदावाद स्टेशन पर मिलने आये थे। साहेबजी कल्लोलसे ट्रेनमें पधारे। स्टेशन उपरसे साहेबजीके लिये चाय और फल लाये। उसे देखकर श्रीमद्जीने लेनेको मना कर दिया।

श्री अंबालालभाईको विकल्प हुआ कि चाय होटलकी थी इसलिये मना किया होगा? फलकी जाँच की तो उसमें भी बिगाड नजर आया और चखने पर फलमें खट्टापन भी था ऐसा मालुम हुआ।

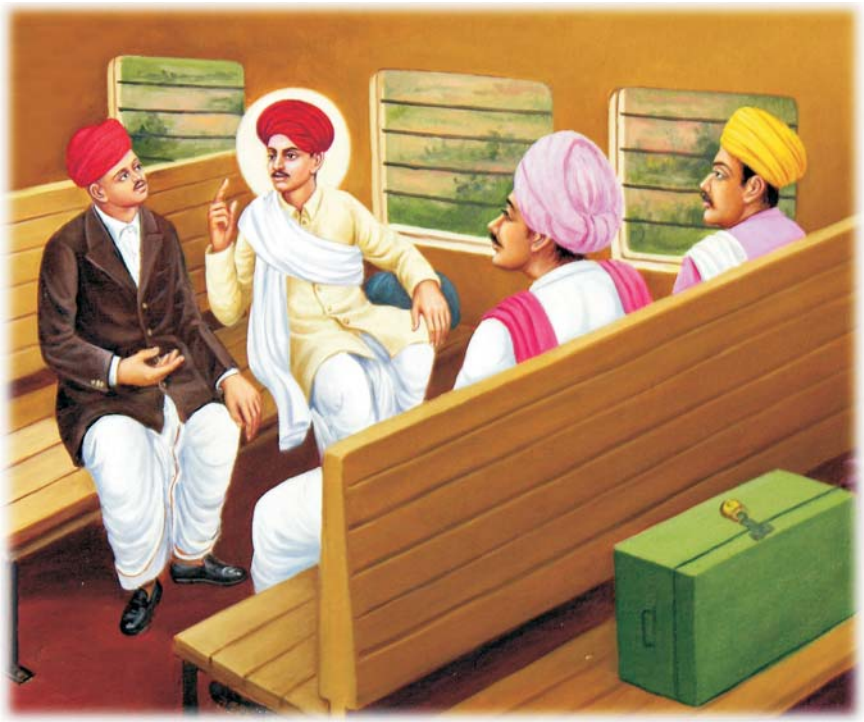

परमकृपालुदेवके साथ हम तीनो ट्रेनमें बैठे। रास्तेमें साहेबजीने श्री अंबालाल-भाईको कहा—चाय और फ्रुटके बारेमें तुमने जो अनुमान किया, वह सच है इसी कारणसे हमने मनाई की थी।

आणंद स्टेशन पर श्री गांडाभाई और सबूरभाई नीचे उतरे और श्री अंबा-लालभाई भरुच तक समागमके हेतु साथमें जाकर वहाँसे वापिस आणंद लौटे थे।

"सत्संग जैसा कल्याणका कोई बलवान कारण नहीं है, और उस सत्संगमें निरन्तर प्रति समय निवास चाहना, असत्संगका प्रतिक्षण विपरिणाम विचारना, यह श्रेयरूप है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पु. ३३८)

काविठामें गाँवके बाहर परमकृपालुदेव पेड़के नीचे बिराजमान थे । तब मुमुक्षुभाई भी साहेबजीके सामने आकर बैठे । उस वक्त वैराग्य संबंधी ऐसा अद्‌भुत उपदेश चला कि उसे सुनकर मुमुक्षु भाईयोकी आँखोमेंसे आँसु बहने लगे ।

''वैराग्य ही अनंतसुखमें ले जानेवाला उत्कृष्ट मार्गदर्शक है ।'' -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ९८)

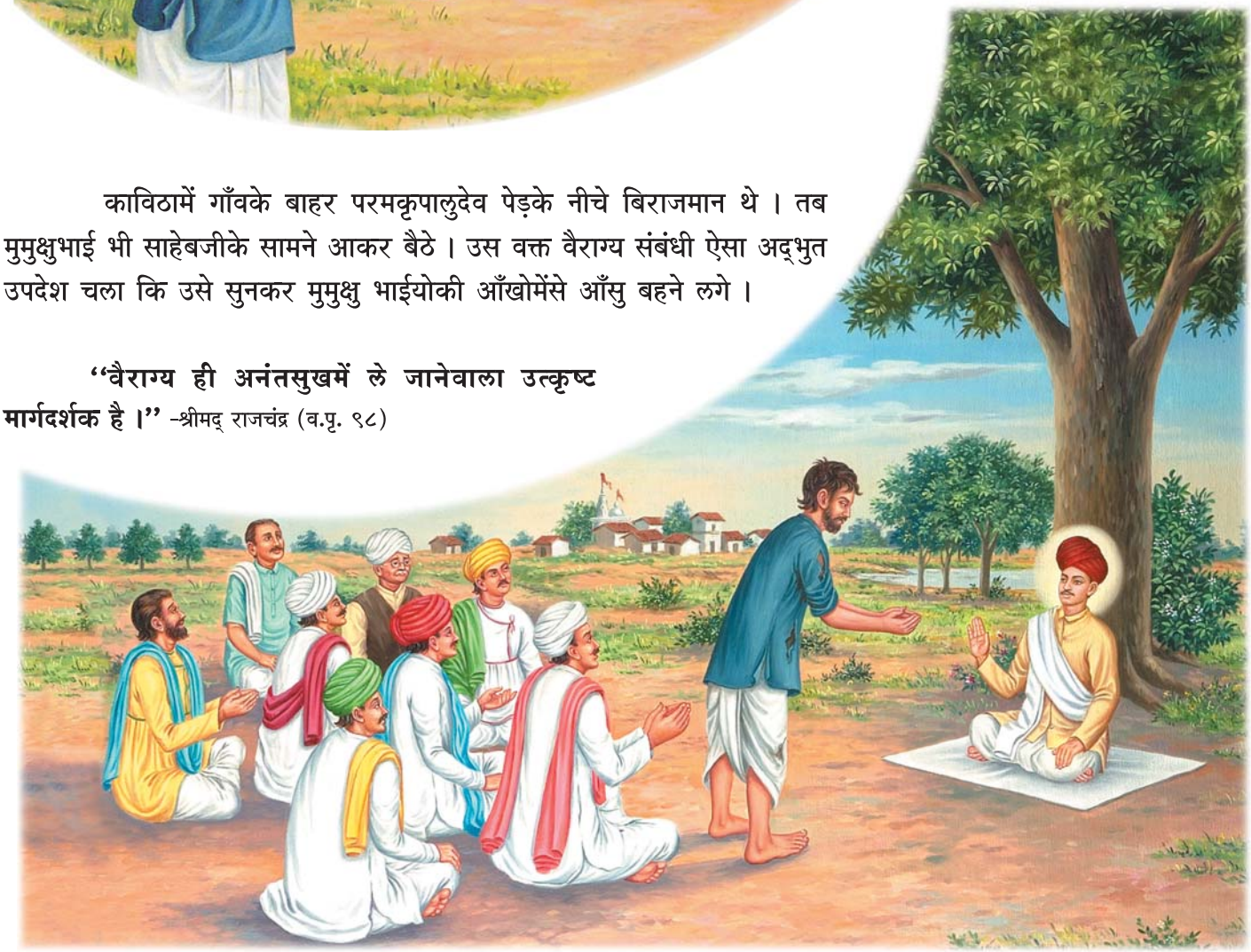

उस समय एक पागल जैसा व्यक्ति दूरसे चाहे जैसे बकवाद करता हुआ आ रहा था । उसकी ओर थोड़े मुमुक्षुओका ध्यान गया । लेकिन जब वह पागल व्यक्ति साहेबजीके नजदीकमें आ पहुँचा तब बिलकुल शांत हो गया और परमकृपालुदेवको नमस्कार करने लगा ।

छोटेसे कारणमें इतने फूलोंको नहीं तोडना

श्री व्रजदास गंगादास पटेल बताते है कि–

एकबार साहेबजी काविठा गाँवके बाहर आम्रके पेड़ नीचे मुमुक्षुओके साथ बिराजमान थे। तब मैं भी वहाँ था। वहाँसे साहेबजी दीर्घशंका निवारणके लिये गये। तब आम्रवृक्षके बाजुमें ही एक पाटीदार भाईका खेत था। वह भाई वहाँसे दूसरे गाँव जा रहे थे, लेकिन सबको बैठे हुए देखकर, अपने खेतमेंसे फूलोको तोड़के साहेबजीकी बैठक पर रख दिये और पीछे जाकर बैठ गये।

जब साहेबजी पधारे तब सायलावाले लेहराभाईने साहेबजीको अंगूलीके इशारेसे बताकर कहा कि इस भाईने फूल रखे है। तब साहेबजीने उस भाईको कहा–छोटेसे कारणमें इतने फूलोंको नहीं तोडना। फिर पूछा कि तुम्हारा नाम शामळदास है? तुम्हारे पिताजीका नाम रामदास है? तब उस भाईने कहा : हाजी।

साहेबजीने फिर कहा कि तुम अपनी पुत्री हीराकी बिमारीकी जानकारीके लिये जा रहे हो? उस भाईने कहा : हाजी। तब साहेबजीने कहा कि चिंता मत करना। धीरजसे जाना। उसे कल सुबह आराम हो जायेगा। यह सुनकर बारबार वे नमस्कार करने लगे। तब साहेबजीने हाथके इशारेसे उन्हें रोकनेकी सूचना दी।

बादमें सुबह शामळदास पुत्रीके ससुराल शिहोल गये तब उसे आराम हो गया था।

“ पुष्पपांखडी ज्यां दुभाय, जिनवरनी त्यां नहीं आज्ञाय;
सर्व जीवनुं इच्छो सुख, महावीरनी शिक्षा मुख्य ।” -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६१)

हम हमारी खोज करते है

श्री शंकरभाई अजुभाई बताते है–

एकदिन साहेबजी घूमनेके लिये पधारे । उनके साथ दूसरे मुमुक्षुभाई भी थे । साहेबजी नीचे देखकर धीर गंभीर चालसे चल रहे थे । थोडे दूर जानेपर एक बाई घासका चारा सिर पर लेकर सामनेसे आई । वह बाई ऐसा बोलतीथी कि ये बनिये लोग रोज अलग अलग स्थान पर घूमते है, कौन जाने इनका क्या खो गया है कि उसे ढूंढते है ? इस प्रकारसे बाईका बोलना सुनकर साहेबजीने उससे कहा कि बहन, हम हमारी खोज करते है ।

श्रीमद् इसके बारेमें वचनामृतमें बताते है कि–

"जीव स्वयंको भूल गया है, और इसलिये उसे सत्सुखका वियोग है, ऐसा सर्व धर्म सम्मत कथन है । स्वयंको भूल जानेरूप अज्ञानका नाश ज्ञान मिलनेसे होता है ऐसा निःशंक मानना ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२६५)

भक्ति करते हुए कौन भूखसे मर गया

एकबार श्री झवेरचंद शेठके मकानकी मंजिल पर प्रागजीभाई जेठाभाईने परमकृपालुदेवका बोध सुनकर कहा कि भक्ति तो हमें भी बहोत करनी है लेकिन पेट भगवानने दिया है वह खाना माँगता है, उसका क्या करना ? तब कृपालुदेवने कहा : "तुम्हारे पेटको हम जवाब दे तो ? ऐसा कहकर झवेरचंद शेठको कृपालुदेवने कहा कि तुम जो भोजन करते हो, वह इनको दो बार दें और पानीका घड़ा रख दें, उपाश्रयकी मंजिल पर बैठकर ये भक्ति करेंगे । लेकिन नीचेसे किसीका वरघोडा जाता हो या औरतें गीत गाती हुई जाती हो उसे देखना नहीं, संसारकी बाते करना नहीं, कोई भक्ति करने आये तो आने दे लेकिन दूसरी कुछ भी बात करना नहीं या सुनना नहीं । तब प्रागजीभाईने कहा : इस प्रकारसे तो हम नहीं रह सकते । तब कृपालुदेवने कहा कि इस जीवको भक्ति करनी नहीं है इसलिये पेटको सामने रखता है । लेकिन भक्ति करते हुए कौन भूखसें मर गया । जीव इस प्रकार अपने आपको ठगता है ।

"प्रभु भक्तिमें जैसे हो वैसे तत्पर रहना यह मुझे मोक्षका धुरंधर मार्ग लगा है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३४१)

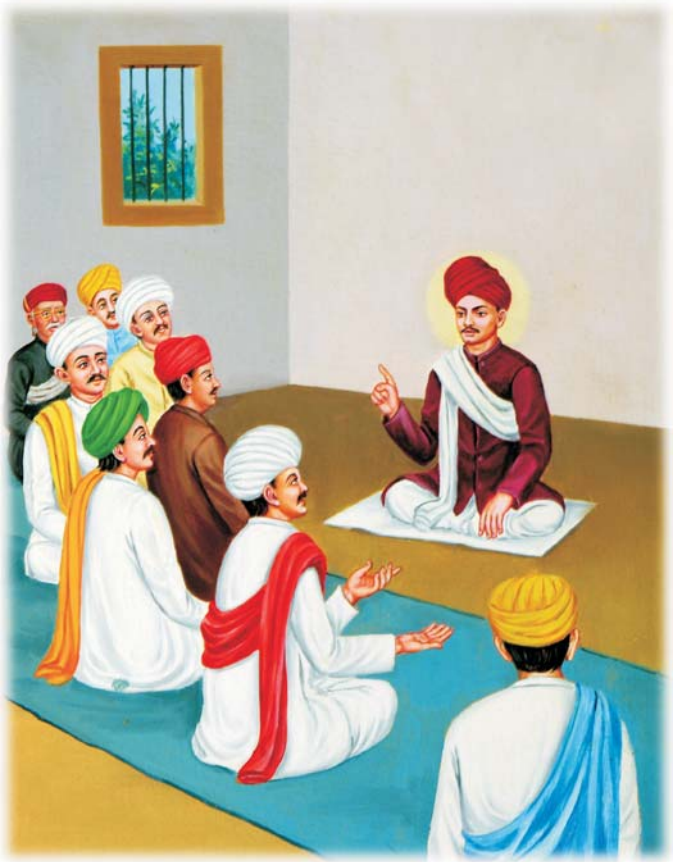

लड़कोको दृष्टांतके द्वारा उपदेश

श्री शंकरभाई अजुभाई बताते है कि– एक वक्त काविठामें स्कूलके बच्चे कृपालुदेवके पीछे जंगलमें आये। तब कृपालुदेवने उनसे पूछा : लड़को ! तुम्हारे एक हाथमें छासका लोटा हो और दूसरे हाथमें घीका लोटा हो और रास्तेमें चलते हुए किसीका धक्का लग जाय तो कौनसे लोटेकी पूरी सँभाल रखोगे ? एक लड़केने कहा : घीके लोटेकी। क्यूं ? तब कहा : छास तो कोई भी भरके देगा लेकिन घीका लोटा नहीं। उस परसे कृपालुदेवने सारांश समझाया कि घीके समान मूल्यवान यह आत्मा है, उसकी पूरी संभाल रखना और आपत्ति आने पर छास जैसे इस शरीरको जाने देना।

फिर कृपालुदेवने कहा : तुमने तरवार देखी है ! लड़कोने कहा : हा। तब कृपालुदेवने कहा : वह म्यानसे अलग है, वैसे ही तरवार जैसा आत्मा, उपरसे म्यानकी तरह शरीरके रूपमें एक दिखाई देने पर भी वह आत्मा म्यानसे तरवारकी भाँति अलग है ऐसा जानना।

फिर कृपालुदेवने पूछा : लड़को ! तुमने बकरी देखी है ? हा। रबारीके वहाँ है। ठीक है। तुमने भैंसा देखा है ? हा। भैंस जैसा होता है। फिर कृपालुदेवने बताया कि बकरी तालाब पर पानी पीनेके लिये जाती है तब बिचारी किनारे पर खड़ी रहकर पानी पी लेती है। लेकिन भैंसा पानी पीये बिना वापिस आता है। लड़कोने कहा ऐसा क्यूं ? तब कृपालुदेवने बोधरुपमें बताया कि भैंसा तालाबके अंदर जाकर पानीको हिलाकर गंदा कर देता है; इसलिये पानी पी नहीं सकता। वैसे ही कितने जीव ज्ञानीपुरुषके पास जाकर अपनी बढ़ाई हाँकते है जिससे स्वयं उपदेशको पा नहीं सकते और दूसरेको भी अंतरायरूप होते है। उनको भैंसेके समान मानना। और जो जीव सरलभावसे बोधको सुनकर ज्ञान प्राप्त करे वे बकरीके समान पानी पीनेवाले समझना।

इस प्रकार परमकृपालुदेवने, आत्मा सबमें साररूप है, वह शरीरसे अलग है, और ज्ञानीपुरुष जो भी कहे वैसे अपनी बड़ाई-स्वच्छंदको छोड़कर उनकी आज्ञा उठानेमें जीवका कल्याण है; इन बातोको दृष्टांतोसे, जैसे लड़के समझ सके इस प्रकारसे बताया था।

"देहमें विचार करनेवाला बैठा है वह देहसे भिन्न है ? वह सुखी है या दुःखी है ? उसे याद कर ले।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२०२)

माताजी, आज्ञा दे तो मुनि बनना है

कृपालुदेवने माताजीसे कहा : माताजी हमको आप आज्ञा दे तो जंगलमें जाकर साधु बनना है । यह सुनकर माताजीके आँखोमेंसे आँसू निकल पडे । दूसरी बार भी आँखोमेंसे आँसूकी धारा देखकर श्रीमद्‌जीने कहा : तुम्हें जैसा ठीक लगे वैसा करुंगा । अब मैं बोलुंगा नहीं । आप मनमें दुःख न लगाये ।''

''हमारी धारणाके अनुसार सर्वसंगपरित्यागादि हो तो हजारो मनुष्य मूळमार्गको प्राप्त करें, और हजारों मनुष्य उस सन्मार्गका आराधन करके सद्‌गतिको प्राप्त करें, ऐसा हमारे द्वारा होना सम्भव है । हमारे संगमें अनेक जीव त्यागवृत्तिवाले हो जाये ऐसा हमारे अंतरमें त्याग है ।'' -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.५२६)

निवृत्त स्थलमें आत्मसाधना

''श्रीमद्‌जी वर्षमें कितने ही महीने तो खुद बंबई छोड़कर चले जाते थे और अपनी दूकान पर कह जाते थे कि जब तक वे स्वयं न लिखें, तब तक कोई व्यक्ति उनके साथ पत्र-व्यवहार भी न करे । गुजरातके वनोंमें एकान्तवास करते थे और वहाँ रहकर चिंतन और योगमें दिन एवं सप्ताह व्यतीत करते थे ।'' -जीवनकला (पृ. १५३)

इस प्रकार व्यापारसे अनेकबार निवृत्ति लेकर काविठा, इडर, खंभात, वडवा, राळज, उत्तरसंडा, वसो आदि स्थानो पर निवास कर प्रबल आत्मपुरुषार्थसे अपना परमात्मस्वरूप प्रकट किया था ।

''देह होते हुए भी मनुष्य पूर्ण वीतराग हो सकता है ऐसा हमारा निश्चल अनुभव है । क्योंकि हम भी निश्चयसे उसी स्थितिको प्राप्त करनेवाले हैं, यों हमारा आत्मा अखण्डरूपसे कहता है; और ऐसा ही है, अवश्य ऐसा ही है ।'' -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३२६)

''परमात्माका ध्यान करनेसे परमात्मा हुआ जाता है ।'' -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१९०)

''अशरीरभाव इस कालमें नहीं है ऐसा यहाँ कहें तो इस कालमें हम खुद नहीं हैं, ऐसा कहने तुल्य है ।''

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.३६१)

हरी सब्जीको कम करके भगवानको भक्तिभावसे पुष्प चढ़ाये

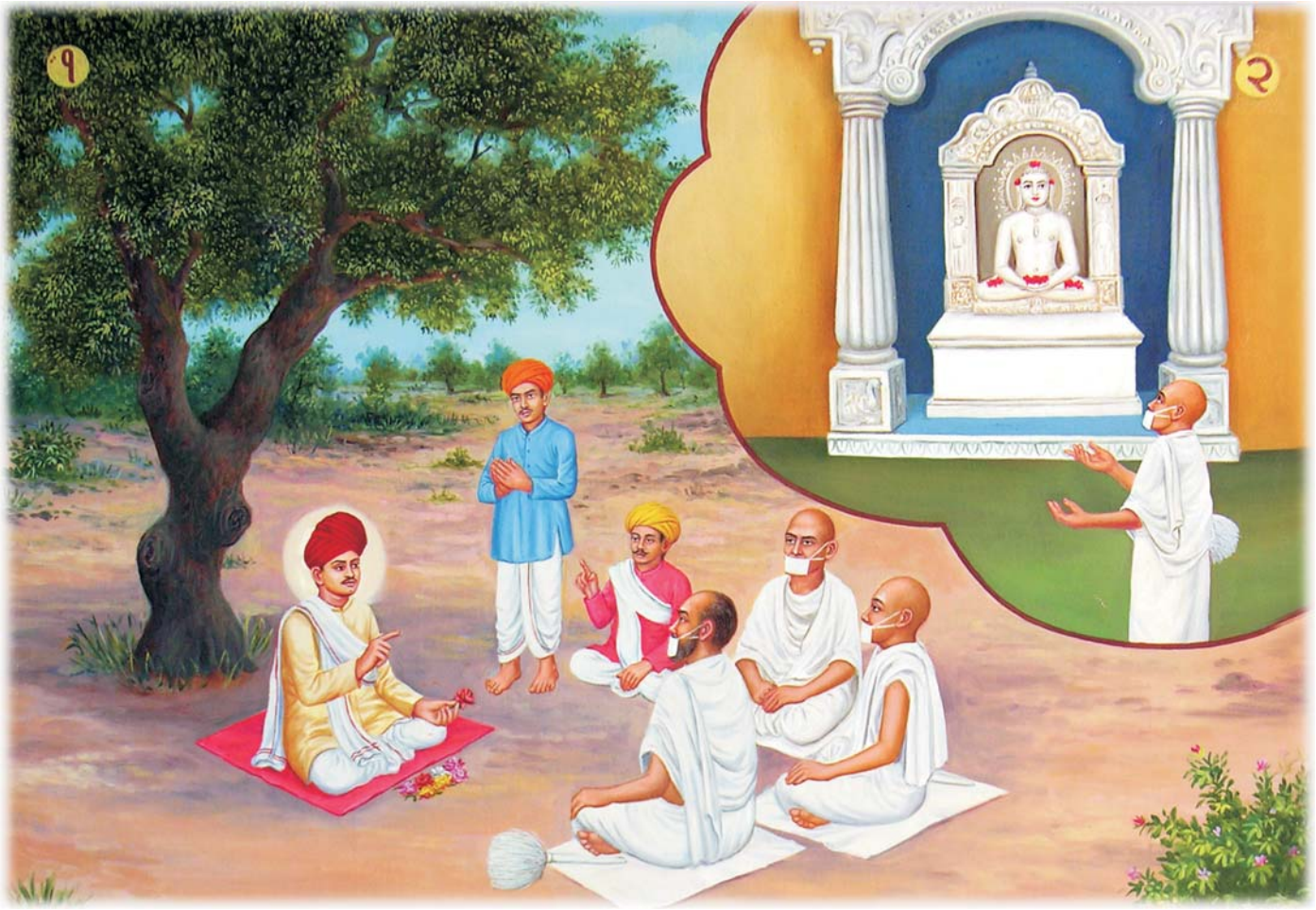

१) वसो गाँवके चरागाहमें एक खिरनीका वृक्ष आया, वहाँ परमकृपालु सहित हम साधु बैठे। समीपमें एक रास्ता निकलता था। वहाँसे एक माली पुष्प लेकर जा रहा था। उसने परमकृपालु पर स्वाभाविक प्रेम आनेसे पुष्प उनके आगे रख दिये। तब मुमुक्षु मूलजीभाईने एक आना उस मालीको दिया। फिर परमकृपालुने उन पुष्पोमेंसे एक पुष्प लेकर कहा कि जिस श्रावकने हरी वनस्पति खानेका सर्वथा त्याग किया हो वह भगवानको पुष्प नहीं चढ़ा सकता; परन्तु जिसने हरी वनस्पतिका त्याग नहीं किया है वह अपने आहारमेंसे हरी वनस्पति कम करके भगवानको भक्तिभावसे पुष्प चढ़ाये और मुनिको पुष्प चढ़ानेका सर्वथा त्याग होता है; तथा मुनि पुष्प चढ़ानेका उपदेश भी नहीं दे सकते, ऐसा पूर्वाचार्य कह गये हैं।" -जीवनकला (पृ.२१७)

जिन प्रतिमाका प्रबल अवलंबन

२) पुष्प संबंधी यह स्पष्टता करनेके बाद प्रतिमाजीके संबंधमें उन्होंने स्वयं बताया कि स्थानकवासीके एक साधु जो बहुत विद्वान थे, वे एक बार वनमें विहार करके जा रहे थे वहाँ एक जिनमंदिर आया; उसमें विश्रांति लेनेके लिये प्रवेश किया तो सामने जिनप्रतिमा देखीं; इससे उनकी वृत्ति शान्त हो गई और मनमें उल्लास भाव आया। शांत जिनप्रतिमा सत्य है, ऐसा उनके मनमें हुआ। -जीवनकला (पृ.२१८)

"प्रतिमाप्रतिपक्ष-संप्रदाय जैनमें ही खड़ा हो गया। ध्यानका कार्य और स्वरूपका कारण ऐसी जिन-प्रतिमाके प्रति लाखों लोग दृष्टिविमुख हो गये, वीतरागशास्त्र कल्पित अर्थसे विराधित हुए, कितने तो समूल ही खंडित किये गये। इस तरह इन छः सौ बरसके अंतरालमें वीतरागमार्गरक्षक दूसरे हेमचन्द्राचार्यकी जरूरत थी।" -श्रीमद् राजचंद्र (पृ. ६७७)

मुनिका धर्म-स्वाध्याय और ध्यान

"एक दिन वनमें बावड़ीके पास श्रीमद् मुनियोंके साथ बात करते हुए बैठे थे । श्री चतुरलालजी मुनिकी ओर देखकर श्रीमद्ने पूछा–"आपने संयम ग्रहण किया तबसे आज तक क्या किया ?"

श्री चतुरलालजीने कहा–"सबेरे चायका पात्र भर लाते हैं उसे पीते है; उसके बाद तंबाखु माँग लाते है, उसे सूँघते है; फिर आहारके समय आहार-पानीकी भिक्षा लाते हैं, और आहार-पानी करनेके बाद सो जाते है; शामको प्रतिक्रमण करते हैं और रातको सो जाते हैं ।"

श्रीमद्ने विनोदमें कहा–"चाय और तंबाखु माँग लाना और आहारपानी करके सो जाना इसका नाम दर्शन, ज्ञान, चारित्र ?"

फिर आत्मजागृतिके लिये बोध देकर श्री लल्लुजीको सूचना देते हुए कहा–"मुनियोंका प्रमाद छुड़ाकर, सीखने तथा पढ़नेमें, स्वाध्याय-ध्यान करनेमें काल व्यतीत करायें और आप सभी दिनमें एक बार आहार करें; चाय और तंबाखु बिना कारण हमेशा लाना नहीं । आप संस्कृतका अभ्यास करें ।" -जीवनकला (पृ.२२०-२१)

आज्ञाके आराधनसे भवमुक्ति

"पू. चतुरलालजी मुनि वसोमें माला गिन रहे थे, वहाँ परमकृपालुदेव आ गए और पूछा–"मुनि, क्या करते हो ? तब कहा–'माला गिनता हूँ' फिर पूछा-'किसकी ?' तब कहा–"खाउं खाउं हो रहा है उसकी' लेकिन उस पवित्र वातावरणमें विचार स्फुरायमान हुए वे कह दिये कि 'हे प्रभु ! ऐसी वृत्तिमें मेरा देहत्याग हो जाए तो मेरी क्या हालत होगी ? मैं कहाँ भटकुंगा ? परमकृपालुदेवने कहा–"मुनि, हमारी आज्ञा उठाते हुए देह त्याग हो जाए तो किसीभी गतिमेंसे खींचकर लायेंगे । हम तुम्हारे शरीरके स्वामी नहीं है, आत्माके है ।" (बो.३ पृ.४५२)

"ज्ञानीपुरुषकी जो आज्ञा है वह भवभ्रमणको रोकनेके लिये प्रतिबंध जैसी है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४१९) पृ.४१९)

"ज्ञानीकी एक आज्ञाका आराधन करनेसे अनेकविध कल्याण है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६८१)

शामसे सबह तक अपर्व ज्ञान वार्तालाप

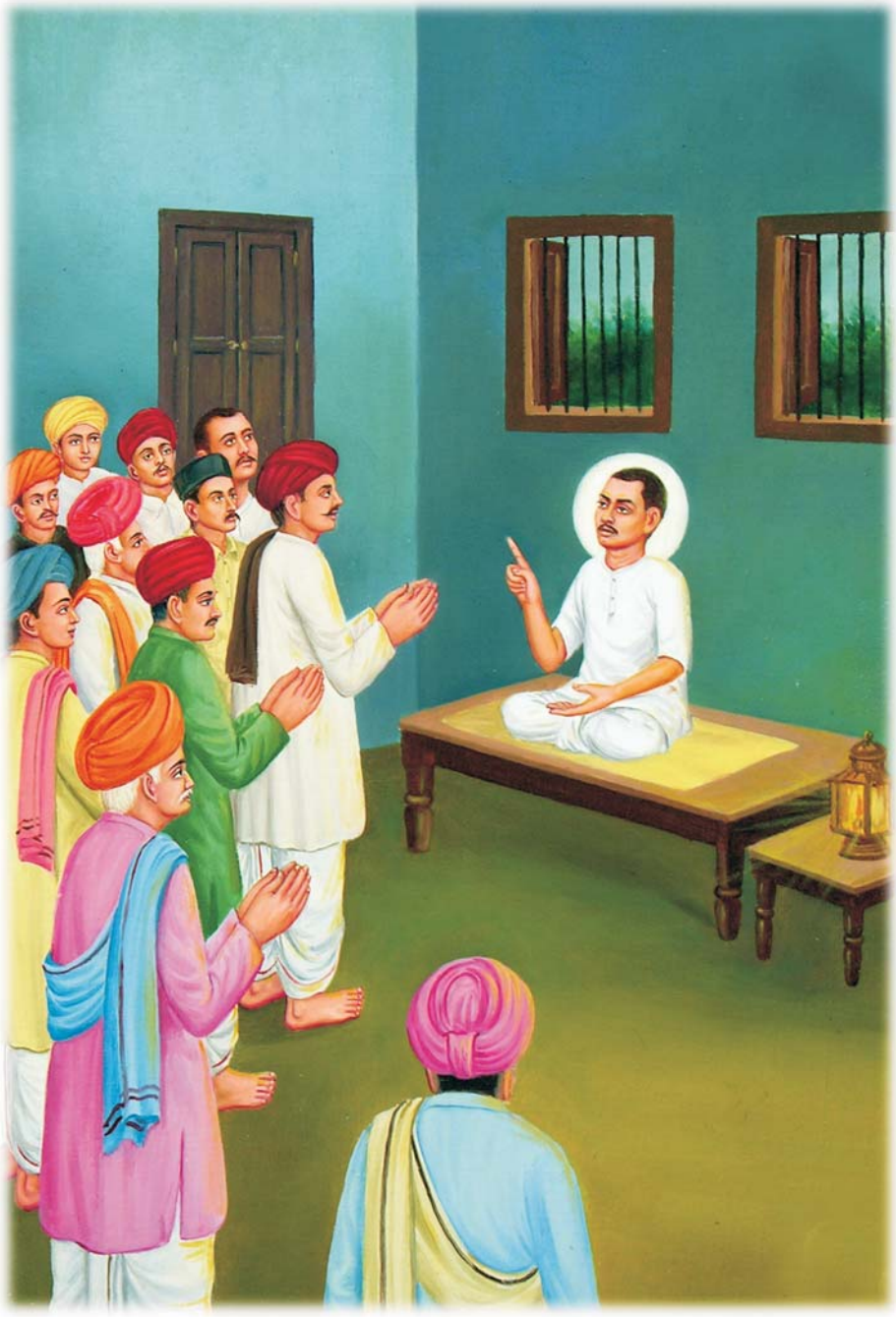

प.पू. प्रभुश्रीजी बताते है कि–

"एक रात्रिमें बहार गाँवके मुमुक्षु बहुत आये थे। उन सबको शामसे खड़े रहनेकी आज्ञा परमकृपालुदेवने की। जिससे सब हाथ जोड़कर सामने खड़े रहे और पूरी रात सुबह होने तक अपूर्व बोधधाराकी वर्षा हुई। सुबह थोड़े मुमुक्षु उपाश्रयमें आये तब उनकी मुखाकृति देखकर स्वर्गमेंसे उत्तम देव उतरे हो, ऐसी उपशमकी छाया दिखाई दी। इससे हमारे आत्माको बड़ा आनंद हुआ और हमें अपूर्व बोधका अंतराय रहनेसे पश्चात्ताप भी हुआ। हमारे अंतरायका कारण बाह्यवेष था।

वहाँ पर श्री सुखलालभाई छगनभाई वीरमगामवालेने खड़े खड़े प्रश्न किया कि हे प्रभु! मुझे नींद बहुत हेरान करती है। वह कैसे दूर हो? परम कृपालुदेवने बोधमें कहा कि मूर्छित दशामें यह जीव अनादिकालसे भटका है। चौद पूर्वधारी भी प्रमादवश गिर गये है। "निद्रा आदि प्रकृति, क्रोधादि, अनादिसे वैरी है, उनके प्रति क्षत्रियभावसे बर्ताव करना। उसे अपमानित करना। फिर भी न माने तो क्रुरभावसे दबाना, फिर भी न माने तो ध्यानमें रखकर समय आने पर उसे मार डालना। ऐसा शूर क्षत्रियभावसे बर्ताव करना। जिससे वैरीका पराजय होकर समाधि सुखकी प्राप्ति हो।" इस प्रकारका बोध शामसे सुबह छ बजे तक चला। बोधका इतना प्रभाव सब पर हुआ कि सुखलालभाईकी तो बिलकुल नींद ही ऊड गई।

गोधावीवाले वनमालीदासभाईने तो तुरंत उपाश्रयमें जाकर मुनियोंको कहा कि आज तो पुष्करावर्तका मेघ अच्छी तरह बरसा। हम हलके फूल जैसे हो गये। सिर परसे भार उतर गया हो वैसा लगता है आदि सत्संगकी महिमाका वर्णन किया।

"प्रत्यक्ष सत्संगकी तो बलिहारी है; और वह पुण्यानुबंधी पुण्यका फल है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१९२)

"अत्यंत निद्रा न लें।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१३)

आत्महितका साधन या आज्ञाभक्तिका माहात्म्य

श्री लल्लुजी स्वामीको श्रीमद्ने बताया–"जो कोई मुमुक्षु भाई-बहन आपके पास आत्मार्थ-साधन माँगे उसे इस प्रकार आत्महितके साधन बताये :–

(१) सात व्यसनके त्यागका नियम कराना । (२) हरी वनस्पतिका त्याग कराना । (३) कंदमूलका त्याग कराना । (४) अभक्ष्य पदार्थोंका त्याग कराना । (५) रात्रिभोजनका त्याग कराना । (६) पाँच माला गिननेका नियम कराना । (७) स्मरण बताना । (८) क्षमापनाका पाठ और बीस दोहोंका नित्य पठन, मनन करनेका कहना । (९) सत्समागम और सत्शास्त्रका सेवन करनेका कहना । -जीवनकला (पृ.२२३)

"बीस दोहे हैं, जिनमें प्रथम वाक्य 'हे प्रभु ! शुं कहुं ? दीनानाथ दयाल' है । वे दोहे आपके स्मरणमें होंगे । उन दोहोंकी विशेष अनुप्रेक्षा हो वैसा करेंगे तो वे विशेष गुणाभिव्यक्तिके हेतु होंगे ।

उनके साथ दूसरे आठ तोटक छंद अनुप्रेक्षा करने योग्य है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.४४०)

"सहजात्मस्वरूप' यह महा चमत्कारिक मंत्र है । स्मरण करते, याद करते, बोलते, वृत्तिको उसीमे संलग्न कर देनेसे कोटिकर्म क्षय होते हैं, शुभ भाव होते हैं, शुभगति और मोक्षका कारण होता है । मृत्युके समय चित्तवृत्ति मंत्रस्मरणमें या उसे सुननेमें लगी रहे तो अच्छी गति प्राप्त होती है और जन्ममरणसे मुक्त होनेका वह समर्थ कारण होता है ।" (उ. पृ.३४३)

"भक्तिके 'बीस दोहे', 'यमनियम', 'बहु पुण्यकेरा पूंजथी', 'क्षमापनाका पाठ' आदि नित्य भक्ति की जाए तो कोटि कर्म क्षय होंगे, अच्छी गति मिलेगी । अकेला आया है और अकेला जायेगा । भक्ति की होगी तो वह धर्म साथ आयेगा । आत्माको सुख देना हो तो रुपया पैसा कुछ साथ नही आयेगा । एक भजन-भक्ति की होगी वह साथ आयेगी । अनेक भव छूट जायेंगे । अतः यह कर्तव्य है । इससे मनुष्यभव सफल होगा ।" (उ.पृ.३७०)

"सब शास्त्रोका सार, तत्त्वोंका सार ढूंढकर बता दिया है । इस कालमें कृपालुदेवने बहुत दुर्लभ काम निकल जाय ऐसा प्रदान किया है । विश्वास हो तो कहुँ ।" " 'बीस दोहे' भक्ति के है वे मंत्र समान है । सौ बार, हजार बार पाठ करें तो भी कम है । लाभके ढ़ेर हैं । 'क्षमापनाका पाठ' 'छह पद' का पत्र, 'यमनियम', 'आत्मसिद्धि' ये अपूर्व साधन है । चमत्कारी है । नित्य पाठ करना जरूरी है । जीवनपर्यंत इतनी भक्ति नित्य करनी ही चाहिये । 'दर्जीका लड़का जीये तब तक सीये' । यह बात तो झूठी है, पर आप जीवनपर्यन्त इतना तो करना ही । इससे समाधिमरण होगा, समकितका तिलक होगा, अधिक क्या कहूँ ?" (उ.पृ.३७८)

"प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजीने अंत समयमें बताया था कि कोई धर्मका इच्छक हो उसे यह तीन पाठ नित्य नियमादिक रूपसे करनेको कहना । 'हे प्रभु, हे प्रभु, शुं कहुं ? दीनानाथ दयाल' ये बीस दोहरे रूप भक्तिरहस्य और यमनियम संयम आप कियो" एवं 'क्षमापना' का पाठ परमकृपालुदेवके चित्रपटके सामने विनयपूर्वक नमस्कार करके 'हे भगवान, आपकी आज्ञासे संत द्वारा बताये हुए तीन पाठकी आज्ञानुसार में प्रतिदिन भक्ति करुंगा' ऐसी भावना आप करे... इसमें बहुतसी बातोका समावेश है । थोड़ी भी ज्ञानीकी आज्ञा जीवको मोक्षमार्ग पर चढ़ाती है । ज्ञानी और ज्ञानीकी आज्ञासे चलनेवाले जीव मोक्षमार्गमें गिने जाते है ।" (बो.-३ पृ. १५०)

"स्मरणमंत्र अत्यंत आत्महित करनेवाला है । एक सेकंडका भी सदुपयोग करनेका वह साधन है । परमकृपालुदेवने जाना है ऐसा आत्मा इस मंत्रमें उन्होंने बताया है ।" (बो.-३ पृ. ६९४)

"सहजात्मस्वरूप परमगुरु" है वही आत्मा है । श्रद्धा हो जाय तो काम बन जायेगा । आज्ञासे हो तो मोक्षका कारण है । बिना आज्ञा करें तो पुण्यका बंध होगा, लेकिन मोक्षका कारण नहीं बनेगा । "सहजात्मस्वरूप परमगुरु" इसमें पांचो परमेष्ठि आ जाते है । चलते, फिरते, काम करते हुए भी मंत्र का जाप किया करे ।" (बो.-१ पृ.१२१)

"मुमुक्षु–सहजात्मस्वरूपका क्या अर्थ है ? पूज्यश्री– आत्मस्वरूप जैसा है वैसा । अपने स्वभावमें रहना या कर्ममलसे रहित जो स्वरूप है वही सहजात्मस्वरूप" (बो.-१ पृ.२६२)

"नित्यनियमको अपने प्राणके समान संभालना योग्य है ।" (बो.-३ पृ. ३२८)

प.पू.
प्रभुश्रीजीको
परमकृपालुदेवने
बताया, जो भी मुमुक्षु भाई
एवं बहिने आपके पास आत्मार्थ
साधन माँगे उसे इस प्रकार आत्महितके
साधन बताना ।

१

स्मरणमंत्र
बताना

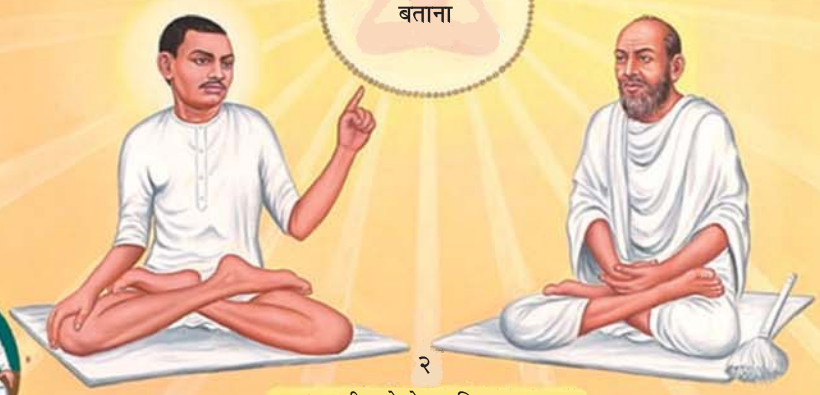

२

बीस दोहरे, यमनियम,
क्षमापनाका पाठ आदि नित्य पठन - मनन करनेको बताना

३

सात व्यसनका त्याग करना

जुआ
माँस
शराब
चोरी
वेश्यागमन
शिकार
परस्त्रीगमन

४

सात अभक्ष्यका त्याग करना

बरगदका फल
पीपलके फल
पीपलका फल
उमर
अंजीर
मध
मखखन

५

सत्समाग और सत्शास्त्रका
सेवन करने बताना

६

पाँच माला करनेका
नियम बताना

७ कंदमूलका त्याग करवाना
८ रात्रिभोजनका त्याग करवाना
९ हरी शब्जीका त्याग करवाना

सात व्यसन सेवन करनेका फल

"सात व्यसनमें कोई भी वस्तुका सेवन करनेसे उस व्यसनकी आदत पड़ जाती है । मन वही लगा रहता है जिससे धर्ममें विघ्न होता है । इस लोक परलोक दोनोंमें हानिकारक है और धर्मका नाश करनेवाला है इसलिये दूरसेही इसको त्यागनेकी वृत्ति रखें । (उ.पृ.१२६)

१. जुगार—"जुगार खेलनेवाला नरकमें जाता है; यह बात सोचने जैसी है...उसे धिक्कार, धिक्कार, धिक्कार है ।" (उ.पृ.१०९)

जुगार लोभ है, महा खराब है । यह छूट जाय तो बहुत लाभ होता है । एकसाथ पैसादार होनेकी इच्छा करके सट्टा, लोटरी आदि करना नहीं ।" -बो.-१ (पृ.९)

२. मांस—"मैं मेरे थोड़ेसे व्यसनके लिये या लाभके लिये ऐसे असंख्यात जीवोको बिनासंकोच मारता हूँ । यह मुझे कितने अधिक दुःखका कारण बनेगा ?" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.८०)

"अपना शरीर हमको प्रिय है; वैसे ही जिस जीवका वह मांस होगा उसे भी अपना जीव प्यारा होगा ।" (व.पृ.८२)

"मांसमें निरंतर जंतु उत्पन्न होते है, जीवोंको मारकर लाते है इसलिये नरकमें उसे भी मारेंगे । इस मांसको कौन मूर्ख मुखमें चबायेगा ?" –प्रज्ञावबोध (पृ.२१५)

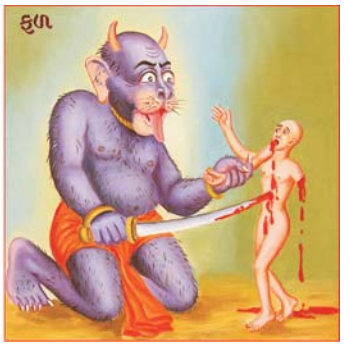

३. दारू—दारूमें असंख्यात जीव उत्पन्न होते है । उसे पीनेसे उन जीवोंका विनाश होता है । जिससे पापका बंध होता है । पाप नरकमें डालता है ।

"दारु पीनेवाला अपनी माताको पत्नी जानकर कुचेष्टा करता है । गलीमें मुँह फाड़कर सोता है । कुत्ताका मूत्र भी पीता है । दारु - धर्म, अर्थ और कामको नष्ट करता है । नरक गतिमें बहुत दुःखोका कारण बनता है । इसलिये दारू पीना बिलकुल योग्य नहीं है ।" -प्रज्ञावबोध (पृ.२१५)

४. चोरी—"चोरी करके तुरंत पैसा मिलनेपर अच्छा लगता है, लेकिन उसका फल दुःखदायक है । ऐसा समजकर पूछे बिना सब्जि जैसी चीज भी लेना नहीं । लाख रुपयेकी चीज रास्तेमें पडी हो तो भी लेना नहीं ।" -बो.-१ (पृ.९)

"चोरी करनेवालोको इस जन्ममें जेलकी सजा भोगनी पडती है और अगले जन्ममें चोरीका हजार गुना फल नरकमें भोगना पड़ता है ।" -प्रज्ञावबोध (पृ.२१५)

"परमकृपालुदेवने जो मार्ग बताया उसमें विघ्न करनेवाले सात व्यसन है ।" -बो.-३ (पृ.६६९)

"धर्मकी नींव नीति है, इसलिये सात व्यसनका त्याग, मंत्र लेनेसे पहले लेना होता है ।" -बो.-३ (पृ. ६६९)

सात व्यसन और सात अभक्ष्य सेवनका फल

"आज्ञा आराधन करनेके लिये सदाचरणका सेवन जरुरी है । यह न हो तो सब फिजुल जैसा है । इसलिये मंत्र लेनेसे पहले सात व्यसनके त्यागकी आवश्यकता है; और पाँच अभक्ष्य फल एवं शहद और मक्खन त्यागने योग्य है ।" -बो.-१ (पृ.९)

५. वेश्यागमन—"मांस दारुसे गंध मारती ऐसी नरक भूमि समान वेश्याकी संगति जीवको आत्मभान भूलाती है । धनके लिये वेश्या नीच लोगोकी भी संगति करती है । रातदिन जिसके भाव मलिन रहते है । ऐसी वेश्याकी संगति इस भवमें निंदा करवाती है और परलोकमें नरकगतिमें ले जाकर अनंत दुःखोको दिलाती है । इसलिये इसका त्याग करें ।"

-प्रज्ञावबोध (पृ. २१५)

६. शिकार—"किसीभी जीवको जानबूझके मारना नहीं । बहुत लोगोंकी ऐसी आदत होती है कि मच्छर, खटमल, साप आदिको जानबूझकर मार डालते है । लेकिन ऐसा करना नहीं ।" -बो.-१ (पृ.९)

"जीवोंको मारनेसे वे वेरभाव रखकर मरते है । अगले जन्ममें हमको बहुत बार मारेंगे या घोर नरकमें इसका फल, अनेकबार दुःख भोगना पड़ेगा ।" -प्रज्ञावबोध (व.पृ.२१५)

७. परस्त्रीगमन—"परस्त्री, परधनकी इच्छा है तो उसके पराक्रमको धिक्कार हो, उसके गुण, बुद्धि, सत्ता, लागवग, संपत्ति सबको धिक्कार है । उसका जीवन वृथा है जिसे स्वप्नमें भी ऐसी इच्छा है । परस्त्रीकी इच्छा, चिंता, रोग, दुर्बुद्धि देती है । कोई उसे मार भी डालते है । नरकमें लाल चोळ लोहपूतलीसे चिपकाकर जलाते है ।" -प्रज्ञावबोध (पृ.२१६)

"जहाँ तक झूठ और परस्त्रीका त्याग न किया जाये, वहाँ तक धर्मकी सब क्रियाएँ निष्फल है । -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.७९१)

सात अभक्ष्य—"ये सात व्यसन और (१) वडके टेटे, (२) पीपलके टेटे, (३) पीपलेके टेटे, (४) उमरडे, (५) अंजीर, (६) शहद, (७) मक्खन । ये सात अभक्ष्य पदार्थ परमकृपालुदेवकी साक्षीसे जीवनपर्यंत त्याग देनेकी सूचना प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजीने प्रत्येक मुमुक्षुको दी है ।" -बो.-३ (पृ.३२९)

"सात व्यसन और सात अभक्ष्यके त्यागमें पांच अणुव्रत आ जाते है । विचार करे तो समझमें आ सकता है ।" -बो.-१ (पृ.२७२)

"शहदमें बहुत दोष है, सात गाँव जलानेसे जो पाप लगता है उससे अधिक पाप शहदके एक बूँदको चखनेमें लगता है ।" -बो.-३ (पृ.७११)

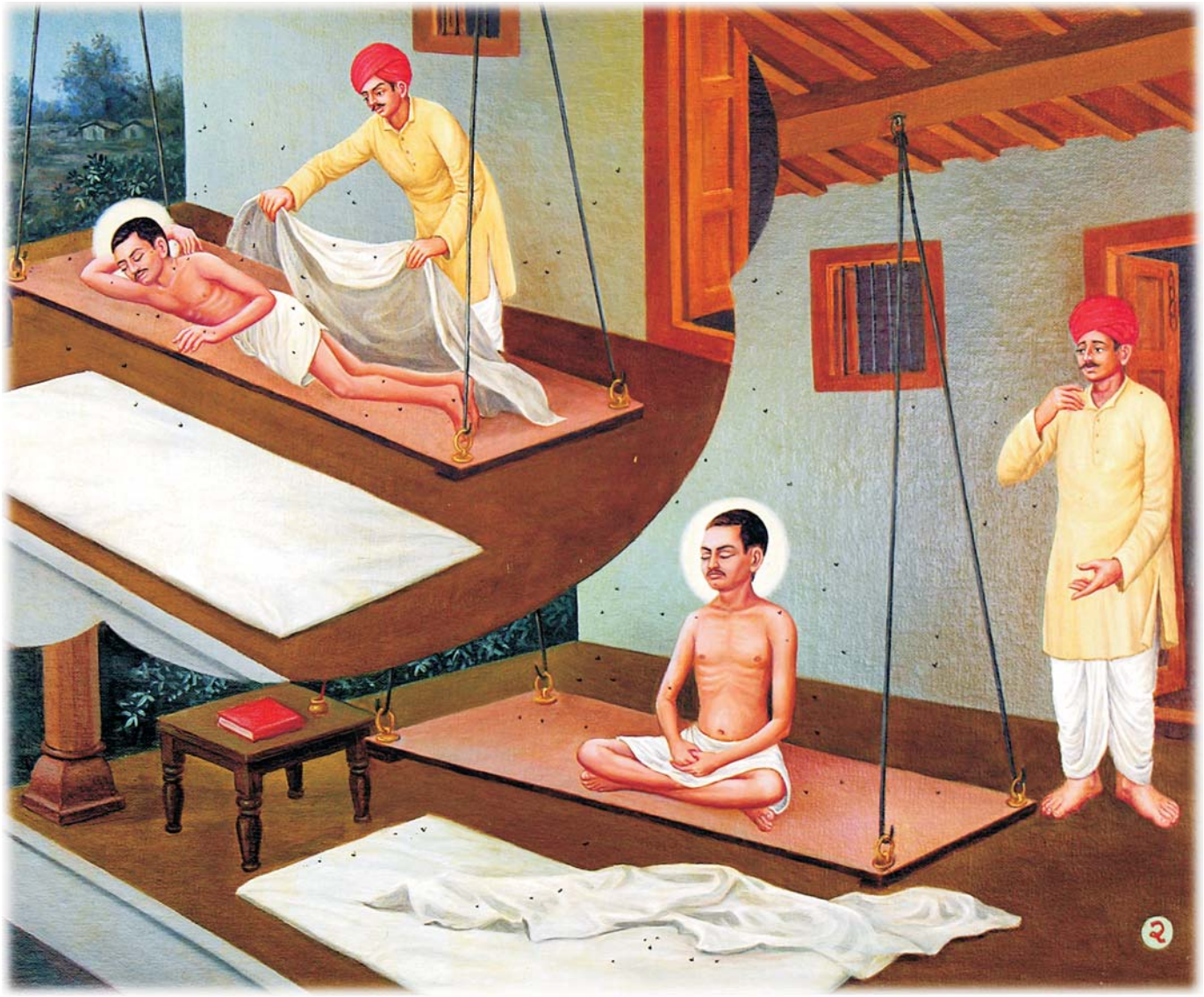

(१) संवत् १९५४ में श्रीमद् उत्तरसंडामें अवधूत योगमुद्रामें रहते थे । तब सेवामें अकेले मोतीलाल भावसारको ही रहनेकी आज्ञा थी ।

रात्रिमें झूले पर मोतीलालने गद्दी बिछाई । उसे उठा लेनेका श्रीमद्ने कहा । फिरभी मोतीलालके आग्रहसे रहने दी । लेकिन रातको तपास करने पर वह गद्दी झूलेके पास नीचे ही पडी हुई थी । मच्छर काटते थे । श्रीमद् गाथाओंकी धूनमें सोये थे । फिर धोती उनके उपर ओढ़ाकर मोतीलाल अंदर जाकर सो गये ।

(२) रातको फिर तपासने पर श्रीमद् गाथाओंकी धूनमें बैठे थे और धोती नीचे पडी हुई थी । फिरसे धोती उनके उपर रखकर मोतीलालने कहा कि मच्छर बहोत है लेकिन उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया । इस प्रकार शरीरकी परवा किये बिना धर्मध्यानमें रातको भी श्रीमद् तल्लीन रहते थे ।

"हम देहधारी है या नहीं इसे जब याद करते हैं तब मुश्किलसे जान पाते है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २९२)

"सत्पुरुष वही है कि जो रात दिन आत्माके उपयोगमें है, जिनका कथन शास्त्रमें नहीं मिलता, सुननेमें नहीं आता, फिर भी अनुभवमें आ सकता है; अंतरंग स्पृहारहित जिनका गुप्त आचरण है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १९६)

अवधूत योगमुद्रा

उत्तरसंडाके जंगलमें श्रीमद् एक धोती ही रखते थे। उस धोतीके दोनों छोर आमनेसामने कंधे पर डाल देते थे। इस प्रकार अवधूत योगमुद्रामें श्रीमद् एक महिने तक वहाँ ठहरे।

एकबार तालाबके पास होकर जाते समय श्रीमद्ने मोतीलालसे कहा था कि कल यहाँ पर सर्प था।

दूसरे दिन घूमने जाते समय मोतीलाल पीछे चलते थे तब श्रीमद्ने कहा मोतीलाल चले आओ। यह सुनकर कलकी सापवाली बात याद आनेसे तुरंत आगे आकर चलने लगे। थोडे दूर जाने पर श्रीमद्ने कहा–मोतीलाल रुको, उस सर्पको जाने दो। जिससे तुरंत मोतीलाल रुक गये। रातका समय था। सब ओर झाड़ी थी। बीचमें पगदंडीका रास्ता था। प्रथम सर्प दिखाई नहीं दिया लेकिन श्रीमद्के कहनेके बाद ध्यानसे देखने पर सर्प उनकी नजरमें आ गया।

"हे मुमुक्षु! एक आत्माको जाननेसे तू समस्त लोकालोकको जानेगा, और सब जाननेका फल भी एक आत्मप्राप्ति ही है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४८९)

जंगलमें एकांत निवास

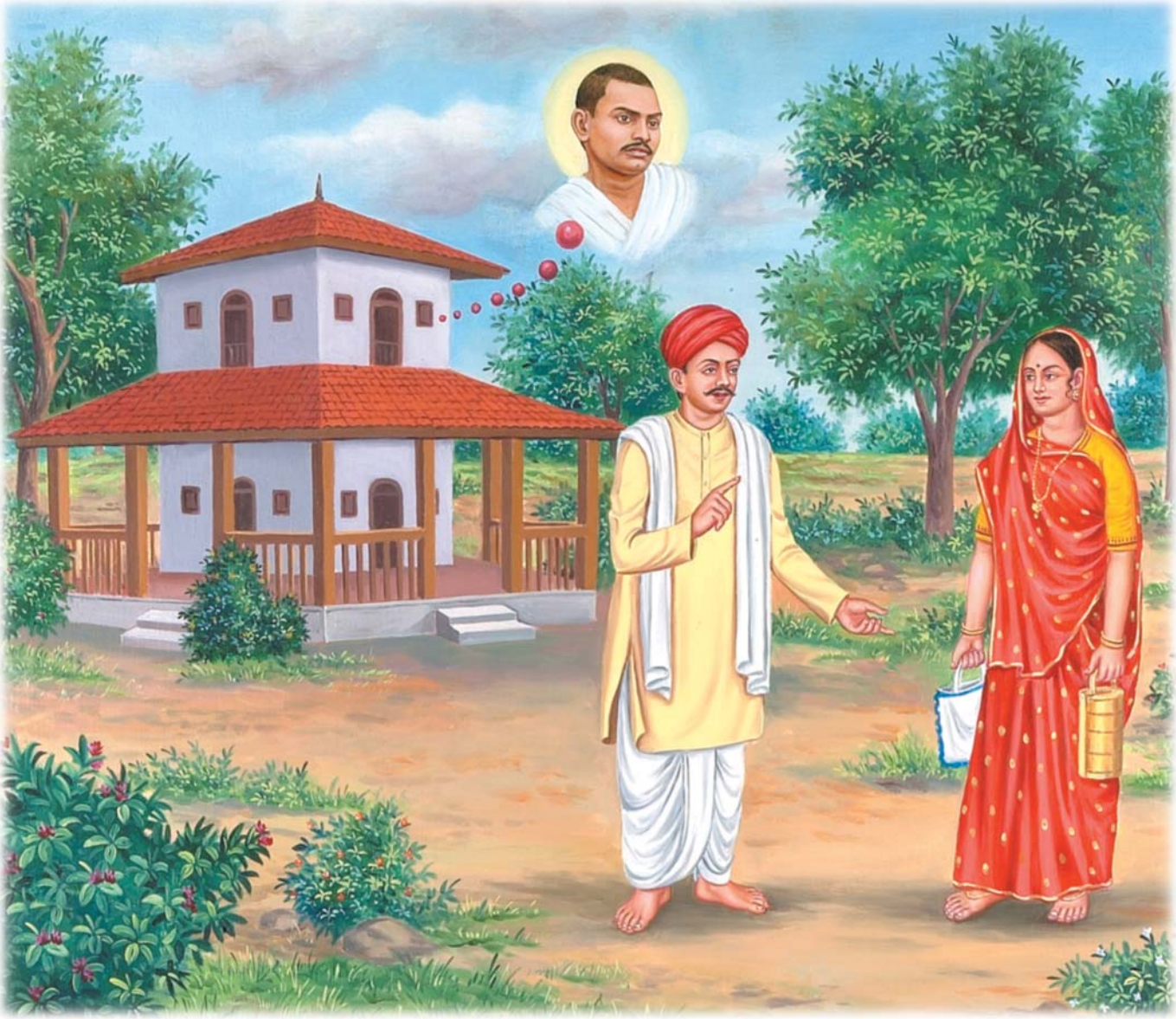

सं. १९५४में परमकृपालुदेव उत्तरसंडा वनक्षेत्रमें उपर बताए हुए मकानमें एक महीने तक स्थिरता की थी । उनकी सेवामें नडियादवाले मोतीलाल भावसार थे ।

"इस वनक्षेत्रमें श्रीमद् दो तोलाभार आटेकी रोटी तथा थोड़ासा दूध पूरे दिनमें लेते थे । दूसरी बार दूध भी नहीं लेते थे ।"

"एक बार श्रीमद्ने कहा था कि यह शरीर हमारे साथ झगड़ा करता है; परन्तु हम उसे सफल होने नहीं देते ।"

-जीवनकला (पृ.२२७)

"अल्प आहार, अल्प विहार, अल्प निद्रा, नियमित वाचा, नियमित काया और अनुकूल स्थान,
ये मनको वश करनेके उत्तम साधन है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १६६)

"एक दिन मोतीलालने अपनी पत्नीको सूचना दी थी कि मेल ट्रेन जानेके बाद तुम भोजन लेकर बंगलेकी ओर आना और तीन चार खेत दूर बैठना, वहाँ पर मैं आकर ले जाऊँगा । परन्तु वह बंगलेके पास आ पहुँची, जिससे मोतीलालने उसे उलाहना दीया; क्योंकि श्रीमद्को यह बात ज्ञात करानेकी जरूरत नहीं थी ।" -जीवनकला (पृ.२२६)

"अयोग्य उलाहना नहीं दूँ ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.१४७)

मोतीलालकी पत्नीका आठवें भवमें मोक्ष

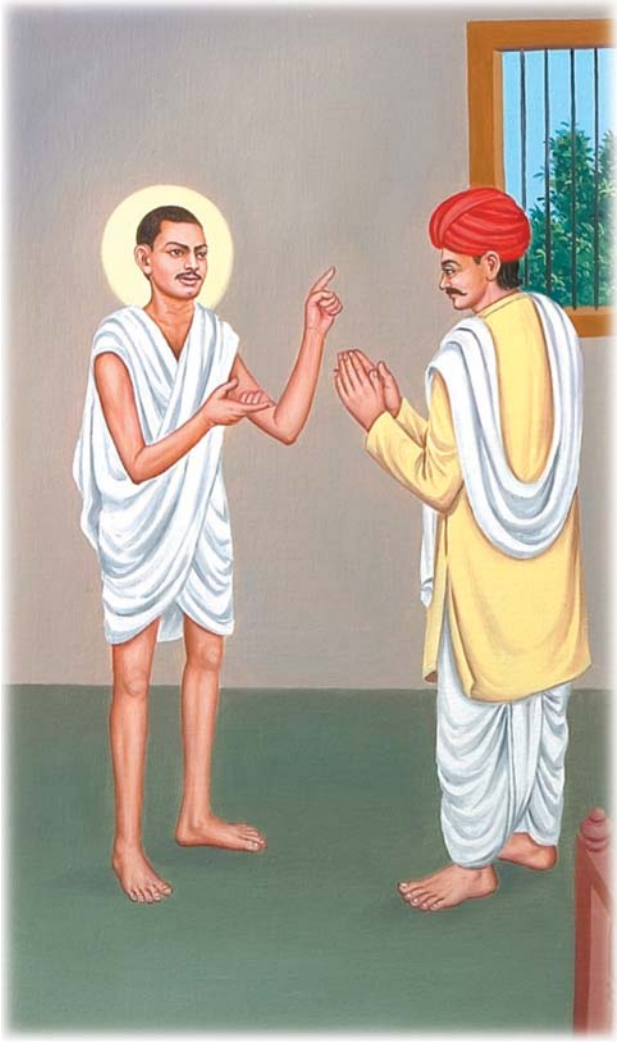

"उलाहना की बात श्रीमद्के जाननेमें आ गई, इसलिये मोतीलालसे कहा–'किसलिये तुम खीजे ? तुम स्वामित्व दिखाते हो ? नहीं, नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिये । बल्कि तुम्हें उस स्त्रीका उपकार मानना चाहिये । वह स्त्री आठवें भवमें मोक्षपद पानेवाली है । उस स्त्रीको यहाँ आने दो ।"

मोतीलालने तुरन्त जाकर पत्नीसे कहा–"तुम्हारी दर्शन करनेकी इच्छा हो तो आओ । तुम्हें आनेकी आज्ञा दी है ।"

-जीवनकला (पृ.२२६)

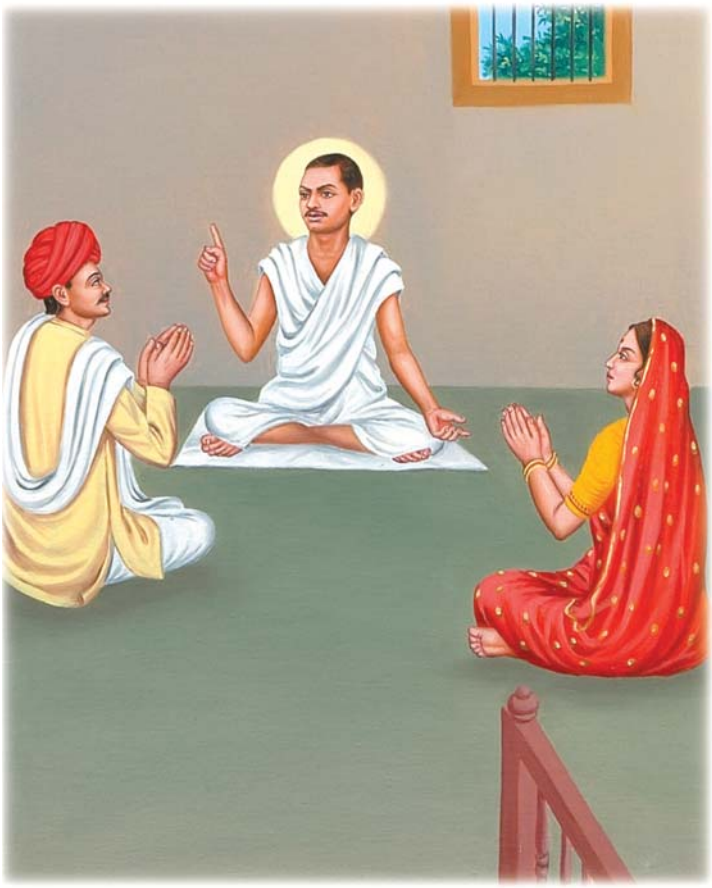

दर्शनके समय उपदेश

वह स्त्री दर्शन करनेके लिये आई तब श्रीमद्ने प्रमाद छोड़नेका उपदेश दिया–"प्रमादसे जागृत हो जाओ । क्यों इस तरह पुरुषार्थ रहित मंदतासे प्रवृत्ति करती हो ? ऐसा योग मिलना महा विकट है । महत्पुण्यसे ऐसा योग मिला है तो व्यर्थ क्यों गँवाते हो ? जागृत हो जाओ, जागृत हो जाओ । हमारा चाहे जिस प्रकारसे कहना होता है वह मात्र जागृत होनेके लिये ही कहना होता है ।" -जीवनकला (पृ. २२७)

"प्रमादके कारण आत्मा प्राप्त हुए स्वरूपको भूल जाता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १६६)

"समय मात्र भी प्रमाद करनेकी तीर्थंकरदेवकी आज्ञा नही है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३५५)

"प्रमत्तभावने इस जीवका बुरा करनेमें कोई न्यूनता नहीं रखी ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६६७)

"जीवको प्रमादमें अनादिसे रति है, परन्तु उसमें रति करने योग्य कुछ दिखायी नहीं देता ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६२४)

श्री तीर्थंकरका अंतर आशय

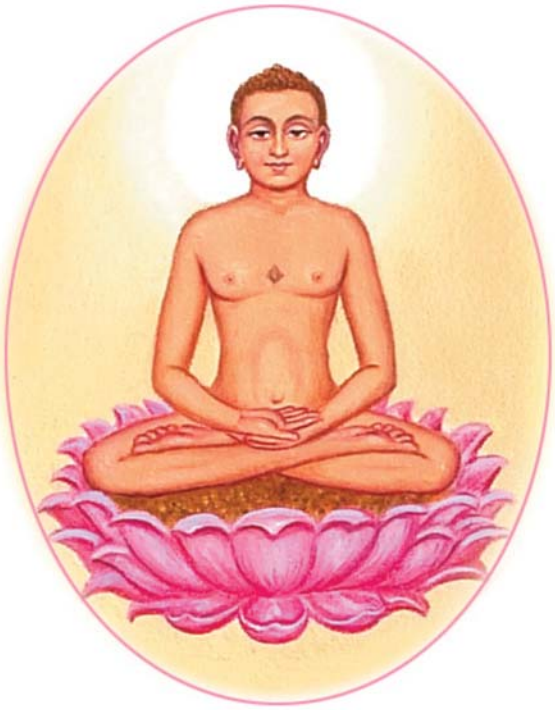

"बंध-मोक्षकी यथार्थ व्यवस्था जिस दर्शनमें यथार्थरूपसे कही गयी है, वह दर्शन निकट मुक्तिका कारण है; और इस यथार्थ व्यवस्थाको कहने योग्य यदि किसीको हम विशेषरूपसे मानते हों तो वे श्री तीर्थंकरदेव है ।
और आज इस क्षेत्रमें श्री तीर्थंकरदेवका यह आंतरिक आशय प्रायः मुख्यरूपसे यदि किसीमें हों तो वे हम होंगे ऐसा हमें दृढ़तापूर्वक भासित होता है ।"
-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३२१)

श्रीमद्, भगवान महावीरके अंतिम शिष्य

"तुम प्रमादमें क्यों पड़े रहे हो? वर्तमानमें मार्ग इतना काँटोसे भरा है कि उन काँटोको हटाते हुए हमें जो श्रम उठाना पड़ा है वह हमारा आत्मा जानता है । यदि वर्तमानमें ज्ञानी होते तो हम उनके पीछे-पीछे चले जाते । परन्तु तुम्हें प्रत्यक्ष ज्ञानीका योग है फिर भी ऐसे योगसे जागृत नहीं होते । प्रमाद दूर करो । जागृत हो जाओ । हम जब वीरप्रभुके अन्तिम शिष्य थे, उस समय लघुशंका जितना प्रमाद करनेसे हमें इतने भव करने पड़े । परन्तु जीवोंको अत्यन्त प्रमाद होते हुए भी बिलकुल चिंता नहीं है । जीवोंको प्रत्यक्ष ज्ञानी पुरुषोंकी पहचान होना बहुत ही मुश्किल है ।"
-जीवनकला (पृ.२२६)

"वसोमें मुनियोंको जागृत करते हुए श्रीमद्ने कहा–"हे मुनियों! अभी ज्ञानी पुरुषके प्रत्यक्ष समागममें आप प्रमाद करते हैं, परन्तु जब ज्ञानीपुरुष नही होंगे तब पश्चात्ताप करोगे । पाँच सौ पाँच सौ कोस पर्यटन करने पर भी ज्ञानीका समागम नही मिलेगा ।" -जीवनकला (पृ.२२३)

समवसरण –

समवसरणमें बिराजमान भगवान महावीर और उनके शिष्य, उसमें एक शिष्य परमकृपालुदेव । →

श्रीमद्की अद्भुत आत्मदशा

श्री देवकरणजी महाराज बताते है कि– खेड़ा गाँवमें परमकृपालुदेव बंगलेकी तीसरी मंजिल पर बिराजे थे और स्वयं अपनी अद्भुत दशाका वर्णन कर रहे थे। मैं उसे देखकर भींतके पीछे खड़ा रहकर मैं वह सुन रहा था। वे नीचे लिखे अनुसार मुखसे बोल रहे थे –"अड़तालीसके सालमें (सं० १९४८) राळज बिराजमान थे वे महात्मा शान्त और शीतल थे। वर्तमान सालमें वसो क्षेत्रमें स्थित महात्मा परम अद्भुत योगीन्द्र परम समाधिमें रहते थे और इस वनक्षेत्रमें स्थित परमात्मा भी अद्भुत योगीन्द्र परम शान्त बिराजते हैं। इस प्रकार वे अपनी नग्नभावी, अलिंगी, निःसंग दशाका वर्णन कर रहे थे।" -जीवनकला (पृ. २२९)

" ज्ञानीपुरुषोको समय समयमें अनंत संयम परिणाम वर्धमान होते है, ऐसा सर्वज्ञने कहा है, वह सत्य है।" (व.पृ.८१४)

मुखमुद्राका पाँच घण्टे तक अवलोकन

"खेड़ाके उसी बंगलेमें एक दिन चारों मुनि श्रीमद्के पास गये, तब श्रीमद्ने कहा–"आज हमें आपके साथ बोलना नहीं है।" परन्तु मुनि ग्यारह बजेसे चार बजे तक श्रीमद्की मुद्रा पर दृष्टि रखकर बैठे रहे। आखिर श्रीमद् बोले–"आज हमें बोलना नहीं था, परन्तु कहते हैं कि आप क्या करते हैं?" मुनियोंने कहा–"हम आपकी मुखमुद्राको देखा करते है।"

श्रीमद्ने कहा–"आज अन्तरमें गहरा बीज बो रहे हैं। फिर जैसा आपका क्षयोपशम होगा तदनुसार लाभ होगा।" ऐसा कहकर अदभुत बोधदान दिया। फिर श्रीमद्ने कहा–"इस बोधका आप सभी निवृत्ति क्षेत्रमें इकट्ठे होकर विशेष विचार करेंगे तो बहुत लाभ होगा।"

-जीवनकला (पृ. २३१)

"सत्पुरुषोंकी मुखाकृतिका हृदयसे अवलोकन करना।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २५३)

"सत्पुरुष कहते नहीं, करते नहीं, फिर भी उनकी सत्पुरुषता निर्विकार मुखमुद्रामें रही हुई है।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १६१)

"बहुत करके प्रयोजनके बिना बोलना ही नहीं, उसका नाम मुनित्व है...लगभग साढ़े बारह वर्ष मौन धारण करनेवाले भगवान वीर प्रभुने ऐसे उत्कृष्ट विचारसे आत्मामेंसे फिरा-फिराकर मोहनीयकर्मके सम्बन्धको बाहर निकाल करके केवलज्ञानदर्शन प्रगट किया था।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६८८)

मुनि तुम आत्मा देखोगे

परमकृपालुदेव अहमदाबादमें राजपुर मंदिरमें जानेवाले थे तब मुनिओको भी वहाँ बुलाया । मंदिरमें छट्ठे पद्मप्रभ प्रभुजीका स्तवन स्वयंने गाया । 'पद्मप्रभ जिन तुज मुज आंतरु रे..' और स्तुति नमस्कार करके खड़े होकर भूमिगृहमें गये । भूमिगृहमें मूलनायक श्री पार्श्वनाथ प्रभुके बाजुमे भव्य सफेद प्रतिमाजीके पास जाकर परमकृपालुदेव अकस्मात् बोल उठे कि "देवकरणजी देखो ! देखो ! आत्मा ! तब श्री लघुराज स्वामी कहते है कि मैं भोला इसलिये बोल उठा "कहाँ है बापजी ?" वह सुनकर परमकृपालुदेव मेरे सामने ही देखते रहे और बोधमें कहा कि "मुनि तुम देखोगे "

"आत्मा स्वानुभवगोचर है, वह चक्षुसे दिखाई नहीं देता, इन्द्रियोसे रहित जो ज्ञान है वह उसे जानता है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७२५)

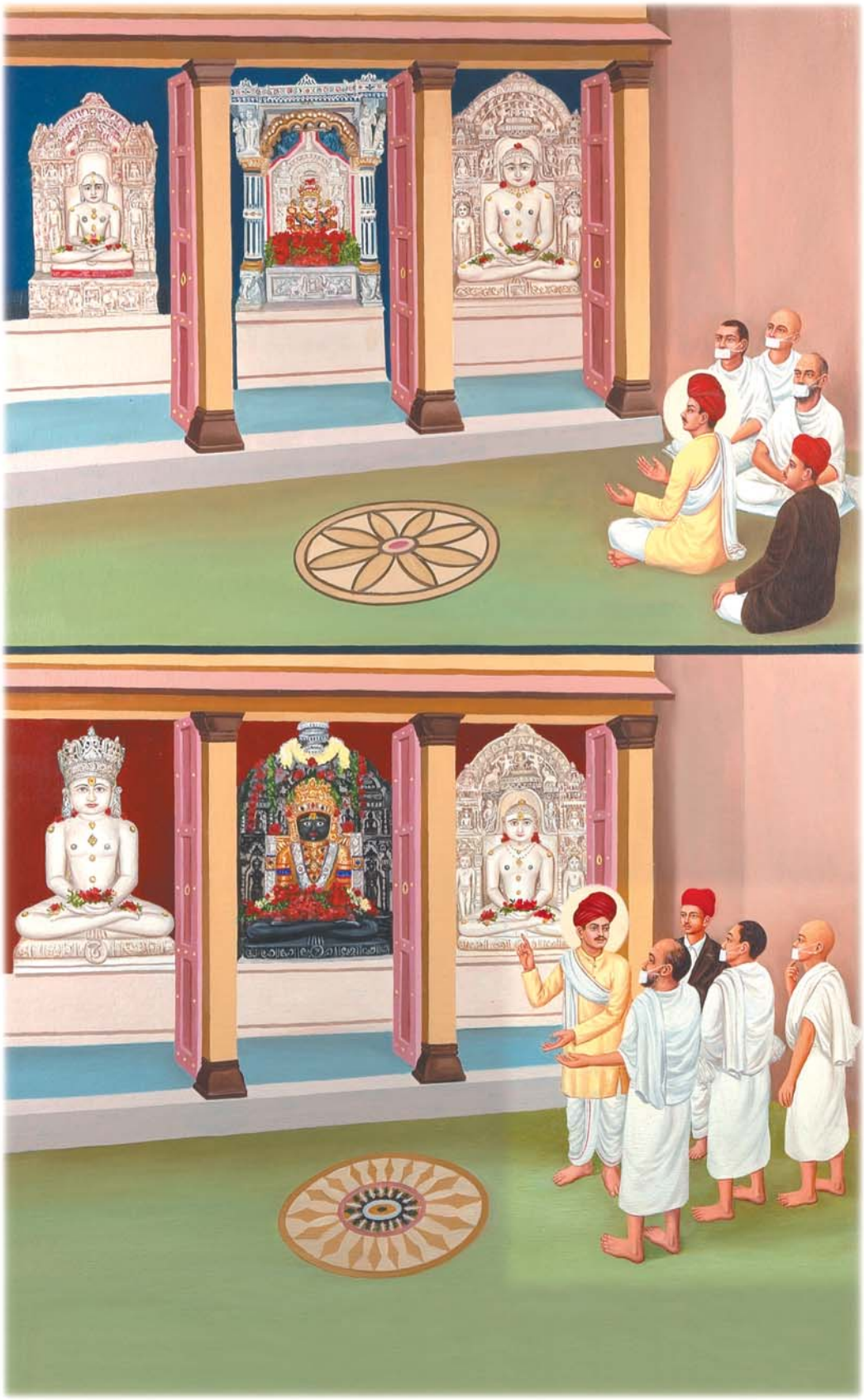

श्रीमद्के साथ इडरके महाराजाकी मुलाकात

सं. १९५५में इडरके मरहुम महाराजने श्रीमद्की एक दो बार मुलाकात ली थी । उस वक्त महाराजाने श्रीमद्से पूछा कि लोगोमें ऐसी कहावत है कि 'राजेश्वरी ते नरकेश्वरी' उसका क्या अर्थ है ?

श्रीमद्ने जवाबमें कहा कि राजपदवी प्राप्त होना पूर्वके पुण्य और तपोबलका फल है । पुण्यके दो प्रकार है—पुण्यानुबंधी पुण्य और पापानुबंधी पुण्य । पुण्यानुबंधी पुण्यवाले जीव राज्यपदको पाकर राजसत्ताका उपयोग जीवोके हितके लिये करके पुण्य उपार्जन कर उच्चगतिको पाते है । जबकि पापानुबंधी पुण्यवाले जीव राज्यसत्ताका दुरुपयोग करके अेशआरामी बनकर, अधम काम करके, प्रजाके उपर जुल्मी कर डालकर पाप कर्मोका उपार्जन करते है, वे जीव नरकगतिको पाते है । इसलिये 'राजेश्वरी ते नरकेश्वरी' ऐसी कहावत विश्वमें प्रचलित है ।

"वे सत्पुरुष पंचमकालके स्वरूपको मुख्यतः इस आशयमें कहते हैं । सच्चे क्षत्रियोके बिना भूमि शोकग्रस्त होगी । निसत्त्व राजवंशी वेश्याके विलासमें मोहित होंगे । धर्म, कर्म और सच्ची राजनीतिको भूल जायेंगे; अन्यायको जन्म देंगे; जैसे लूट सकेंगे वैसे प्रजाको लूटेंगे । स्वयं पापिष्ठ आचरणोंका सेवन करके प्रजासे उनका पालन करायेंगे ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १२०)

"पंचमकालका ऐसा स्वरूप जानकर विवेकी पुरुष तत्त्वको ग्रहण करेंगे; कालानुसार धर्मतत्त्वश्रद्धाको पाकर उच्चगतिको साध्यकर परिणाममें मोक्षको साधेंगे । निर्ग्रन्थ प्रवचन, निर्ग्रन्थ गुरु इत्यादि धर्मतत्त्वकी प्राप्तिके साधन है । इनकी आराधनासे कर्मकी विराधना है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १२०)

वीरप्रभुके अंतिम शिष्यका इस कालमें जन्म

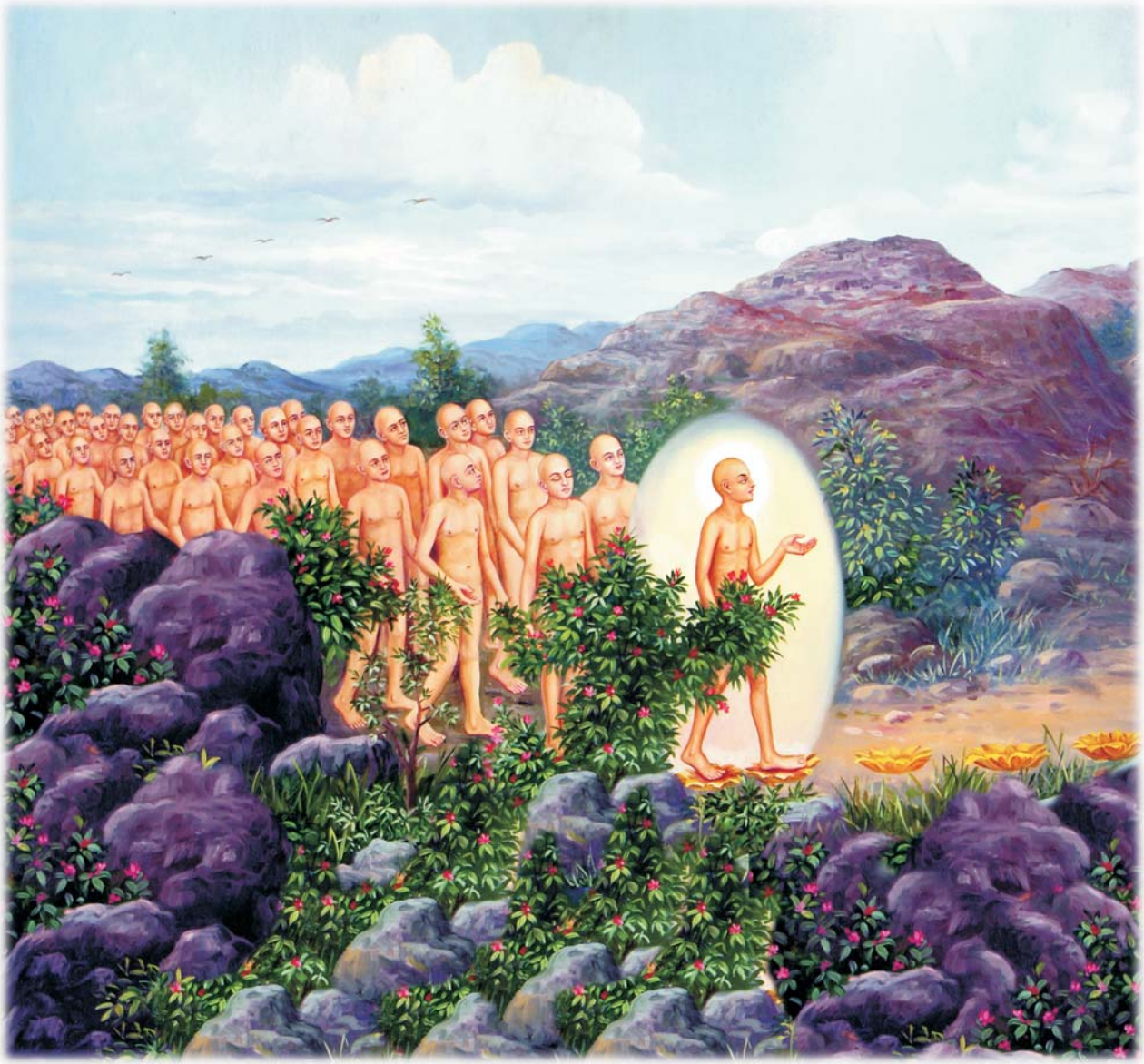

इडरके महाराजाने कहा : इस इडर प्रदेशके बारेमें आपके क्या विचार है ? श्रीमद्ने कहा—आपका इडरका किल्ला, उसके उपरकी ओर जैन मंदिर, रूखीराणीका मकान, रणमलकी चोकी, महात्माओकी गुफाए और औषधिमय वनस्पतिको देखकर, इस देशकी संपूर्ण विजयी स्थिति मालुम होती है । उनकी आर्थिक, नैतिक और आध्यात्मिक उन्नतिके ये प्रमाण है ।

फिर श्रीमद्ने कहा—जैनमें चोबीस तीर्थंकर हुए है । उनमेंसे चोबीसवे तीर्थंकर भगवान महावीरका नाम आपने सुना होगा । जिनशासनको पूर्ण प्रकाशमें लानेवाले ये अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी और उनके शिष्य गौतमादि गणधर इस इडरके पहाड़ोमें आ चूके है ऐसा हमें भास्यमान होता है । उनके शिष्य मोक्षको प्राप्त हुए उनमेंसे एक शिष्य पीछे रह गया था उसका जन्म इस कालमें हुआ है । उसके द्वारा बहुतसे जीवोका कल्याण होना संभव है ।

यह निर्देश अपने खुदके बारेमें है क्योंकि खुदने अन्यत्र स्वयं बताया है कि हम भगवान महावीरके अंतिम शिष्य थे ।

"महावीरने जिस ज्ञानसे इस जगतको देखा है वह ज्ञान सब आत्माओमें है,
परंतु उसका आविर्भाव करना चाहिये ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १६०)

"बहुत बहक जाएँ तो भी महावीरकी आज्ञाका भंग मत करना । चाहे जैसी शंका हो तो भी
मेरी ओरसे वीरको निःशंक मानना ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १६०)

आम्रवृक्षके नीचे श्रीमद्‌जीकी प्रतिक्षा करते हुए सात मुनि

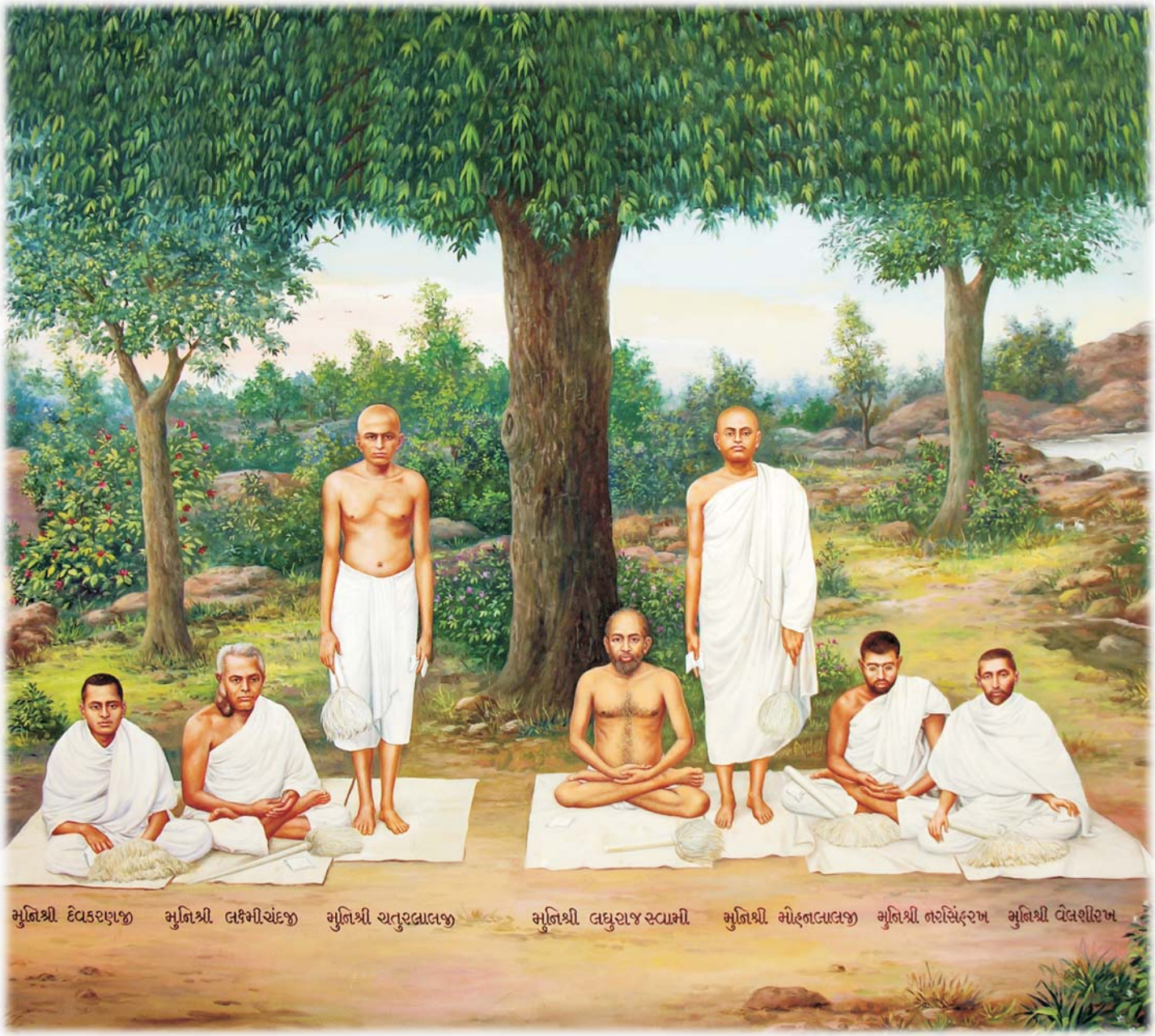

इडरमें निश्चित किये आम्रवृक्षके नीचे श्री लल्लुजी स्वामी आदि सातो मुनिओको आनेकी परमकृपालुदेवने आज्ञा की। वैसे ही सब मुनि वहाँ आकर परमकृपालुदेवकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

उस आम्रवृक्षके नीचे मुनिओको परम सद्‌गुरुका समागम बारबार होनेसे वह आम्रवृक्ष त्रिलोकके साररूप कल्पवृक्षके समान जान पडता था।

"जिसका माहात्म्य अचिंत्य है, ऐसा सत्संगरूप कल्पवृक्ष प्राप्त होनेपर जीव दरिद्र रहे,
ऐसा हो तो इस जगतमें वह ग्यारहवाँ आश्चर्य ही है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६६४)

"सत्संग सर्व सुखका मूल है। 'सत्संग मिला' कि उसके प्रभावसे वांछित सिद्धि हो ही जाती है। चाहे जैसा पवित्र होनेके लिये सत्संग श्रेष्ठ साधन है। सत्संगकी एक घड़ी जो लाभ देती है वह लाभ कुसंगके एक करोड़ वर्ष भी नहीं दे सकते, अपितु वे अधोगतिमय महापाप कराते हैं, तथा आत्माको मलिन करते हैं।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७७)

सिद्धशिला

परमकृपालुदेव इडरमें सातो मुनिओके साथ घंटीया पहाड पर चढ़कर वहाँ आई हुई विशाल शिला पर बिराजमान हुए । सातो मुनि भी उनका विनय कर सामने बैठे । उस वक्त श्रीमद्ने कहा कि यहाँ नजदीकमें एक चीता रहता है लेकिन तुम निर्भय रहना । फिर अपनी ओर संबोधन करके श्रीमद्ने कहा कि देखो, यह सिद्धशिला और ये बैठे है वे सिद्ध । यहाँ पर हमने सिद्ध भगवंतके सुखका अनुभव किया है इसलिये इस जगहका विस्मरण नहीं करें ।

तुम सब पद्मासन मुद्रामें बैठ जाओ और जिनमुद्रावंत बनकर 'द्रव्यसंग्रह'की गाथाओका अर्थ ध्यानमें लो ।

श्रीमद्ने पूरा 'द्रव्यसंग्रह' ग्रंथ अर्थके साथ समझाया । आज्ञापूर्वक एकाग्र चित्तसे स्थिर बैठकर सातो मुनिओने वह सुना । मुनिश्री देवकरणजी तो इस समागमकी खुमारीमें आकर उल्लासपूर्वक बोल उठे कि "आज दिन तक जो समागम परमगुरुके हुए, उसमें यह समागम सर्वोपरी हुआ । देवालय पर कलश चढ़ाये वैसा यह प्रसंग परम कल्याणकारी और सर्वोपरी मालुम होता हे ।"

"मा मुज्झह मा रज्जह मा दुस्सह इट्ठणिट्ठअत्थेसु ।
थिरमिच्छह जइ चित्तं विचित्तझाणप्पसिद्धिए ।" -द्रव्यसंग्रह गाथा ४९

"यदि तुम स्थिरताकी इच्छा करते हो तो प्रिय अथवा अप्रिय वस्तुमें मोह न करो, राग न करो, द्वेष न करो । "

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६४०)

साँप या चीत्ता मिल जाये तो डरोगे ?

श्री धारशीभाई रणछोडभाई बताते है कि–

"धर्मपुरमें स्मशानमें कृपालुदेवके साथ कभी कभी जाना होता था और रातको देरीसे घर पर लौटते थे। वहाँसे कोई कोई बार कृपालुदेव अकेले थोड़े दूर ध्यानके लिये झाड़ीमें जाते थे और एकबार आकर ऐसा प्रश्न किया कि सर्प या चित्ता मिल जाय तो डरोगे ? जवाबमें मैने कहा : आप पासमें होनेसे डरेंगे नहीं; लेकिन प्रत्यक्ष ऐसी परीक्षा हुए बिना क्या कहे ?" श्रीमद्ने लिखा है कि–

"एकाकी विचरतो वळी स्मशानमां, वळी पर्वतमां वाघ सिंह संयोग जो;
अडोल आसन, ने मनमां नहीं क्षोभता, परम मित्रनो जाणे पाम्या योग जो अपूर्व०"११ –श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ५७४)

सं. १९५६ में धर्मपुरके जंगलमें भी श्रीमद् थोड़े समय तक रहे हुए है।

"साँप काटे और भय न हो तब समझना कि आत्मज्ञान प्रगट हुआ है। आत्मा अजर अमर है। मैं मरनेवाला नहीं, तो मरनेका भय कैसा ? जिसको अपने शरीरकी मूर्च्छा चली गयी उसे आत्मज्ञान हुआ ऐसा कह सकते हे।" –श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७२८)

परमकृपालुके योगबलसे दैवी रक्षण

श्री रणछोडभाई धारशीभाई कहते है कि–

"कृपालुदेवकी कारुण्यवृत्तिका एक दृष्टांत याद रखने जैसा है। वे जब धर्मपुरके पहाडी प्रदेशमें हमारे साथ रहे थे उस समय राज्यके पोलीटीकल एजन्ट साहबका भी वहाँ ठहरना हुआ। उस साहबके सन्मान हेतु शिकार करनेकी व्यवस्था रखी गई।

लेकिन जानवरोके अच्छे भाग्यसे जहाँ पर कृपालुदेवके योगबलसे दयाका अत्यंत निर्मल श्रोत बहता हो वहाँ उन्हें दैवी रक्षण मिले बिना कैसे रहे ? जहाँ तक परमकृपालुदेवकी स्थिरता उस स्थानमें रही वहाँ तक शिकार मिला ही नहीं। परमकृपालुदेवके जानेके बाद शिकार मिलनेके समाचार सने थे।"

"एक सूक्ष्मसे सूक्ष्म जीवजंतुके मारनेमें भी महापाप है। जैसे मुझे मेरी आत्मा प्रिय है वैसे उसे भी अपनी आत्मा प्रिय है।"

–श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ८०)

जैसी भावना वैसी सिद्धि

श्री रणछोडभाई धारशीभाई बताते है कि–

स्मशानमें लोगोके बैठनेके स्थानके पासमें एक बगीचा हमारी ओरसे बन रहा था । वहाँ नदीके पत्थरसे कोई लेख लिखनेका पूछने पर श्रीमद्ने 'भावनासिद्धि' ऐसा लिखनेका सूचन दिया । उसका अर्थ ऐसा मालूम होता है कि जीवनमें जैसी भावना की होगी वैसी ही अंत समयमें सिद्धि प्राप्त होगी । श्रीमद्ने ऐसी भावना करनेका वचनामृतमें लिखा है –

"यह यौवन मेरा नहीं, और यह भूमि मेरी नहीं;
यह मोह मात्र अज्ञानताका है ।
सिद्धगति साधनेके लिये हे जीव !
अन्यत्वका बोध देनेवाली अन्यत्वभावनाका
विचार कर ! विचार कर ! " -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४५)

बगीचेमें आकर्षित हुए तो वहाँ जन्म लोगे

उपर बताये हुए बगीचेमें एक केलेके वृक्ष पर नये पान आये थे । वे हवासे उड़ते देखकर मैंने कृपालुदेवका ध्यान उस ओर खींचा तब उन्होंने कहा कि मन उससे ज्यादा आकर्षित हुआ तो वहाँ जन्म लेना पड़ेगा । मैंने पूछा–मनुष्य जीव वहाँ उत्पन्न हो ऐसा बन सकता है ? उसके जवाबमें श्रीमद्ने कहा– मरुदेवी माताका जीव केलेके झाड़मेंसे मनुष्य बना ऐसा जैन आगमोमें उल्लेख है ।

"गुरुके पास रोज जाकर एकेंद्रिय आदि जीवोंके संबंधमें अनेक प्रकारकी शंकाएँ तथा कल्पनाएँ करके पूछा करता है; रोज जाता है और वहीकी वही बात पूछता है । परन्तु उसने क्या सोच रखा है ? एकेंद्रियमें जाना सोचा है क्या ?" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७०६)

नरोडा गाँवके बाहर मुनिओके आनेकी प्रतिक्षा करते हुए श्रीमद्

"अहमदाबादसे मुमुक्षुभाई भी नरोडा आये थे । बारह बजे श्री लल्लुजी आदि मुनिओंको निवृत्ति स्थल पर आनेके लिये श्रीमद्ने समाचार भेजनेसे, मुनि उपाश्रयसे गाँवकी सीमा तक पहुँचे तब श्रीमद्जी आदि भी उनकी प्रतिक्षा करते हुए वहाँ खड़े थे ।" (उ.पृ. [३४])

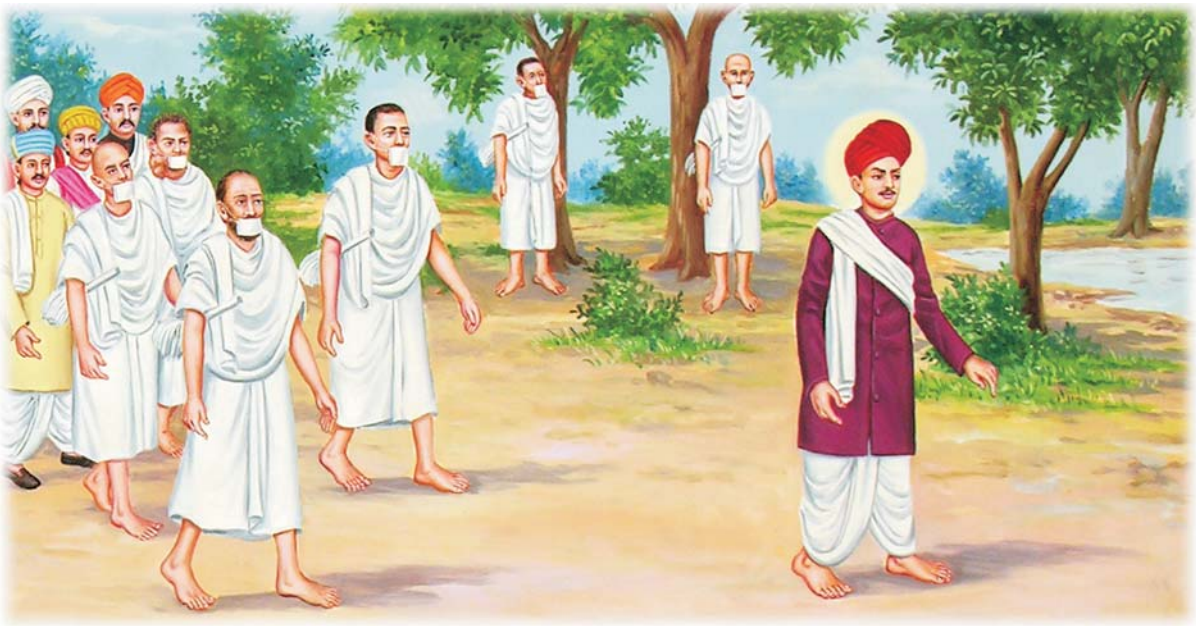

ग्रीष्मऋतुकी धूपमें गजगतिसे चलते हुए श्रीमद्

"ग्रीष्म ऋतुकी धूपसे जमीन तप गयी थी । लेकिन 'साधुओंके पैर जलते होंगे' ऐसा कहकर श्रीमद्जीने अपने जूते निकाल दिये और गजगतिसे दूर रहे हुए वटवृक्ष तक नंगे पैर चले । साधु छायामें विश्रांति लेनेके लिये त्वरित गतिसे चलते थे लेकिन श्रीमद् आकुलताके बिना कड़क धूपकी परवा किये बिना शांतिसे चलते थे । गाँवके लोग भी बाते करते थे कि श्री देवकरणजी महाराज कहते थे कि ये ज्ञानी पुरुष है, यह बात सत्य है ।" (उ.पृ. [३४])

अब हम बिलकुल असंग होना चाहते है

"वटवृक्षके नीचे श्रीमद्‌जी बिराजे और उनके सामने छहों मुनि नमस्कार करके बैठ गये । श्रीमद्‌जीके पैरोंके तलबे लाल हो गये थे पर उन्होंने पाँव पर हाथ तक नहीं फेरा । श्री देवकरणजीकी ओर देखकर श्रीमद्‌जीने कहा : "अब हम बिलकुल असंग होना चाहते है । किसीके भी परिचयमें आना अच्छा नहीं लगता । ऐसी संयमश्रेणीमें आत्मा रहना चाहता है ।" श्री देवकरणजीने प्रश्न किया, "ज्ञानी पुरुषकी जो अनंती दया है वह कहाँ जायेगी ?" उत्तरमें श्रीमद्‌जीने कहा–"अंतमें इसे भी छोड़ना है ।" (उ.पू. [२४])

"असंगता अर्थात् आत्मार्थके सिवायके संगप्रसंगमें नहीं पड़ना ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पू. ३७१)

"जिन्होंने तीनों कालमें देहादिसे अपना कुछ भी संबंध नहीं था, ऐसी असंगदशा उत्पन्न की है उन भगवानरूप सत्पुरुषोंको नमस्कार हो ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पू. ६१४)

श्री छगनभाई नरोडावाले बताते है–

नरोडा गाँवके नेशनल हाईवेके पास वटवृक्षके नीचे जहाँ परमकृपालुदेवने मुनिओ और मुमुक्षुओको उपदेश दिया था, वहाँ पर प.पू. प्रभुश्रीजीके कहनेसे यह छोटा मंदिर जैसा बनानेमें आया । इसके बारेमें प.पू. प्रभुश्रीजीने कहा कि प्रभु ! जान अनजानमें इधरसे जाते आते लोग इस छोटे मंदिरको देखकर हाथ जोड़के नमस्कार करेंगे तो वह सच्चे पुरुषको नमस्कार हुआ । इसलिये उसे महान पुण्यका कारण बनता है ।

श्री छगनभाई नानजी लींबडीवाले बताते है –

१) बहोत दिनसे कृपालुदेव भोजन नहीं लेते थे । एक दिन महाराज लल्लुजी स्वामी और देवकरणजी स्वामी दोनोंको विचार आया कि कृपालुदेव अब भोजन ले तो अच्छा । ऐसा उनका अभिप्राय बतानेके लिये उन्होंने कृपालुदेवको पत्र लिखा ।

२) उसी दिन कृपालुदेवने द्राक्ष मंगवाकर भोजन किया और कहा कि मुनिको पत्र लिखो कि आज हमने भोजन लिया है । यहाँसे पत्र वहाँ पहुंचा और उनका लिखा हुआ पत्र यहाँ पर आया ।

"ज्ञानीके प्रति यथार्थ प्रतीति हो और रात-दिन उस अपूर्व योगकी याद आती रहे तो सच्ची भक्ति प्राप्त होती है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७२२)

"सर्वथा निर्विकार होनेपर भी परब्रह्म प्रेममय पराभक्तिके वश है, इसका जिन्होंने हृदयमें अनुभव किया है, ऐसे ज्ञानीयोंकी गुप्त शिक्षा है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २६६)

"कृपालुदेव श्री सद्गुरु प्रभुकी मुद्रा तस्वीरको हृदय मंदिरमें स्थापित कर, खड़ी करके मनको वहाँ लीन करना । परमशुद्ध चैतन्यका निवासधाम ऐसा जो श्री सद्गुरुका पवित्र देह उसका वीतरागभावसें ध्यान करनेसे भी जीव शांत दशाको प्राप्त होता है, ये भूलने जैसा नहीं है ।" (उ.पृ. ८)

सर्वस्व अर्पण करनेवाला सबसे बड़ा

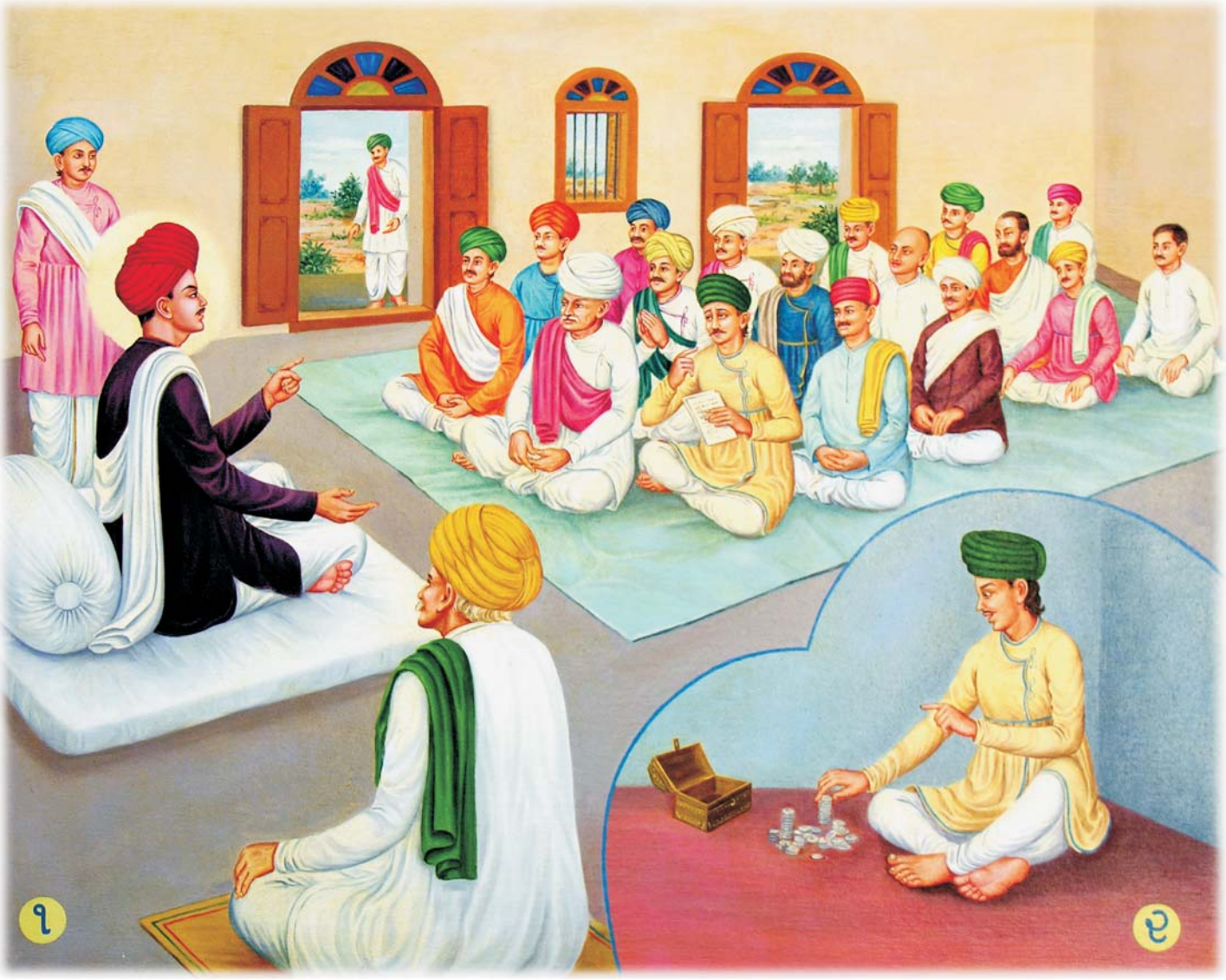

श्री हीरालाल नरोत्तमदास बताते है कि–

१) वढ़वाण केम्पमें मुमुक्षुके बीचमें परमकृपालुदेव द्वारा स्थापित 'श्री परमश्रुत प्रभावक मंडल' के खातेकी टीप्पण चल रही थी। उस वक्त मेरे दिलमें विचार आया कि परमकृपालुदेव आज्ञा करे तो मेरे अंगत इकट्ठे किये हुए करीबन तीस रुपये है वे सब इस खातेमें देकर कृतार्थ हो जाऊँ। इतनेमें परमकृपालुदेवने कहा कि यह टीप्पण हीराभाईको पढ़ने दो। उसमें बड़ी रकम लिखी हुई देखकर, अपनी छोटीसी रकम क्या हिसाबमें, ऐसा जानकर मैं संकुचित मनसे मौन रहा। तब परमकृपालुदेवने स्वाभाविक कहा कि हीराभाई संकुचित होने जैसा नहीं है। तुम्हारी पेटीमें निजी ५१ रुपये है। तुमने सब पैसा अर्पण करनेका विचार किया है। जबकि दूसरे भाईयोंने अपनी रकमका थोड़ा भाग ही अर्पण किया है; इसलिये दूसरोकी अपेक्षासें तुम्हारी रकम ज्यादा गीनी जाय। साहेबजीकी यह बात सुनकर मैंने रू. ५१ टीप्पणमें लिखवा दिये।

२) अहमदाबाद जाकर मेरी निजी पेटी खोलकर गिनती करके देखा तो रुपये, पैसे, पाई आदि सब मिलाकर पूरे ५१ रुपये हो गये। उसमें एक पाई भी न बढ़ी या न घटी।

"मुख्यतः जिसमें आत्माका वर्णन किया हो वह 'अध्यात्मशास्त्र'।
जो गुण अक्षरोमें कहे गये है वे गुण यदि आत्मामें रहे तो मोक्ष होता है।" –श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७१६)

सभाके बीच स्त्री और लक्ष्मीका त्याग

"अहमदाबादमें श्रीमद्ने श्री देवकरणजीसे कहा–"हमने सभामें स्त्री और लक्ष्मी दोनोंका त्याग किया है; और सर्वसंग परित्यागकी आज्ञा माताजी देगी ऐसा लगता है ।" -जीवनकला (पृ. २५९)

"लक्ष्मीका त्याग करनेके बाद श्रीमद् बहुत सूक्ष्मतासे व्रतका पालन करते थे । रेलगाडीका टिकट तक भी अपने पास नहीं रखते थे ।" -जीवनकला (पृ. २६०)

मुनियोंको शास्त्रदान

१) संवत् १९५७ में अहमदाबाद आगाखानके बंगलेमें श्रीमद् अपनी मातुश्री और पत्नी सहित पधारे थे । तब उनके हाथसे मुनिओको हस्तलिखित ग्रंथोका शास्त्रदान देनेके लिये बातचीत करते है ।

२) श्री लल्लुजीस्वामी आदि मुनि चातुर्मास पूर्ण करके अहमदाबाद आये । उस वक्त श्रीमद्के पास हाथसे लिखे हुए दो बड़े दिगंबरी ग्रंथ 'ज्ञानार्णव' और 'स्वामी कार्तिकेयानुप्रेक्षा' नामके थे । उसमेंसे 'ज्ञानार्णव' नामका ग्रंथ अपने मातुश्री देवमाताके हाथसे मुनिश्री लल्लुजी स्वामीको और 'कार्तिकेयानुप्रेक्षा' नामका ग्रंथ अपनी पत्नी झबकबाईके हाथसे मुनिश्री देवकरणजीको भेट किया गया ।

३) डॉ. प्राणजीवनदास, आगाखानके बंगले पर बैठे थे । उनको श्रीमद्ने कहा–"ये दो मुनि श्री लल्लुजी और देवकरणजी चौथे आरेके मुनि जैसे है । चौथे आरेके नमूने है ।" -जीवनकला (पृ. २५७)

परमकृपालुदेव पत्रांक ८७५में अकेले श्री लल्लुजी मुनि (प.पू.प्रभुश्रीजी) को लिखते है कि–

"परमकृपालु मुनिवर्यके चरणकमलमें परम भक्तिसे सविनय नमस्कार प्राप्त हो ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६४५)

इस गुणसंपन्न संबोधनसे प.पू. प्रभुश्रीजी मोक्षमार्ग दिखानेमें परम विश्वंसनीय पुरुष सिद्ध होते है ।

श्रीमद्‌जीकी आत्मा शांत सिंह जैसी

वढ़वाण केम्पमें श्री छगनभाई नानजीभाई लींबडीवाले तथा श्री मनसुखभाई रवजीभाईको परमकृपालुदेवने कहा कि– सोनेका पिंजर खुल गया है । सिंहको रखना अब हाथ नहीं । दरवाजा खुल गया, सिंह जानेकी तैयारीमें है । कहनेका आशय ऐसा मालूम होता है कि सिंह जैसा हमारा आत्मा, इस शरीररुपी पिंजरको छोड़कर चला जायेगा ।

इस बारेमें छगनभाई बताते है कि उस समय परमकृपालुदेवका प्रत्यक्ष स्वरूप देखा हो तो शरीर पिंजर जैसा और आत्मा शांत सिंह जैसा जान पड़ता था ।

"सत्य प्रगटावनारा गुरु नहीं मल्या, शिष्यनुं चित्त कां कांई थाक्युं,
सिंहसम सद्‌गुरु शूरवीर विरला, भेटतां भाग्य भुंडुंय भाग्युं ।" -बो.३ (पृ.३०)

"रे सिंहना संतानने शियाल शुं करनार छे ?
मरणांत संकटमां टके ते टेकना धरनार छे ।" -वीरहाक

"जिनको ज्ञानीका आश्रय मिला है वे सिंहके संतान जैसे है ।" -बो.३ (पृ. १११)

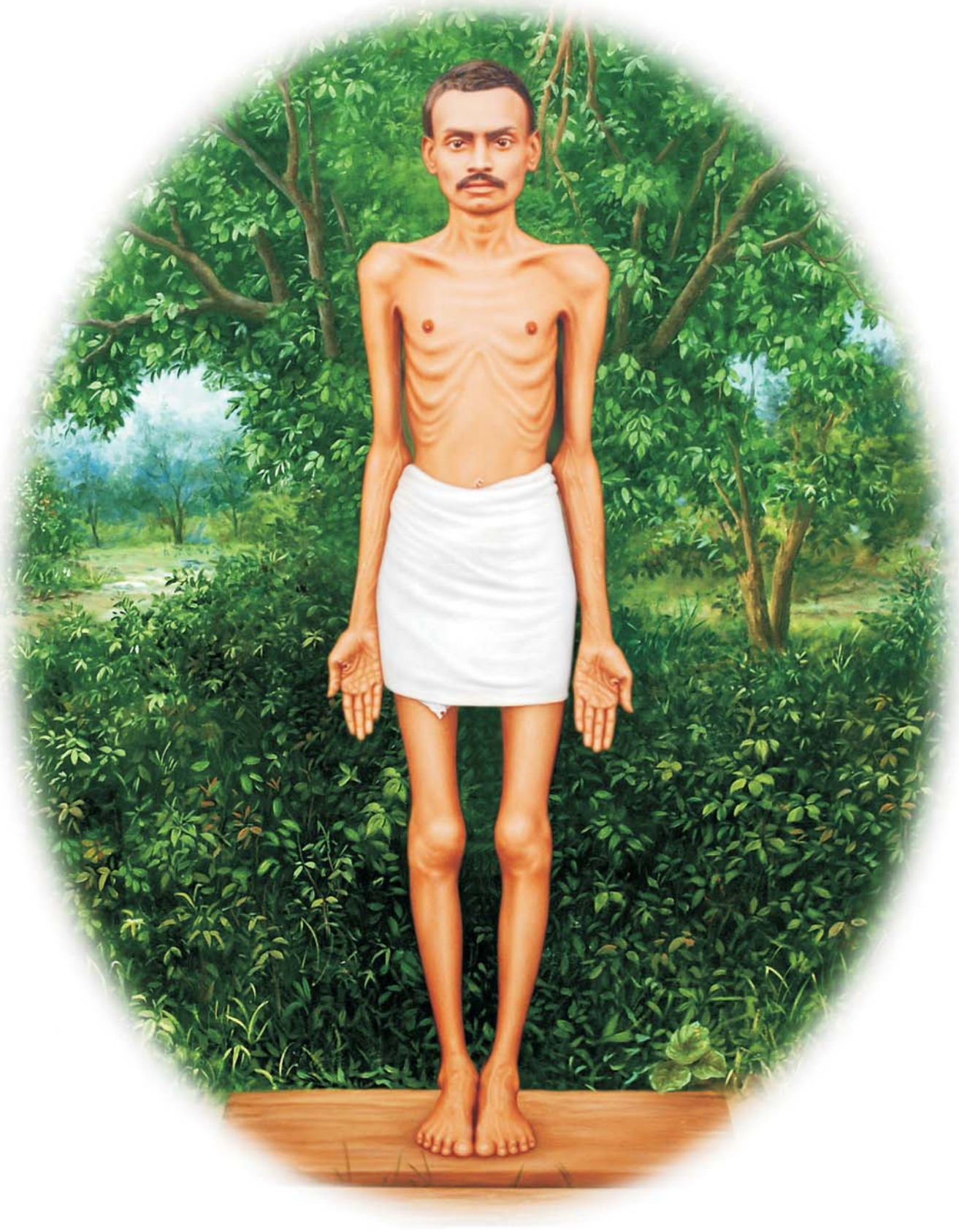

वर्ष ३३ **श्रीमद् राजचंद्र** वि.सं. १९५६

मैं मेरे आत्मस्वरूपमें लीन होता हूँ

१) जिस मकानमें परमकृपालुदेव समाधिस्थ हुए वह मकान 'नर्मदा मेन्सन' ।

२) श्री मनसुखभाई बताते है कि–

"देहत्यागके अगले दिन शामको रेवाशंकरभाई, नरभेराम, मैं इत्यादि भाइयोंको कहा–'आप निश्चिंत रहना, यह आत्मा शाश्वत है, अवश्य विशेष उत्तम गतिको प्राप्त होनेवाला है, आप शांति और समाधिपूर्वक रहना । जो रत्नमय ज्ञानवाणी इस देहके द्वारा कही जा सकनेवाली थी उसे कहनेका समय नहीं है । आप पुरुषार्थ करना ।" -जीवनकला (पृ. २६३)

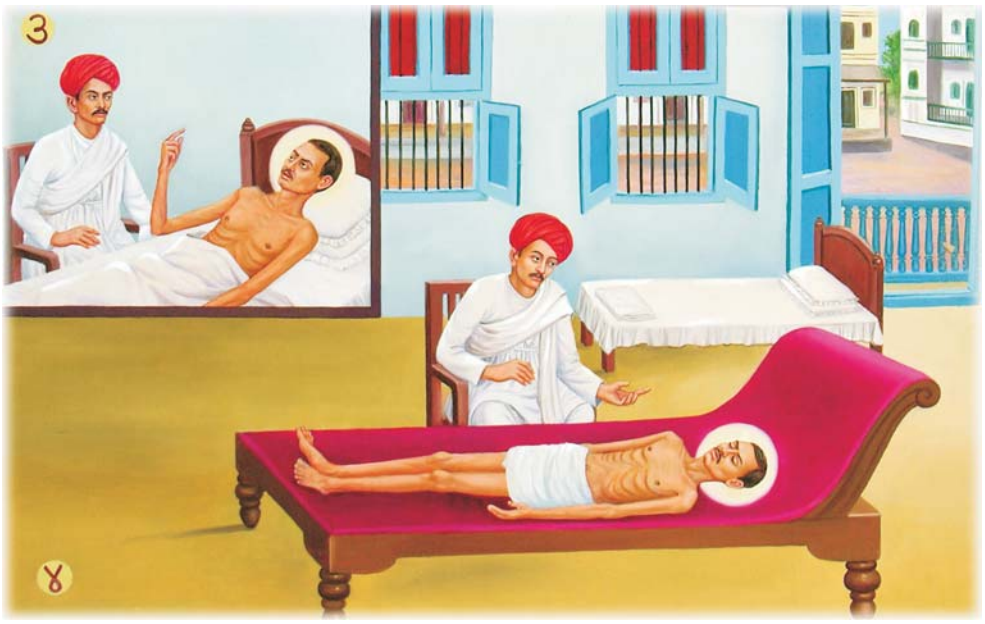

३) रातको ढ़ाई बजे अत्यंत सर्दी हुई, उस वक्त उन्होंने कहा : "निश्चिंत रहना, भाईका समाधिमरण है ।"

साढ़े सात बजे, जिस बिछौने पर सोये थे उस परसे एक कोच (पलंग) पर बदलनेकी मुझे आज्ञा की । अतः मैंने, समाधिस्थ भावसे सोया जा सके ऐसे कोच पर व्यवस्था की ।" -जीवनकला (पृ. २६३)

"पौने नौ बजे कहा–मनसुख दुःखी मत होना, माँको ठीक रखना । **मैं मेरे आत्मस्वरूपमें लीन होता हूँ ।"**

-जीवनकला (पृ.२६३)

उत्तम समाधिमरण

श्री मनसुखभाई बताते है कि–"जिस कॉच पर श्रीमद्की आत्मा और पवित्र देह समाधिस्थ भावसे अलग हुए; वहाँ लेश भी आत्मा अलग होनेके चिह्न दिखाई नहीं दिये । ज्यों ज्यों प्राण कम होने लगे त्यों त्यों मुखमुद्राकी कांति विशेष रूपसे प्रकाशित होने लगी । वढ़वाण केम्पमें जिस स्थितिमें खड़े खड़े चित्रपट खिंचवाया था उसी स्थितिमें कॉच पर परमकृपालुदेव पाँच घण्टे तक समाधिस्थ रहे । लघुशंका, दीर्घशंका, मुँहमें पानी या आँखोमें पानी या पसीना कुछ भी पौने आठसे दो बजे तक प्राण अलग हुए तो भी कुछ दिखाई नहीं दिया । दूध पीनेके पश्चात् एक घण्टेमें हमेशां शौच जाना पड़ता था उसके बदले आज कुछ भी नहीं । जिस प्रकार यंत्रको चाबी देकर आधीनकर लिया जाता है उसी प्रकार किया था । ऐसे समाधि स्वभावसे उस पवित्र आत्मा और देहका संबंध छूट गया ।" -जीवनकला (पृ.२६२)

"श्रीमद्के देहत्यागके समय श्री नवलचंदभाई भी उपस्थित थे । श्री अंबालालभाईके पत्रमें वे लिखते है कि–"निर्वाणसमयकी मूर्ति अनुपम, चैतन्यव्यापी, शांत, मनोहर और देखते हुए तृप्ति न हो ऐसी शोभायमान थी । ऐसा गुणानुरागीयोंको तो लगेगा लेकिन जो दूसरे संबंधसे उपस्थित थे उन्हें भी चकित करनेवाली और पूज्यभाव जगानेवाली मालूम होती थी । उस समयके अद्भुत स्वरूपका वर्णन करनेके लिये आत्मामें जो भाव उठते है वे लिख नहीं सकता हूँ ।"

"संवत् १९५७ के चैत्र वद ५, मंगलवारको दोपहरके दो बजे श्रीमद् राजचंद्र महात्मा इस क्षेत्रका और नाशवंत शरीरका त्याग करके उत्तम गतिको प्राप्त हुए । अब हमको किसका आधार रहा ? केवल उनके वचनामृत और सद्वर्तनका अनुकरण करना यही महान अवलंबन मैं मानता हूँ ।" -जीवनकला (पृ. २६४)

૧
૨
૩
૪

परमकृपालुदेवके वियोगसे हृदयमें असह्य विरहवेदना प्रगटी

श्री अंबालालभाईने अपनी विरह वेदना एक पत्रमें प्रगट की वह इस प्रकार है :—

ॐ

← "विशाल अरण्यमें अति सुन्दर और शांतिप्रदायक एक ही वृक्ष हो, उस वृक्षमें निःशंकतासे, शांतिपूर्वक, कोमलतासे सुखानन्दमें पक्षीगण कलरव करते हो, वह वृक्ष अचानक दावाग्निसे प्रज्वलित हुआ हो उस वक्त उस वृक्षसे आनंद पानेवाले पक्षियोंको कितना दुःख प्राप्त होगा ? कि जिन्हें एक क्षण भी शांति नहीं होगी ! अहाहा ! उस समयके दुःखका वर्णन करनेमें महान कविश्वर भी असमर्थ है; वैसा ही अपार दुःख घोर अटवीमें इन पामर जीवोंको देकर हे प्रभु ! आप कहाँ गये ?

हे भारत भूमि ! क्या देह होते हुए भी विदेहरूपमें विचरते ऐसे प्रभुका भार तुझसे वहन न हुआ ? यदि ऐसा ही है तो इस पामरका ही भार तुझे हलका करना था; किन्तु ऐसा न करके तूने व्यर्थ ही इसे अपनी पृथ्वी पर बोझरूप कर रक्खा ।

हे महा विकराल काल ! तुझे जरा भी दया न आई ! छप्पनके महादुष्काल में तूने लाखों मनुष्योंका भोग लिया, तो भी तू तृप्त नहीं हुआ; और उससे भी तेरी तृप्ति न हुई थी तो पहले इस देहका ही तुझे भक्षण करना था, किन्तु ऐसा न करके ऐसे परमशान्त प्रभुका तूने जन्मान्तरका वियोग करवाया ! अपनी निर्दयता और कठोरताका शिकार मुझे बनाना था ! तू हँसमुख होकर मेरी ओर देखता क्या है ! -जीवनकला (पृ. २६६)

हे शासनदेवी ! आपका परिबल इस बार कालके सम्मुख कहाँ चला गया ? आपके शासनकी उन्नतिकी सेवा बजानेमें अग्रेसररूप साधनभूत प्रभु थे; जिसकी सेवामें आप त्रिकरणयोगसे नमस्कार करके हाजिर रहती थी सो आप इस वक्त किस सुखमें निमग्न हो गई कि यह महाकाल क्या करने लगा है इसका विचार ही नहीं किया ?

हे प्रभु ! आपके बिना हम किसके पास शिकायत करेंगे ? आपने ही जब निर्दयता दिखाई तो अब दूसरा दयालु होगा ही कौन ? हे प्रभु ! आपकी परम कृपा, अनन्त दया, करुणामय हृदय, कोमल वाणी, चित्तहरण शक्ति, वैराग्यकी तीव्रता, बोधबीजकी अपूर्वता, सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्रकी संपूर्ण उज्जवलता, परमार्थलीला, अपार शांति, निष्कारण करुणा, निःस्वार्थी बोध, सत्संगकी अपूर्वता आदि उत्तमोत्तम गुणोका मैं क्या स्मरण करुं ? विद्वान कवि और राजेन्द्र देव आपका गुणस्तवन करनेमें असमर्थ हैं, तो इस कलममें अल्प भी समर्थता कहाँसे आयेगी ? आपके परमोत्कृष्ट गुणोंका स्मरण होनेसे मैं अपने शुद्ध अंतःकरणसे त्रिकरण योगसे आपके पवित्र चरणारविन्दमें अभिवंदन करता हूँ । आपका योगबल आपके प्रकाशित किये हुए वचन और दिया हुआ बोधबीज मेरा रक्षण करें, यही सदैव चाहता हूँ । आपने सदैवके लिये वियोगकी यह स्मरणमाला दी है, उसे अब मैं विस्मृत नहीं करुँगा ।

खेद, खेद और खेद; इसके बिना और कुछ नहीं सूझता । रात-दिन रो रो कर गुजारता हूँ; कुछ सूझ नहीं पड़ती ।"

-जीवनकला (पृ. २६७)

आत्मदाता सद्‌गुरुका वियोग असह्य

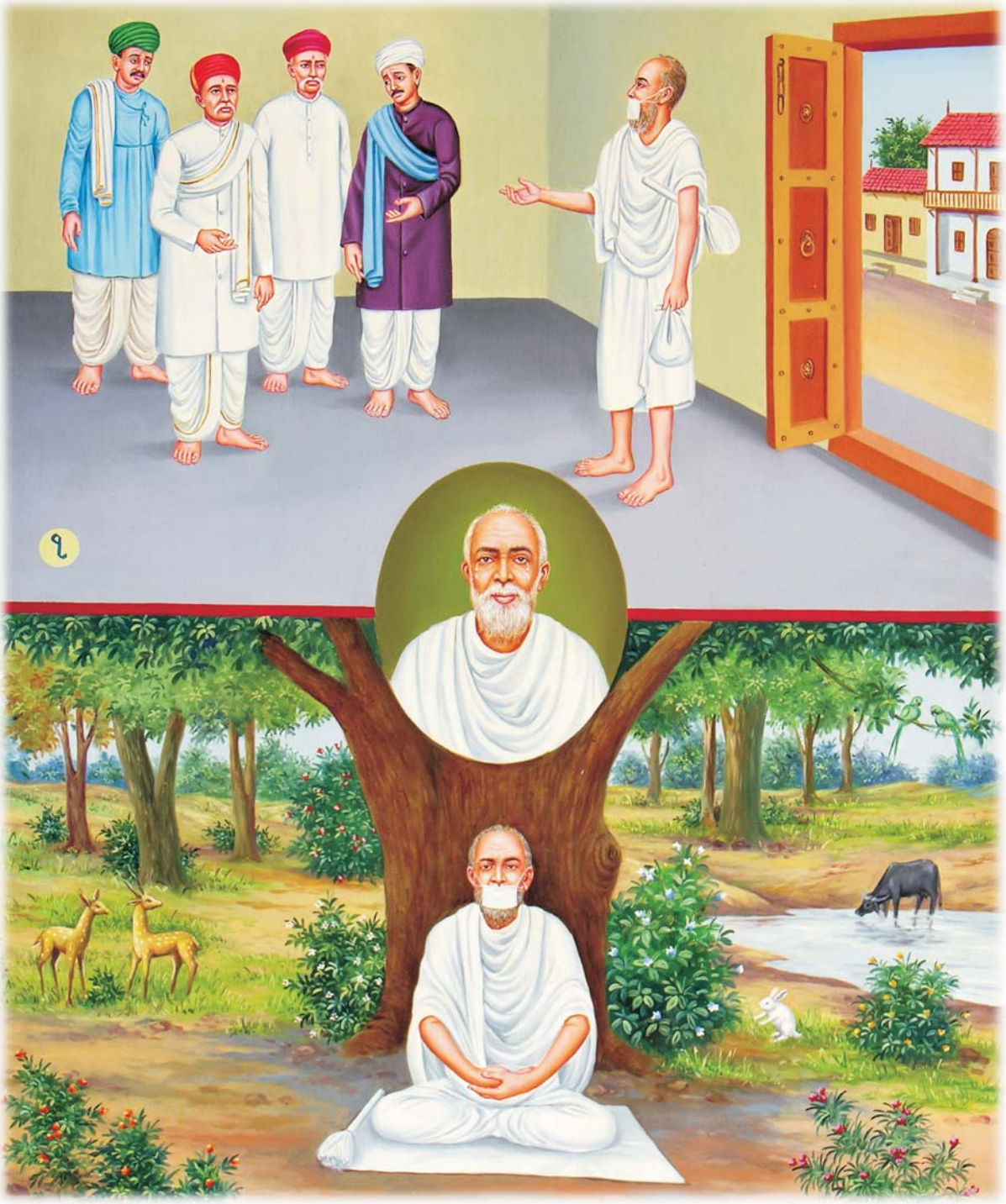

"श्रीमद्‌के देहान्तके समाचार काविठा आये, उस समय श्री लल्लुजी महाराज आदि काविठामें थे। अगले दिन उन्होंने उपवास किया था और एकान्त जंगलमें रहनेका उन्हें अभ्यास था। वे पारणाके समय गाँवमें आये तब मुमुक्षु आपसमें बात कर रहे थे; उस विषयमें पूछताछ करने पर उन्हें श्रीमद्‌के देहान्तके समाचार मिले कि वे तत्काल वापस जंगलमें चले गये और आहारपानी कुछ भी लिये बिना एकान्त जंगलमें ही यह वियोगका समय बिताया। उन्हें बहुत ही आघात लगा था। उस दिन उन्होंने पानी भी नहीं लिया। रातको दूसरे मुनियोंने भी उनकी बहुत परिचर्या की थी। धर्मके महान अवलंबन रूप और पोषण देनेवाले कल्पवृक्ष समान श्रीमद् सद्‌गुरुका वियोग प्रत्येक धर्मात्माको असह्य हो पड़ता है।" -जीवनकला (पृ. २६५)

"अतिशय विरहाग्नि हरिके प्रति जलनेसे साक्षात् उनकी प्राप्ति होती है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २८७)

परमकृपालु श्रीमद् राजचंद्र प्रभुके देहोत्सर्गके समयमें पेपरोमें उनकी प्रशंसा छपी थी उनके ओरिजिनल पेपरके नमूने

તા રી ખ ૨૩ મી એ પ્રી લ

મરહુમ મહાન જઈન તત્વવેત્તા અ ને હીંદના એક પુરેપુરા શત્તાવધાની કવીશ્વર શ્રીમત રાજ્યચંદ્ર રવજીભા ઈની યાદગારી કાયમ રાખવાની સુચના.

મુંબઈ સમાચારના અધીપતી જોગ.

સાહેબ,–મહાન તતવવેતા અને હીંદના એક પુરેપુરા શતાવધાની કવીશ્વર શ્રીમત રાજયચંદ્ર રવજીભાઈના યુવાન વયે સ્વરગ ગમનથી આખી જઈન કોમે એક મોટામાં મોટો ધરમ વરૂ ધી પ્રકાશક ઉપદેષટા ગુમાવયો છે, ગુજરાતી ભા ષ એ તેનો એક મહાન કવી ગુમાવયો છે, અ ને હીંદે પોતાનો એકલોજ રતન રૂપ શતાવધાની ખોહયો છે. તેમનાથી હીંદે પોતાનું એક મઉનપ ણે હીત કરયે જતું રતન ગુમાવયું છે, અને તે થી આ દેશની બીજી આફતોમાં એક મોટી આફતનો વધારો થયો છે. મહાન પુરૂષોની યા દગારી રાખવાનો રીવાજ એટલા માટેજ ચાલે છે કે, આવી ભયંકર આફતોમાંથી પોતાનું ર ક્ષણ કેમ કરવું, તે ઉપદેશનારા તે પુરૂષોનું સ્મરણ રહે તો ભવીષ્યની ઓલાદને તેમનું અ નુકરણ કરી તે આફતો દુર કરવાની પોતાની પવીત્ર ફરજની સમજ પડે.

શ્રીમત રાજયચંદ્ર મઉનપણે દેશની અને ખાસ કરી જઈન ધરમની ઉનતી વધારવામાં જે પ્રયાસ કરયે જતા હતા, તેવા પ્રયાસ કવીપણે ક રનારા આપણા દેશમાંથી વીરલાજ નીકલી આ વશે. ખરૂં કહીએ તો આંગલીને ટેરવે ગણી શ કાય તેટલા પણ મળવા મુશકેલ છે. આવા પુરૂષ નું સ્મરણ હંમેશાં ચીરંજીવ રહે તે માટે મહેનત કરવાની પવીત્ર ફરજ દરેક દેશાભીમાની અને તે માં પણ ખાસ કરી જે ધરમનું તે રતન હતું તે ના અગ્રેસરોની છે.

શ્રીમતની વીસ વરસ પહેલાની કારકીરદી આશ્ચરયકારક છે. તેઓની શતાવધાન કરવાની જે અદભુત શકતી હતી તેથી એક વખત આખું હીંદ ચકીત થઈ ગયું હતું. સર ચારલસ સર જંટ જે આપણી હાઇ કોર્ટના મુખય નયાયાધી શ હતા. તેઓ તેમની આવી હેરત પમાડનાર શકતીથી મોહીત થઈ ગયા હતા, અને પોતાની સાથે ઈંગલેંડ આવવા માટે તેમને આગ્રહ કરયો હતો. વીસ વરસે જે પુરૂષની આટલી યોગયતા હતી, તે પુરૂષને માટે જે દેશને તેણે જનમ થઈ દીપાવયો હતો. તેણે શું ન કરવું જોઈએ ?

વીસમાં વરસથી તેઓ વયાપારમાં જોડાયા હતા, અને એક બાહોશ અને મોટા વેપારી ત રીકે કીરતી મેલવી હતી. છતાં તેઓ વીદેહી જે વાજ રહી લોકોમાં ધરમાંધપણું વયાપી રહયું છે, તે દુર કરવા માટે સતત મહેનત કરતા હ તા, અને તેમનાજ પ્રતાપથી ગુજરાત અને મું બઈ ઇલાકાના ઘણા ભાગમાં ખોટું ધરમાંધપણું અને મતમતાંતરોના કલેશ દુર થવા પામ યા હતા, અને લોકો સમજવા લાગયા હતા કે, ખોટા ધરમાભીમાનપણાથી આતમા અ ને પોતાના દેશનું અકલયાણજ થાય છે. આવી રીતે ઉપદેશ આપવામાં તેઓએ ચઉદ વરસ ગા ળયાં હતાં, જે દરમયાન તેમના સેંકડો અનુયા યીઓ થઈ ગયા હતા.

હું અંતઃકરણથી એમ માનું છું કે ધર મ સંબંધીનો કદાગ્રહ દુર કરાવવામા તેઓજ હાલના વખતમાં એકલાજ કામ કરતા હતા. જ ઈન મારગમાં જે સેંકડો ફાંટાઓ પડી ગયા છે તેનું મુખય કારણ અજ્ઞાનતા છે, એવું સમજા વી સમજાવી લોકોમાં એકયતા દાખલ કરાવ વાની તેઓની મહેનત અથાગ હતી. આવા પુ રૂષની યાદગારી કાયમ રહે તે માટે કાંઈ કરવા ની શું આપણી ફરજ નથી કે ? મોટામાં મોટી ફરજ મારી માનયતા પ્રમાણે જઈન કોમની છે કેમકે તેઓ તેમનો એ ઉધાર કરવાનેજ જ તે હતા. આટલી નાની વયમાં જે પુરૂષે આટલું કરયું તે પુરૂષ વધારે વરસ જીવયા હોત તો શું ન કરત ? જો કોઈ પણ પુરૂષની જીંદગી ખાસ અનુકરણ કરવા જેવી હોય તો તે આ પુરૂષની જ છે હું આશા રાખું છું કે મારી આ સુ ચનાને તેઓના અનુયાયીઓ તેમના વેપારી મી ત્રો આખી જૈઇન કોમ અને વીદવાન વરગ ત રત ઉપાડી લેવાની અવશય પોતાની ફરજ સમજશે.

લી૦ સેવક,
સુખલાલ છગનલાલ સંઘવી
ભરૂચ, તા૦ ૨૧ મી એપ્રીલ સને૧૯૦૧.

મું બ ઇ સ મા ચા ર સો મ વા ર તા રી ખ ૨૭ મી મે. ૧૯૦૧

મરહુમ જઈન શતાવધાની તથા ફીલસુફ રાજેંદ્ર રવજીભાઈનાં મરણ ઉપરથી ઉપજ તા વીચારો.

મરહુમ જઈન શતાવધાની તથા ફીલ સુફ રાજેંદ્ર રવજીભાઈનાં મરણની ખબર જ્યારે જઈન કોમમાં ફેલાઈ ત્યારે સઘળા વર્ગો વચે ઘણીજ દલગીરી પ્રસરી હતી, તે વાંચનારાઓને યાદ હશે. શતાવધાનના પ્ર યોગોથી, શીઘ્રકવી તરીકેની શકતીથી તથા જઈન ધર્મ વીષેનાં પોતાનાં બહોળાં જ્ઞાનને લીધે, મરહુમ રાજેંદ્ર જઈન કોમમાંજ નહી પણ પરકોમમાં પણ ઘણા જાણીતા થયા હ તા, અને જઈન કોમ તો તેમને ઘણુંજ માન આપતી હતી. મરહુમની પ્રત્યે જઈન કોમ કેટલો પ્યાર તથા માન ધરાવતી હતી તેનો પુરાવો એજ છે કે, તેમનાં મરણ પ છી થોડા દીવસમાં ગ્યારહ હજાર રૂપ્યાની રકમ મરહુમનો યાદગારી માટેનાં ફંડમાં ભ રાઈ છે. તેટલું માન મેળવવાને તેઓ ભા ગ્યશાળી થયા તેનું કારણ કાંઈ એકલા શતા વધાનના પ્રયોગોનું, અથવા જઈન ધર્મ પુ સ્તકો વીષેનાં તેમનાં જ્ઞાનનું નહી હતું, પણ તે એ ઉપરાંત શીઘ્રકવી તરીકેની ત થા જઈન ધર્મોપદેશક તરીકેની તેમની બા હોશીનું પણ હતું.

" We have had a visit from a young prodigy, Shatavadhani Kavi Shri Raichandra Raoji, inhabitant of Vavania, between Kutch and Morbi. Mr. Raichandra is a Bania by caste, a versifier by birth, and by birth also a *Shatavadhani*, that is one whose mnemonic powers will perform, we suppose, 100 different functions at one and the same time. He knows no other language but the Gujerati, and yet he can exercise his marvellous powers on sixteen different tongues. We shall be glad to introduce him to earnest inquirers. —"*Indian Spectator.*"

જૈન ફીલસુફ કવી રાયચંદ્ર અને તેમનું સ્મારક ફંડ.

મુંબઈ સમાચારના અધીપતી જોગ.

સાહેબ,–જઈન ધરમનોજ નહીં પણ બ ધા ધરમોનો ઉંડો અભયાસ કરી બહોળું જ્ઞાન ધરાવનાર કવી રાયચંદ્ર હાલમાં રાજકોટમાં ગુજ રી જવાથી આખા દેશને એક મોટી ખોટ ગઈ છે. એઓનું ધયાન એટલું ચોકસ અને યાદ દાસ્ત શકતી એટલી મકકમ હતી કે એકવાર વાંચેલું કદી ભુલતા નહી હતા. તેઓ શતાવધા ની એટલે એકસો કામ સાથે કરી શકતા હતા. ચારસો માણસોની ઉચારેલી જુદી ભાષાના શ બદો અનુકમે કહી સંભળાવતા હતા. એ બાબ તમાં એમની મોટાઇ નથી. એક તટસ્થ તરીકે જણાવું છું કે તેઓ એક મહાન વીદવાન અ ને એકમારગી હતા. જાહેરમાં આવયા વીના મુંગે મહોંડે સરૂષટીનું અને પોતાનું શ્રેય શામાં રહેલું છે તેની પાછળ લાગયા હતા. તેમનો ઉપદેશ એ હતો કે બહાર દેખાવમાં આવી ઘણું બોલવા કરતાં કરીનેજ સારૂ કામ બતાવવુ જોઇએ. એટલુંજ નહી પણ સદવરતનનો ઉપદેશ ન કર તાં જાતે સદગુણી થવું કે જેથી બીજા તેવું ક રવાની કોશિશ કરે જેથી સરૂષટીને સામાનય લાભ થાય. એઓના પ્રમાણીકપણાનો, ખંતની, સત્ય તાની, નીરભીમાનીપણાની અને ધરમ કારયને માટે પોતાનાં ખાનગી કામો છોડી દેવાની આદત જગે જગે પ્રશંસનીય થઈ રહી છે. એઓના ખાનગી ઓરડામાં ભુરશી પાસે, ટેબલપર, બીસ્તરપર, જગે જગે જાત જાતનાં પુસ્તક શીવાય કશું નજર આવતું ન હોતું.

એઓની દલીલો સચોટ હતી અને યુકતી પુરવક એવો જવાબ આપતા કે પુછનાર સંતોષી થઈને જતો.

એઓના અકાળ મરૂતયુથી વધુ દુઃખ એટલા માટે થાય છે કે તેઓની પરમ ઇચ્છા કા રયમાં મુકવાનો સમય આવે તે પહેલાં આયુ ષ કરમ ખુટયું.

શ્રધાથી નહીં પણ ભુમીતીની પેઠે વીતરાગ ના સીધાંતો સીધ કરી અજ્ઞાન દશાને દુર કરવી, તે માટે મઉનપણામાં પોતાનું જીવન ગાળતા હ તા. તમામ સામગ્રીઓ–વીદવતા, અભયાસ, લ ક્ષમી, કુટુંબ સંપતી અને કીરતી એ બધુ મે ળવયા પછી તેને વીષે ઉદાસીનપણું સંપુરણપણે રાખવાનું સામરથ મેળવયું હતું. તઈયાર થઈ ર હેવાનો વખત આવયો ત્યાં તે નીરૂપયોગી ચઈ પડી.

"પાયોનીર" પત્રે એ બાબતમાં કરેલી સુ ચના ઘણીજ ઉત્તમ છે. તે સુચના એવી છે કે, મરહુમની યાદગારી રાખવા માટેનાં ફંડ ની જે આવક દરવરસે થાય તેમાંથી પ્રાચીન જઈન ધર્મ પુસ્તકો, જે કદી પણ પ્રગટ થયે લાં નહીં હોય તે પ્રગટ કરાવવાં, તથા જઈન ધર્મને લગતાં પુસ્તકોનો એક મોટો સંગ્રહ કરી તેને "રાજેંદ્ર રવજીભાઈ પુસ્તકાલય" નું નામ આપવું. આ સુચના જઈન કોમને ના પસંદ થઈ પડે એવી તો કદાચજ કહેવાશે.

न्यायाधीश धारशीभाईको धर्मप्राप्तिकी आतुरता

श्री धारशीभाई कर्मग्रंथके अभ्यासी थे । धंधुकामें श्री लल्लुजी मुनिका चातुर्मास था । वहाँ वे दर्शन समागम हेतु आये और मुनिश्री लल्लुजीको उपाश्रयकी मंजिल पर पधारनेकी विनंती की । फिर विनयपूर्वक धारशीभाईने उनको साष्टांग दंडवत् करके कहा–

सं. १९५७ में श्रीमद्के देहत्यागके ५-६ दिन पहले मुझे उन्होंने कहा था कि श्री अंबालाल, श्री सोभागभाई और आपको उनकी हाजरीमें अपूर्व स्वरूपज्ञान प्राप्त हुआ है वे शब्द मेरे आत्महितके लिये ही थे । अब आप मेरे अवलंबनरूप है । परमकृपालुदेवने आपको बताई हुई आज्ञा कृपा करके मुझे दीजिये । मेरी अब अंतिम उम्र है और मैं खाली हाथसे मृत्युको पाउँ उसके जैसा दूसरा क्या शोचनीय है ? आज आप अवश्य कृपा करीये, ऐसा बारबार कहकर कुछ प्रसादी देनेकी विनंती की ।

जिससे श्री लल्लुजी मुनिने, स्मरणमंत्र मुमुक्षुको बतानेकी परमकृपालुदेवने जो आज्ञा की थी वह उनको बताया । उसका आराधन मृत्युके अंतिम समय तक करके श्री धारशीभाईने दुर्लभ ऐसे समाधिमरणको प्राप्त किया ।

परमकृपालुदेवकी उपस्थितिमें श्री जूठाभाईको भी स्वरूपज्ञान प्रगट हुआ था । उसका उल्लेख 'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमें पत्रांक ११७ में मिलता है ।

प्रत्यक्ष परमगुरु परमकृपालुदेव

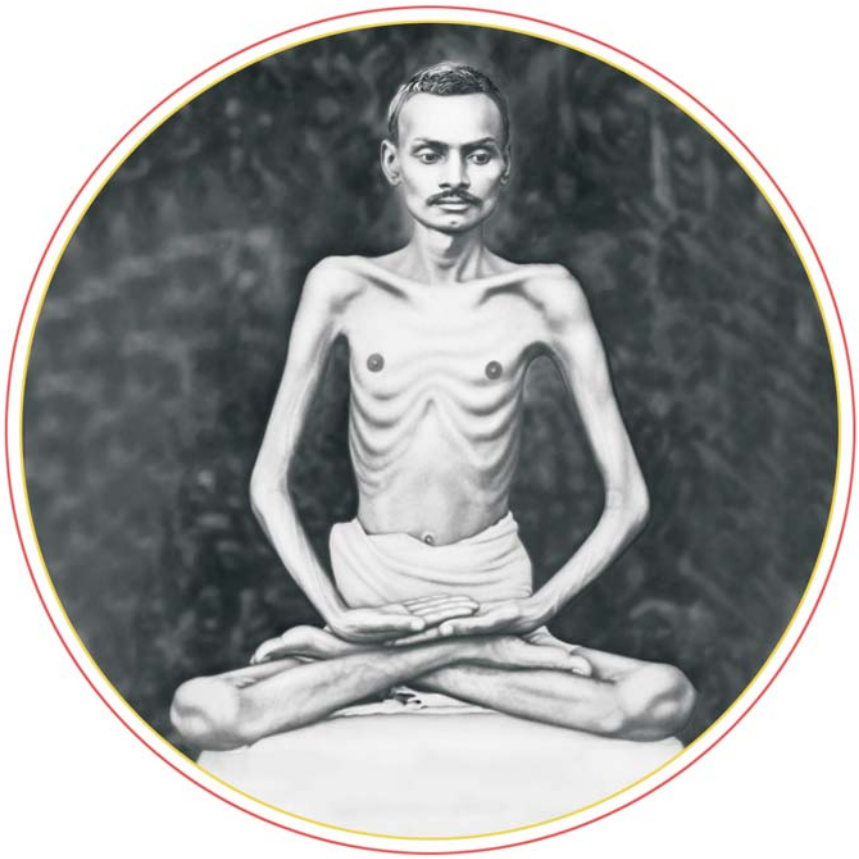

अब हमको आधाररूप कौन ? प्रत्यक्ष परमगुरु परमकृपालुदेव । प्रत्यक्ष सत्पुरुषके बिना स्वरूपस्थिति प्राप्त होना संभव नहीं है ऐसा परमकृपालुदेवने कहा है ये बात यथार्थ है । लेकिन प्रत्यक्ष सत्पुरुष किसको कहना ? कि जिसकी आज्ञामें रहकर आत्मकल्याणकी साधना की जाय ।

सबसे पहले प्रत्यक्ष सत्पुरुष आत्मज्ञानी होने चाहिये । आत्माकी बाते करके दिलमें अपनी मान्यता या पूजा करानेकी वासना भरी हो ऐसे नाम मात्र ज्ञानी जीवोंका कल्याण कर नहीं सकेंगे । गुरु होना बडा जिम्मेदारीका काम है । जो असद्गुरुके लक्षण होंगे और हम गुरुके रूपमें मान्यता करवाते होंगे तो तीस महामोहनीय कर्मके मार्गमें प्रवेशकर अनंत संसारको बढ़ायेंगे ।

वर्तमानकालमें परमकृपालुदेवके उपदेशानुसार सच्चे आत्मज्ञानी गुरुकी प्राप्ति अत्यंत दुर्लभ है । इसलिये प.पू. प्रभुश्रीजीके कथनानुसार ऐसे कालमें परमकृपालुदेवको ही गुरु मानकर जीवनपर्यंत उनका दासत्व स्वीकार कर उनकी ही भक्तिमें लीन होना ये मुक्तिमार्गका संपूर्ण सुरक्षित उपाय है । प्रत्यक्ष सत्पुरुष प्राप्त करनेके हेतु कही पर भटकने जैसा नहीं है । नहीं तो जो सत् मिला है उसे भी जीव खो बैठेगा, ऐसा पूज्यश्री ब्रह्मचारीजीने बताया है ।

जिसने आत्मस्वरूप प्रकट किया वे प्रत्यक्ष ज्ञानी ऐसे निकट भूतकालमें हुए परमकृपालु श्रीमद् राजचंद्रदेवको ही प्रत्यक्ष गुरु तुल्य मानकर उनकी आज्ञा आराधन करनेसे जरूर कल्याण होना संभवित है । वर्तमान कालमें उनके वचनामृत जैसे थे वैसे ही प्रत्यक्ष मौजूद है । इनकी वीतराग मुद्रा भी जैसी थी वैसी प्रत्यक्ष विद्यमान है । उस वीतरागमुद्रा और वचनामृतोसे आज भी सम्यक्त्व-समकित प्राप्त किया जा सकता है । इसके बारेमें परमकृपालुदेव स्वयं पत्रांक ६०९में लिखते है –

"सत्संगकी अर्थात् सत्पुरुषकी पहचान होने पर भी यदि वह योग निरंतर न रहता हो तो सत्संगसे प्राप्त हुए उपदेशको ही प्रत्यक्ष सत्पुरुष तुल्य समझकर विचार करना तथा आराधन करना कि जिस आराधनसे जीवको अपूर्व सम्यक्त्व उत्पन्न होता है ।" –श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४७७)

प्रत्यक्ष सत्पुरुषका माहात्म्य

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे–

"पूर्वकालमें हुए अनन्त ज्ञानी यद्यपि महाज्ञानी हो गये हैं, परन्तु उससे जीवका कुछ दोष नहीं जाता; अर्थात् इस समय जीवमें मान हो तो पूर्वकालमें हुए ज्ञानी कहने नहीं आयेंगे; परन्तु हालमें जो प्रत्यक्ष ज्ञानी विराजमान हों वे ही दोषको बतलाकर निकलवा सकते हैं। जैसे दूरके क्षीरसमुद्रसे यहाँके तृषातुरकी तृषा शांत नहीं होती, परन्तु एक मीठे पानीका कलश यहाँ हो तो उससे तृषा शांत होती है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३८९) "पूर्वमें हो गये महा पुरुषोंका चिन्तन कल्याणकारक है; तथापि वह स्वरूपस्थितिका कारण नहीं हो सकता; क्योंकि जीवको क्या करना चाहिये यह बात उनके स्मरणसे समझमें नहीं आती। प्रत्यक्ष योग होनेपर बिना समझाये भी स्वरूपस्थितिका होना हम संभवित मानते है, और इससे यह निश्चय होता है कि उस योगका और उस प्रत्यक्ष चिंतनका फल मोक्ष होता है, क्योंकि सत्पुरुष ही 'मूर्तिमान मोक्ष' है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २८९)

मूर्तिमान मोक्षस्वरूप सत्पुरुषकी प्राप्ति दुर्लभ

"सत्पुरुषका योग और सत्समागम मिलना बहुत कठिन है, इसमें संशय नहीं है। ग्रीष्म ऋतुके तापसे संतप्त प्राणीको शीतल वृक्षकी छायाकी तरह मुमुक्षुजीवको सत्पुरुषका योग तथा सत्समागम उपकारी है। सर्व शास्त्रोमें वैसा योग मिलना दुर्लभ कहा है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६२४) "वीतरागपुरुषके अभाव जैसा वर्तमानकाल है।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ८३४)

मूर्तिमान मोक्षस्वरूप सत्पुरुषको पहचानना दुर्लभ

"जैसे यदि भगवान वर्तमानमें होते, और आपको बताते तो आप नहीं मानते; इसी तरह वर्तमानमें ज्ञानी हो तो वह माना नहीं जाता। स्वधाम पहुँचनेके बाद लोग कहते हैं कि ऐसे ज्ञानी होनेवाले नहीं है। पीछेसे जीव उनकी प्रतिमाकी पूजा करते है; परन्तु वर्तमानमें प्रतीति नहीं करते। जीवको ज्ञानीकी पहचान प्रत्यक्षमें, वर्तमानमें नहीं होती।" - (व.पृ. ७३४)

प्रत्यक्ष ज्ञानी किसको कहते है ?

उपदेशामृतमेंसे :– "मुमुक्षु–प्रत्यक्षसे क्या अभिप्राय है ?

प्रभुश्री–इतना स्पष्ट होने पर भी समझमें न आये तो यह इस कालका एक विशिष्ट आश्चर्य माना जायेगा। प्रत्यक्ष अर्थात् जिसने आत्माको प्राप्त किया है, वह। शास्त्रसे प्राप्त ज्ञानमें और प्रत्यक्ष ज्ञानी द्वारा प्राप्त धर्ममें बड़ा भेद है। शास्त्रमें तो मार्ग बताया गया है, मर्म तो ज्ञानीके हृदयमें रहा हुआ है।" -उ.(पृ. २७७)

प्रत्यक्ष और परोक्ष किसको कहना ?

बोधामृत भाग-१मेंसे :– "प्रत्यक्ष और परोक्ष किसे कहते है ?

पूज्यश्री–यदि सत्पुरुष उपस्थित है, तो वह प्रत्यक्ष योग है और सत्शास्त्र आदि परोक्ष योग है। यदि प्रत्यक्ष सद्गुरुका योग हो तो सद्गुरुके बोधसे अपने दोष दिखाई दें, सद्गुरु भी उसे दोष बताये, जिससे दोष दूर हो सकें। शास्त्र आदि परोक्ष योगमें तो शंका की जा सकती है, जैसा मानना हो वैसा माना जा सकता है।" -बो-१ (पृ.४५)

प्रत्यक्ष सत्पुरुष अब किसको मानना ?

बोधामृत भाग-१ मेंसे :– "मुमुक्षु–कृपालुदेवने जगह जगह पर लिखा है कि प्रत्यक्ष सत्पुरुष हो तभी कल्याण होगा। अब कृपालुदेव तो परोक्ष है, तो फिर किसको प्रत्यक्ष सत्पुरुष मानना ?

पूज्यश्री–प्रत्यक्ष सत्पुरुषके जो वचन है उसे प्रत्यक्ष सत्पुरुष तुल्य मानकर उसे विचारना और उसके अनुसार वर्तन करना तो समकित प्राप्त हो जाय ऐसा है।

मुमुक्षु–'समाधिसोपान'में लिखा है कि प्रतिमाको वंदन करना, पूजा करना आदि प्रत्यक्ष विनय है तो वह प्रत्यक्ष विनय

किस प्रकार है ? पूज्यश्री–भावसे वे प्रत्यक्ष है ऐसा करना है, भगवान तीर्थंकर जब विचरण करते थे तब यह जीव न जाने कहाँ एकेन्द्रिय आदिमें भटकता होगा, अब मनुष्यभव मिला है किन्तु उनका संयोग नहीं है । अतः भगवानके मंदिरमें जाकर ऐसी भावना करे कि ये साक्षात् भगवान ही विराजमान है । यह मंदिर है वह समवसरण है ऐसा मानकर भक्ति करें और कषायको कम करें ।'' -बो.१ (पृ. १०५)

जिन्होंने आत्माका यथार्थ स्वरूप पहचाना वे प्रत्यक्ष ज्ञानी

मुमुक्षु–''प्रत्यक्ष सद्गुरु और परोक्ष सद्गुरुके बारेमें संकल्प विकल्प होते है ।''

पूज्यश्री–ऐसे कोई संकल्प विकल्प करना नहीं । जिसने आत्माकी यथार्थ पहचान की है ऐसे परमकृपालुदेव तो प्रत्यक्ष ही है । उनकी शरणमें ही रहना । कोई दूसरे विकल्प करना नहीं । पूनाकी प्रतिज्ञा याद है ? वहाँ पर प्रभुश्रीजीने सबको प्रतिज्ञा दिलाई थी कि 'संतके कहनेसे मुझे परमकृपालुदेवकी आज्ञा मान्य है ।' संतके कहनेसे मुझे एक कृपालुदेव ही मान्य है, दूसरा कोई नहीं । हमको प्रत्यक्ष कहाँ ढूंढने जाना है ? प्रभुश्रीजीने बहुत खोज करके कृपालुदेवको अंतमें ढूंढ लिया और वही हमको मान्य करनेको कहा । इसलिये दूसरे कोई संकल्प विकल्प करना नहीं । एक परमकृपालुदेवने जैसा आत्मस्वरूपको पहचाना वैसे ही मुझे मान्य है । उसको ही मुझे देखना है । और उनकी आज्ञा एवं वचनोका यथार्थ पालन करना है । हमको परमकृपालुदेव प्रत्यक्ष ही है ऐसा निश्चय रखना, क्योंकि प्रत्यक्ष होते तब उनके वचनोका ही पालन करना था दूसरा क्या ? अतः उनके वचन मिले है उसके आधार पर प्रवर्तन करना है । दूसरा कोई उनके कहे हुए वचन कहे तो सुनना, मान्य करना । लेकिन दूसरा विकल्प करना नहीं । सब संकल्प विकल्प छोड़कर एक परमकृपालु सद्गुरुकी शरणमें रहना । सब प्रकारसे परमकृपालुदेव पर अर्पण बुद्धि करना । प्रत्यक्ष परोक्षका कोई भी विकल्प करना नहीं । एक परमकृपालुदेवके आश्रयमें उनकी आज्ञाका पालन करना है ।'' -पू.श्री ब्रह्मचारीजी जन्म शताब्दी स्मारक ग्रंथ (पृ. २३)

प्रत्यक्ष ज्ञानीकी आज्ञा किसे कहना ?

''प्रश्न–''मोक्ष पानेके लिये प्रत्यक्ष ज्ञानीकी आज्ञाका आराधन करना चाहिये ।'' (व.पृ. २००) प्रत्यक्ष ज्ञानीकी आज्ञा किसे कहना ? और हममें वह आज्ञा किस प्रकारसे संभवित है ?

उत्तर–जिसने आत्मस्वरूप प्रकट करके अनुभव किया है वे प्रत्यक्ष ज्ञानी है । परमकृपालुदेवने प्रकट आत्मस्वरूपका अनुभव किया है, आत्मस्वरूप हुए है, देहधारण किया हुआ है कि नहीं वह उन्हें मुश्केलीसे विचार करने पर याद आता था; ऐसे प्रत्यक्ष ज्ञानीकी आज्ञा प.पू. प्रभुश्रीजीको प्राप्त हुई; उन्होंने खुदको जिस आज्ञासे फायदा हुआ उसे इस कालमें अन्य योग्य जीवोंको प्राप्त हो उस आशयसे, उनके पास जो भी आये उनको वह (प्रत्यक्ष पुरुषकी) आज्ञा बताई, और स्वयंकी उपस्थिति न हो तब योग्य जीवको बतानेके लिये अंत समयमें मुझे आज्ञा दी । इस प्रकार प्रत्यक्ष ज्ञानीकी आज्ञा आपको प्राप्त हुई है, तो श्रद्धापूर्वक आराधन करने, अप्रमादी होकर आराधन करनेकी सूचना है ।'' -बो.३ (पृ. ७७७)

सत्पुरुषके वचनामृत प्रत्यक्ष भगवान समान

'बोधामृत भाग-१' मेंसे :–''भगवान प्रत्यक्ष न हो तो उनके वचन प्रत्यक्ष भगवान ही है । ऐसा विचार कर स्वाध्याय करें ।'' -बो. १ (पृ. २६५)

परमकृपालुदेवकी अंतर्आत्मदशा

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :– "मैं किसी गच्छमें नहीं हूँ, परन्तु आत्मामें हूँ, इसे न भूलियेगा ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १७२)

"आत्माने ज्ञान पा लिया यह तो निःसंशय है; ग्रन्थिभेद हुआ यह तीनों कालमें सत्य बात है । सब ज्ञानियोंने भी इस बातका स्वीकार किया है । अब हमें अन्तिम निर्विकल्प समाधि प्राप्त करना बाकी है, जो सुलभ है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २५१)

"प्रवृत्ति है तो उसके लिये कुछ असमता नहीं है; परन्तु निवृत्ति होती तो अन्य आत्माओंको मार्गप्राप्तिका कारण होता ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २५४)

"आत्मेच्छा ऐसी ही रहती है कि संसारमें प्रारब्धानुसार चाहे जैसे शुभाशुभ उदयमें आये, परन्तु उनमें प्रीति-अप्रीति करनेका हम संकल्प भी न करें ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २२७)

"एक पुराणपुरुष और पुराणपुरुषकी प्रेमसंपत्तिके बिना हमें कुछ भी अच्छा नहीं लगता; हमें किसी पदार्थमें रुचि मात्र नहीं रही है; कुछ प्राप्त करनेकी इच्छा नहीं होती; व्यवहार कैसे चलता है इसका भान नहीं है; जगत किस स्थितिमें है इसकी स्मृति नहीं रहती; शत्रु-मित्रमें कोई भेदभाव नहीं रहा; कौन शत्रु है और कौन मित्र है, इसका ख्याल रखा नहीं जाता; हम देहधारी हैं या नहीं इसे जब याद करते हैं तब मुश्किलसे जान पाते हैं; हमें क्या करना है, यह किसीसे जाना नहीं जा सकता ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २९२)

"समय-समय पर अनन्तगुणविशिष्ट आत्मभाव बढ़ता हो ऐसी दशा रहती है, जिसे प्रायः जानने नहीं दिया जाता, अथवा जान सकनेवालेका प्रसंग नहीं है ।" -श्रीमद् राजचद्र (व.पृ. ३१७)

"चित्त प्रायः वनमें रहता है, आत्मा तो प्रायः मुक्तस्वरूप लगता है । वीतरागता विशेष है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३१९)

"जो विचारवान पुरुषको सर्वथा क्लेशरूप भासता है ऐसे इस संसारमें अब फिर आत्मभावसे जन्म न लेनेकी निश्चल प्रतिज्ञा है । अब आगे तीनों कालमें इस संसारका स्वरूप अन्यरूपसे भासमान होने योग्य नहीं है, और भासित हो ऐसा तीनों कालमें सम्भव नहीं है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३४२)

" 'ईश्वरेच्छासे' जिन किन्हीं भी जीवोंका कल्याण वर्तमानमें भी होना सर्जित होगा, वह तो वैसे होगा, और वह दूसरेसे नहीं परन्तु हमसे, ऐसा भी यहाँ मानते है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३५३)

"संसारतापसे संतप्त और कर्मबंधनसे मुक्त होनेके इच्छुक परमार्थप्रेमी जिज्ञासु जीवोंकी त्रिविध तापाग्निको शांत करनेके लिये हम अमृतसागर है ।"

"मुमुक्षुजीवोंका कल्याण करनेके लिये हम कल्पवृक्ष है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ५०६)

"जैनमार्गको स्वयमेव समझना और समझाना कठिन है । उसे समझाते हुए अनेक प्रतिबंधक कारण आ खड़े हों, ऐसी स्थिति है । इसलिये वैसी प्रवृत्ति करते हुए डर लगता है । उसके साथ-साथ ऐसा भी रहता है कि यदि यह कार्य इस कालमें हमारेसे कुछ भी बने तो बन सकता है; नहीं तो अभी तो मूलमार्गके सन्मुख होनेके लिये दूसरेका प्रयत्न काम आये वैसा दिखायी नहीं देता । प्रायः मूलमार्ग दूसरेके ध्यानमें नहीं है, तथा उसका हेतु दृष्टांतपूर्वक उपदेश करनेमें परमश्रुत आदि गुण चाहिए, एवं बहुतसे अंतरंग गुण चाहिए, वे यहाँ हैं, ऐसा दृढ़ भास होता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ५२५)

"महापुरुषोंने कैसी दशा प्राप्त करके मार्ग प्रगट किया है, क्या क्या करके मार्ग प्रगट किया है, इस बातका आत्माको भलीभाँति स्मरण रहता है; और यही प्रगट मार्ग कहने देनेकी ईश्वरी इच्छाका लक्षण मालूम होता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २५२)

"मोक्ष तो हमें सर्वथा निकटरूपसे रहता है, यह तो निःशंक बात है । हमारा चित्त आत्माके सिवाय किसी अन्य स्थलपर प्रतिबद्ध नहीं होता, क्षणभरके लिये भी अन्यभावमें स्थिर नहीं होता; स्वरूपमें स्थिर रहता है । ऐसा जो हमारा आश्चर्यकारक स्वरूप है उसे अभी तो कहीं भी कहा नहीं जाता ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३३५)

"निःसंदेहस्वरूप ज्ञानावतार है और व्यवहारमें रहते हुए भी वीतराग है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २५०)

परमकृपालुदेवके अपूर्व वचनामृत

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :—"ज्ञानीकी वाणी पूर्वापर अविरोधी, आत्मार्थ-उपदेशक और अपूर्व अर्थका निरूपण करनेवाली होती है और अनुभवसहित होनेसे आत्माको सतत जाग्रत करनेवाली होती है । शुष्कज्ञानीकी वाणीमें तथारूप गुण नहीं होते । सबसे उत्कृष्ट गुण जो पूर्वापर अविरोधता वह शुष्कज्ञानीकी वाणीमें नहीं हो सकती, क्योंकि उसे यथास्थित पदार्थदर्शन नहीं होता; और इस कारणसे जगह जगह पर उसकी वाणी कल्पनासे युक्त होती है ।" (व.पृ. ५०३)

"यदि स्पष्ट प्रीतिसे संसार करनेकी इच्छा होती है तो उस पुरुषने ज्ञानीके वचन सुने नहीं है; अथवा ज्ञानीपुरुषके दर्शन भी उसने किये नहीं है, ऐसा तीर्थंकर कहते हैं ।" (व.पृ. ३८३)

'उपदेशामृत'मेंसे :— "देवचंद्रजीके स्तवन भी एक आत्मज्ञानी पुरुषकी वाणी है । फिर भी परमकृपालुदेवकी वाणी इससे भी ज़ा है । ऐसे पुरुष बहुत कालके पश्चात हुए । उनकी दशा बहुत ऊँची थी । इस समयमें इनका होना ही एक चमत्कार है । महापुण्यसे इनका परोक्ष योग हुआ है अतः उन्हें गुरु मानकर स्थापित करें, दृढ़ श्रद्धा करें ।" - (पृ. ३९८)

'बोधामृत भाग-३' मेंसे :— "परमकृपालुदेवके वचन इस कालमें तो अमृतकी वृष्टिके समान है । दूसरी पुस्तकें देखने पर इनकी गहनता और परम उपकार बारबार स्मृतिमें आता है । दूसरा कोई विवेचन न हो सके फिर भी बारबार उन शब्दोको बोलनेसे, सुननेसे यह जीभ मिली है वह सार्थक होगी और कान पवित्र होंगे ।" (पृ. १२६)

"परमकृपालुदेवके वचनामृत वैराग्यसे भरपूर है, सत् जिज्ञासु जीवोंको संसारसे तारनेवाले, सत्मार्गमें लगानेवाले, मोक्षमार्गमें चलानेवाले मार्गदर्शक है; उन वचनामृतमेंसे जो चाहे मिल सकता हे ।" (पृ. ६६७)

"सत्पुरुषोके वचन प्रत्यक्ष सत्पुरुष तुल्य मानकर आदरभावसे एकनिष्ठासे आराधन हो तो समकितकी प्राप्ति करादे ऐसा उसमें बल है, अतः सत्संगका योग न हो तो विशेष बल करके उन वचनोका परमार्थ हृदयमें उतरे उसके लिये दिनमें २४ घण्टोमेंसे एक-दो घण्टे अभ्यास करने पर उसका प्रभाव दूसरे कार्य करते हुए भी मालुम होगा ।" (पृ. ३३१)

'जीवनकला'मेंसे :— "दूसरे दिन परम करुणानाथने परम कृपा करके, उपशम रस और वीतरागभाव प्रगट हो ऐसी अपूर्व वाणी प्रकाशित की । स्वयं परम वीतराग मुद्रा धारण करके शुद्ध आत्मोपयोगमें रहकर बताया कि यह वाणी आत्माको स्पर्श करके निकलती है, आत्मप्रदेशोंकी अत्यन्त निकटतासे छूकर प्रकट होती है । हम सभी साधुओमें इस अलौकिक वाणीसे अलौकिक भाव प्रगट हुआ था तथा ऐसी चमत्कृति लगती थी कि ऐसी वाणी मानो कभी हमने सुनी ही नहीं । ऐसी अपूर्वता उस वाणीमें हमें लगती थी ।" (पृ. १८३)

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथका अलौकिक माहात्म्य

'उपदेशामृत'मेंसे :— "वचनामृत पढ़नेमें विशेष समय बीते ऐसा करें । जिससे सत्संग जैसा लाभ देगा ।" (पृ.१२६)

'बोधामृत भाग-१' मेंसे :— "यह वचनामृत निस्पृह पुरुषके वचन है । अशरीरीभाव पाकर कृपालुदेवने लिखे है । आशातना नहीं करना । लोगोके कहनेसे जहाँ तहाँ पुस्तकोको न रखें । पुस्तक कोई ज्ञानीकी आज्ञासे पढ़ें तो लाभ होगा ।"
-बो.१ (पृ. २५७)

"वचनामृत है वह भगवतीसूत्रसे भी अधिक, सिद्धांतके सार जैसा है । लेकिन जीव इससे जागृति नहीं पाता । किसीको कृपालुदेवका एक पत्र मिलता, किसीको दो पत्र मिलते । लेकिन हमको पूरा वचनामृत मिला है । कलिकालमें प्रकट ज्ञानीका यह बोध है, उसे पीने पर तृष्णा छीपेगी । सत्संगका इस कालमें दुष्काल पड़ा है ।" -बो.१ (पृ. २२५)

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथका अलौकिक माहात्म्य

'बोधामृत भाग-१-३' मेंसे :– "जिसके पास 'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथ है, उसके घर ज्ञानका भंडार है, लेकिन जीवकी योग्यतानुसार उसमेंसे ग्रहण करेगा । नदीमें पानी बहोत होने पर भी जिसके पास जैसा बर्तन होगा उतनाही पानी उसमें आयेगा । अतः योग्यता या आत्मार्थीपना प्राप्त हो ऐसा प्रयत्न करना चाहिये ।"-बो.१ (पृ.७८६)

"महापुरुषका जीवन हमको निर्मल बनाता है । कृपालुदेवका जीवन तो बहोतसे जीवनचरित्र जैसा है । एक भवमें अनेक भवोका मिश्रण है । वास्तविक जीवन तो उनके पत्र है । इस कालमें ऐसे गंभीर भाव कोई लिख नहीं सके । एक एक पत्रमें पूरा मोक्षमार्ग बता दिया है । जिसे समझनेसे अपना जीवन उत्तम बन जाय । महापुरुषके जीवनके बारेमें जाननेसे उनके प्रति भक्तिभाव बढ़ेगा । इसमेंसे मुझे क्या कामका है ? ऐसा लक्ष्य रखनेसे कुछ न कुछ शीखनेको मिलेगा ।"-बो.१ (पृ. ३१५)

"परमकृपालुदेवके पत्र यही हमको नवजीवन देनेवाले है । अपने पर यह पत्र आज ही आया है ऐसा जानकर तीव्र जिज्ञासासे पढ़े, विचारे तो उसमेंसे अपूर्व बल मिलेगा । 'सत्पुरुषोका योगबल जगतका कल्याण करो ।' (व.पत्रांक ४७) "ऐसे परमकृपालुदेवके वचन है । उनके वचनयोगरूप ग्रंथके आधार पर अपना कल्याण करनेका निश्चय है तो अवश्य अपना कल्याण होगा ।"-बो.३ (पृ. १०८)

"हे भगवान ! मेरे जैसे पामरके हाथमें, रंकके हाथमें रतन आ जाय वैसे ही ये पत्र मिले है । उसमेंसे एक एक पत्रसे मुमुक्षुओने अपना जीवन सुधारा है, पूरे जीवनपर्यंत एक ही पत्रके रसका पान किया है और उसके आधारसे अपनी दशा बढ़ाई है । मुझे भी इसमेंसे अमृत पानकर मेरी आत्माको अमर बनाना है ।"-बो.३ (पृ. ६३४)

"'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथ छपा हुआ नहीं था उस वक्त जो विचारकर समज सके ऐसे जीवोंको सद्गुरु आज्ञासे पढने योग्य ग्रंथोकी श्रीमद्ने सूचना की थी । अब सब ग्रंथोको पढकर पार पाना मुश्किल है और जिस ग्रंथका भाव न समझ सके और वैराग्य उपशमका कारण न बने ऐसा लगता हो तो उसके बदलेमें 'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथका विशेष वांचन-विचार करोगे तो विशेष लाभका कारण होगा ।"-बो.३ (पृ. ३३५)

"दूसरी जगह समयका व्यय करके जो समझनेको मिलेगा उसके बजाय 'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे जो जानकारी मिलेगी वह अलौकिक और आत्माके कल्याणका विशेष कारण बनेगी । जिसने आत्माको नहीं पहचाना वह चाहें जैसी आत्माकी बातें करे लेकिन सुननेवालेमें वीतरागता, निर्मोहीपना उत्पन्न नहीं कर सकेगी । और जिसने आत्माको पहचाना है उस पुरुषके थोड़े भी वचन प्रत्यक्ष सत्पुरुष तुल्य समझकर उसकी उपासना की जाय तो जगतका विस्मरण होगा और आत्माकी तरफ वृत्तिका झुकाव होगा, शांति मिलेगी और आत्माका भान भी प्रगट होगा ।" -बो.३ (पृ. ७५३) "आपने 'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथका वांचन करनेकी भावना प्रदर्शित की उसके उत्तरमें लिखता हूँ कि ये ग्रंथ सब शास्त्रके साररूप है । उसका नियमसर अभ्यास श्रद्धापूर्वक यथाशक्ति हो तो लाभका कारण है और सत्पुरुषके वियोगमें परम अवलंबन एवं मार्गदर्शकरूप है ।"-बो.३ (पृ. ५४)

"परमकृपालुदेवका 'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथ पढ़ते रहनेसे बहोतसी शंकाओका समाधान अपने आप हो जायेगा और न समझमें आयें तो पूछनेमें कोई एतराज नहीं है । आत्महितकी पुष्टिके लिये परमकृपालुदेवके वचनामृत मुझे तो सर्वोत्तम लगे है । जिससे बारबार यही सूचन करनेकी वृत्ति रहती है ।"-बो.३ (पृ. ४७४)

"जो वचनामृत हमको अंत समय तक आत्महितमें मदद देनेवाले है, वे वचनामृत दूसरे जीवोंको भी सुलभ हो ऐसी प्रत्येक मुमुक्षुकी भावना स्वाभाविक होती है । जिसके पास धनकी सामग्री हो वे उसके द्वारा अपना भाव प्रदर्शित करे । एक तो लागत किंमतके बजाय थोड़ी कम किंमत रखनेकी पहले बात करके धनकी मदद की जाय, या वे पुस्तकें प्रसिद्ध होनेके बाद थोड़ी पुस्तकोको खरीदकर उसे कम किंमतसे या मुफ्त जीवोकी योग्यता अनुसार उन्हें दी जाय ।"-बो.३ (पृ. ६८९)

परमकृपालुदेवकी निष्कारण करुणा

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमें से :–

"कल्याणके मार्गको और परमार्थस्वरूपको यथार्थरूपसे नहीं समझनेवाले अज्ञानी जीव, अपनी मति कल्पनासे मोक्षमार्गकी कल्पना करके विविध उपायोमें प्रवृत्ति करते हैं फिर भी मोक्ष पानेके बदले संसारमें भटकते है; यह जानकर हमारा निष्कारण करुणाशील हृदय रोता है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ५०६)

"कोई क्रियाजड थई रह्या, शुष्कज्ञानमां कोई ।
माने मारग मोक्षनो, करुणा ऊपजे जोई" ॥३॥

"कोई क्रियासे ही जुडे हुए है, और कोई शुष्कज्ञानसे ही जुडे हुए है; इस तरह वे मोक्षमार्ग मानते है; जिसे देखकर दया आती है ।" ॥३॥ -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.५३४)

'बोधामृत भाग-३' मेंसे :–"परमकृपालुदेवका परमोपकार जैसे जैसे उनके वचनामृत बार बार पढ़ते है वैसे वैसे विशेष विशेष स्फुरायमान होता है । ऐसे अपवादरूप महापुरुषने 'मोक्षमार्ग बहुत लुप्त हो गया' उसे फिरसे प्रकटमें ला दिया । जिनके योगबलसे अनेक जीवोने सत्य मार्गको पाया, पाते है और पायेंगे । अपना भी महाभाग्य है कि ऐसे पुरुषके वचनो पर विश्वास, प्रेम, श्रद्धा हो जानेसे उनके हृदयमें रही हुई अनुकंपाके फलस्वरूप उनकी आज्ञाको उठाकर अपने आत्माका उद्धार करनेके लिये तैयार हुए है । उन महापुरुषके पाससे जिन्होंने पेट भरके वचनामृतोका पान किया है ऐसे श्री लघुराजस्वामी थे । उनका भी अपने उपर परमोपकार है कि उन्हें जिस आज्ञासे बड़ा लाभ हुआ वह लाभ इस कालके सब जिज्ञासु जीवोंको भी मिले ऐसी निष्कारण करुणासे अंतमें खुदको प्राप्त हुई आज्ञाकी परंपरा चालु रहे उस आशयसे स्पष्ट प्रेरणा करते गये है । उन्होंने बारबार अपने बोधवचनोमें खुदकी इसके बारेमें श्रद्धा प्रदर्शित की है । उसमेंसे थोड़ा भाग आपको बारबार विचारने एवं लक्षमें रहनेके लिये और इसका फायदा ध्यानमें रहे इस कारण से ही यहाँ पर बताता हूँ ।

"सब शास्त्रोका सार तत्त्वोका सार खोजकर परम कृपालुदेवने बता दिया है । बहुत दुर्लभ, इस कालमें कार्य सिद्ध हो जाय ऐसा कृपालुदेवने बताया है । विश्वास हो तो सुनाउँ । वीस दोहे, भक्तिके है वे मंत्र समान है । सो बार, हजार बार बोले जाय फिर भी कम है । लाभके ढ़ेर है । क्षमापनाका पाठ, छ पदका पत्र, यमनियम, आत्मसिद्धि इतने साधन अपूर्व है, चमत्कारिक है । प्रतिदिन बोलना जरूरी है । जीवनपर्यंत इतनी भक्ति प्रतिदिन अवश्य करें । 'दर्जीका लड़का जीता है वहाँ तक कपड़े सीता है' येतो गलत बात है, लेकिन आप जीवनपर्यंत इतना तो अवश्य करें । इससे समाधिमरण होगा, समकितका तिलक लगेगा-विशेष क्या कहुं ?" (पृ. ४८१)

ज्ञानीका मार्ग सुलभ लेकिन प्राप्ति दुर्लभ

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :–

"ज्ञानीका मार्ग सुलभ है परन्तु उसे प्राप्त करना दुष्कर है; यह मार्ग विकट नहीं है, सीधा है, परन्तु उसे पाना विकट है । प्रथम सच्चे ज्ञानी चाहिये । उसे पहचानना चाहिये । उसकी प्रतीति आनी चाहिये । बादमें उनके वचनपर श्रद्धा रखकर निःशंकतासे चलनेसे मार्ग सुलभ है, परंतु ज्ञानीका मिलना और पहचानना विकट है, दुष्कर है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६८१)

सत्पुरुषको पहचाननेकी योग्यता

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :– "मुमुक्षुके नेत्र महात्माको पहचान लेते है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २९२)

" 'मुमुक्षुता' यह है कि सर्व प्रकारकी मोहासक्तिसे अकुलाकर एक मोक्षके लिये ही यत्न करना और 'तीव्र मुमुक्षुता' यह है कि अनन्य प्रेमसे मोक्षके मार्गमें प्रतिक्षण प्रवृत्ति करना ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २९१)

"आत्माको संसारका स्वरूप कारागृह जैसा वारंवार क्षण क्षणमें भासित हुआ करे, यह मुमुक्षुताका मुख्य लक्षण है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४०५)

"दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग और वैराग्य ये गुण मुमुक्षुके घटमें सदा ही जाग्रत रहते है, अर्थात् इन गुणोंके बिना मुमुक्षुता भी नहीं होती ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.५६५)

"कलियुगमें अपार कष्टसे सत्पुरुषकी पहचान होती है । और फिर कंचन और कामिनीका मोह ऐसा है कि उसमें परम प्रेम नहीं होने देता । पहचान होनेपर निश्चलतासे न रहे सके ऐसी जीवकी वृत्ति है, और यह कलियुग है, इसमें जो आकुलित नहीं होता उसे नमस्कार है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३०५)

जीवको सबसे पहले करने योग्य क्या ?

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :– "जीवको धर्म अपनी कल्पनासे अथवा कल्पनाप्राप्त अन्य पुरुषसे श्रवण करने योग्य, मनन करने योग्य या आराधन करने योग्य नहीं है । मात्र आत्मस्थिति है जिनकी ऐसे सत्पुरुषसे ही आत्मा अथवा आत्मधर्म श्रवण करने योग्य है, यावत् आराधने योग्य है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३५७)

'बोधामृत भाग २-३' मेंसे :–

"संसारसे पार उतरना हो तो प्रथम क्या जानना ? पार उतारनेवालेको पहचानना चाहिये । कुसंगको त्यागना चाहिये । डुबानेवालेको त्यागना चाहिये । 'जिनसे धर्मकी प्राप्ति चाहे वे खुद पाए हुए है उसकी पूरी जांच करना' (व.पत्रांक ४६६) सद्गुरुमें भूल नहीं होनी चाहिये । इसमें भूल हुई तो सबमें भूल होगी, सब प्रयत्न व्यर्थ होगा ।" (बो.२ पृ. ५७)

"इस कालमें जीवको क्या करना योग्य है ? (१) खुदको सद्गुरुका शरण लेना (२) क्रोधादि कषायोका शमन करना (३) मोक्षके बजाय दूसरी इच्छा नहीं करना (४) वैराग्य रखना (५) कषायका उदय हो तब उसके प्रति अभाव करना लेकिन बढ़ाना नहीं । (६) शास्त्रको समजनेके लिये सत्संगका आधार लेना । मुख्य मार्गतो यह है कि जिस मार्गसे अज्ञान मिटे, कषाय घटे, उस मार्गकी आराधना करना है । सम्यग्दर्शनके बिना सब उल्टा होता है ।" -बो.२ (पृ. १०९)

"परमकृपालुदेवकी श्रद्धा दृढ़ हो वही सब साधनकी प्रथम नीव मानने योग्य है । समय मिलता हो तो 'जीवनकला' पढ़नेसे या सुननेसे सत्पुरुषके प्रति प्रेममें वृद्धि होगी ।" -बो.३ (पृ. २८८)

"प्रथम कार्य मनुष्यभवमें यह करने योग्य है कि 'सत्' वस्तुकी जिज्ञासा करना और उसे प्राप्त करावे ऐसे सत्पुरुषकी खोज करके उनके वचनोमें विश्वास रखना चाहिये । भगवानने श्रद्धाको परम दुर्लभ कहा है । जिसे यह श्रद्धा आ गई उसका मोक्ष दूर नहीं है । लेकिन श्रद्धा होनेमें सत्पुरुषके बोधकी जरूरत है । फिर बोधको ग्रहण कर, विचार करके श्रद्धा करने जैसी योग्यताकी भी जीवको जरूरत है । अतः अभी योग्यता बढ़े ऐसे पुरुषार्थमें रहे । (१) सब जीवोके प्रति निर्वैरबुद्धि वह मैत्रीभावना, (२) जिसमें सद्गुण हो उसे देखकर प्रमोद-उल्लास हो वह प्रमोद भावना, (३) दुःखी जीवोके प्रति दयाभाव वह करुणाभावना और (४) अनिष्ट वर्ताव करनेवालोके प्रति द्वेषभाव न रखकर मध्यस्थ रहना वह मध्यस्थ या उदासीन भावना है । उसे उपेक्षा भावना भी कहते है । ये चार भावनाओका प्रतिदिन चिंतन करनेसे योग्यता आती है, ऐसा परमकृपालुदेवने कहा है ।" -बो.३ (पृ. ५५)

असद्गुरुको माननेसे अनादिकालका भवभ्रमण

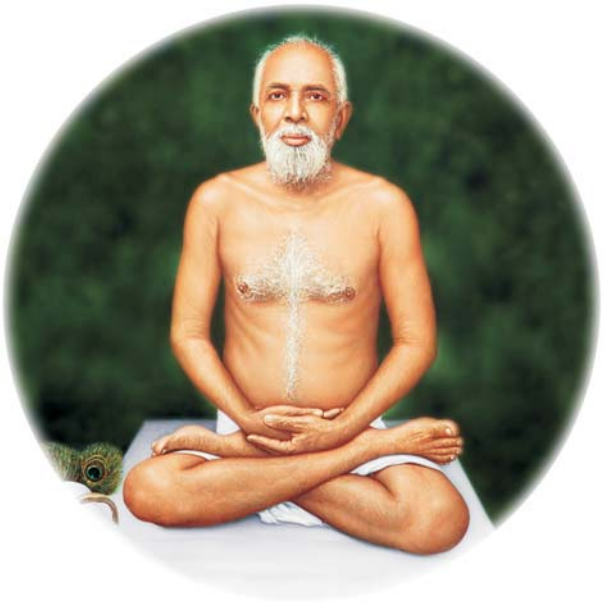

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :–

"जीव कुसंगसे और असद्गुरुसे अनादिकालसे भटका है; इसलिये सत्पुरुषको पहचाने ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७४०)

"कुगुरु और अज्ञानी पाखंडियोका इस कालमें पार नहीं है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७१७)

"ज्ञानकी प्राप्ति ज्ञानीके पाससे होनी चाहिये । यह स्वाभाविकरूपसे समझमें आता है, फिर भी जीव लोकलज्जा आदि कारणोसें अज्ञानीका आश्रय नहीं छोड़ता, यही अनंतानुबंधी कषायका मूल है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २६५)

'उपदेशामृत' मेंसे :–"गुरुके नामसे जीव ठगाया है । जिस पर प्रेम ढुलना चाहिये, वहाँ नहीं ढुल रहा है और सत्संगमें, समागममें जहाँ दृष्टि पड़ी वहाँ प्रेम ढोल देता है । इससे आशातनाका दोष लगता है और जीव पागल भी हो जाता है ।" (उ.पृ.६८)

'बोधामृत भाग-१' मेंसे :–

"असद्गुरुने मनुष्यभवको लूंट लिया है । खुद मोहमें पड़े है और दूसरोकोभी मोहमें डालते है ।" (पृ. १२०)

अपनी कल्पनासे - स्वच्छंदसे क्रिया करने पर संसार परिभ्रमण

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :–"जीव अपनी कल्पनासे किसी भी प्रकारसे सत्को प्राप्त नहीं कर सकता । सजीवनमूर्तिके प्राप्त होनेपर ही सत् प्राप्त होता है, सत् समझमें आता है, सत्का मार्ग मिलता है और सत्पर ध्यान आता है । सजीवनमूर्तिके लक्षके बिना जो कुछ भी किया जाता है, वह सब जीवके लिये बन्धन है । यह मेरा हार्दिक अभिमत है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२६४) "जो पुरुष सद्गुरुकी उपासनाके बिना अपनी कल्पनासे आत्मस्वरूपका निर्धार करे वह मात्र अपने स्वच्छंदके उदयका वेदन करता है ऐसा विचार करना योग्य है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.८१८)

"जीव अपनी कल्पनासे मान लें कि ध्यानसे कल्याण होता है या समाधिसे या योगसे या ऐसे ऐसे प्रकारसे, परन्तु उससे जीवका कुछ कल्याण नहीं होता । जीवका कल्याण होना तो ज्ञानीपुरुषके लक्ष्यमें होता है, और उसे परम सत्संगसे समझा जा सकता है; इसलिये वैसे विकल्प करना छोड़ देना चाहिये ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३८९)

"बीजां साधन बहु कर्या, करी कल्पना आप ।
अथवा असद्गुरु थकी, ऊलटो वध्यो उताप ।।" -(व.पृ. २३४)

प.उ.प.पू.प्रभुश्रीजीकी दृष्टिमें परमकृपालुदेव

परमपूज्य प्रभुश्रीजीकी दृष्टिमें तो परमकृपालुदेव परमात्मा है । 'जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि' । किसीको परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्र विद्वान, कवि, शतावधानी, प्रखर ज्योतिषी या ज्ञानीपुरुष मालुम हुए लेकिन प.पू.प्रभुश्रीजीकी दृष्टिमें तो वे परमात्मा है ।

जीवनपर्यंत स्वयं परमकृपालुदेवकी भक्तिमें तन्मय रहे । उनकी अपूर्व भक्ति और श्रद्धाके कारणसें उन्होंने आत्मज्ञान पाया और पूर्वभवोको भी देखा । बादमें जन्ममरणसे छूटनेके इच्छुक जीव जो प.पू. प्रभुश्रीजीके पास आये उनको भी अपनी तरफ दृष्टि नहीं कराते हुए कहा कि– एक परमकृपालुदेवको ही गुरु मानो । हमारे गुरु वो ही आपके गुरु; परमकृपालुदेवको गुरु मानेंगे तो हमारे अंत:करणमें आनंद होगा, ऐसा कहकर स्वयंकी मुख्यताको हटा लिया । और कहा कि किसीको भी ज्ञानी अज्ञानी कहना नहीं और मानना भी नहीं । कोई ज्ञानी होगा तो उसका परमकृपालुदेवके स्वरूपमें समावेश हो गया । गुरु करनेमें कभी भूल मत करना । परमकृपालु श्रीमद् राजचंद्र प्रभुको ही सद्गुरुके पद पर स्थापित करके उनकी आज्ञाका पालन करो । ऐसा करोगे तो तुम्हारे आत्माका कल्याण हो जायेगा । उसकी हम पूरी जिम्मेदारी लेते है क्योंकि इस मार्गमें भूल नहीं है ।

'उपदेशामृत' मेंसे :–

"हम अपने हृदयकी बात बताते है । हमे तो रोमरोममें एक यही प्रिय है । परमकृपालुदेव ही हमारी जीवनड़ोर है । जहाँ उनके गुणगान होते हों वहाँ हमें उल्लास आता है । हमारा तो सर्वस्व यही है । हमें तो यही मान्य है ।

आपको ऐसी मान्यता करना यह आपका अधिकार है । जिसका महाभाग्य होगा उसे यह मान्यता होगी । सरलतासे बता रहे है कि जिसे यह मान्यता होगी उसका कल्याण हो जायेगा । भोले-भालोंका काम होगा । श्रद्धा, विश्वास, प्रतीति होंगी उनका भवभ्रमण मिट जायेगा ।" (उ.पृ. ३५०)

"सद्गुरु परमकृपालुदेवकी शरण रखें । हम भी उनके दासानुदास है । अपनी कल्पनासे किसीको गुरु न मानें, किसीको ज्ञानी न कहें; मध्यस्थ दृष्टि रखे । एक परमात्मा परमकृपालुदेवको माने । उन्हींकी श्रद्धा रखे । हम भी उन्हें मानते है । हमारे और आपके स्वामी भिन्न न माने, वे एक ही है । उन्हीं पर प्रेम करे, प्रीति करें ।"(उ.पृ. ९६) "समर्थ स्वामी एक परमकृपालुदेवको ही हमने तो मान्य किया है, वे ही आपके भी गुरु है; हम भी आपके गुरु नहीं, लेकिन हमने जिन्हें गुरु माना है वे आपके गुरु है, ऐसा नि:शंक अध्यवसाय रखकर जो दु:ख आवे उन्हें सहन करें । कालक्रमसे सब जानेवाला है ।" (उ.पृ. ९६)

"गौतमस्वामीने पंद्रहसौ तापसोको ज्ञान प्राप्त करवाया तब वे गौतमस्वामीको गुरु मानने लगे, पर गौतमस्वामी उन्हें महावीर प्रभुके पास ले गये और उन्हे ही माननेको कहा । इस प्रकार जो सत्पुरुष उपकारी है, उनके कहनेका आशय समझना चाहिये और उनकी आज्ञाका आराधन करना चाहिये, क्योंकि इस जीवकी समझ अल्प हे ।" (उ.पृ. ४२१)

"परमकृपालुदेवकी श्रद्धा जो हमारे कहनेसे करेंगे उनका कल्याण होगा, ऐसा जो कहा था तथा संतके कहनेसे परमकृपालुदेवकी आज्ञा मुझे मान्य है, यों प्रतिज्ञा पूर्वक सभीने परमकृपालुदेवके समक्ष कहा था उसे याद कर, श्रद्धा जितनी दृढ़ हो उतनी करनी चाहिये । हाथीके पाँवमें सबके पाँव समा जाते है, वैसे ही परमकृपालुदेवकी भक्तिमें सर्व ज्ञानियोंकी भक्ति आ जाती है; अत: भेदभावकी कल्पना दूर कर, जो आज्ञा हुई है उसके अनुसार 'वाळ्यो वळे जेम हेम' (स्वर्णकी तरह चाहे ज्यों मोड़ा जा सके) यों अपने भाव मोड़कर एक पर आ जाना योग्य है ।" (उ.पृ. १३५)

"कृपालुदेव संसारमें थे किन्तु आत्मज्ञानी थे, जिससे देवोको भी पूज्य थे । जो देखना है वह ऊपरका रूप या आचरण नहीं, परंतु आत्माकी दशा, और जहाँ वह हो वहाँ फिर श्रद्धा ही करनी है ।" (उ.पृ. ४१९)

"ज्ञानी और अज्ञानीके कार्योंमें वासनाक्षयका भेद है । आंतरिक वासनाका मूल ज्ञानीने क्षय किया है । इस दृष्टिको भूलना नहीं चाहिये, किन्तु उसमें दृढ़ता ही लानी चाहिये ।" (उ.पृ. २५४)

"हमारा कहा हुआ मार्ग गलत हो तो इसके हम जिम्मेदार है । लेकिन जो स्वच्छंदसे बर्ताव करेगा और 'ऐसा नहीं ऐसा है' करके दृष्टिको उल्टी करेगा उसके हम जिम्मेदार नहीं है । जिम्मेदारी लेना आसान नहीं है । लेकिन इस मार्गमें भूल नहीं है जो कोई कृपालुदेवकी श्रद्धा करेगा उसे कुछ नहीं तो देवगति तो है ही ।" (उ.पृ.[६५])

पू.श्री ब्रह्मचारीजीकी दृष्टिमें परमकृपालुदेव

पू.श्री ब्रह्मचारीजीकी दृष्टिमें परमकृपालुदेव परमात्मा है ।

प.पू. प्रभुश्रीजीमें आचार्यके सब गुण होते हुए भी सबको एक परमकृपालुदेवको ही गुरु मानना ऐसी आज्ञा होनेसे पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी परमकृपालुदेवको ही गुरु मानने लगे ।

पू.श्री ब्रह्मचारीजी 'बोधामृत भाग-३' में बताते है :—" दुषमकालमें भी ज्ञानीकी आज्ञा प्राप्त करनेवाला भाग्यशाली होगा, उसका कल्याण 'अम थकी' अर्थात् परमकृपालुदेवकी भक्तिसे होगा । क्योंकि इस कालमें इतनी उच्च दशा प्राप्त पुरुष उनके जैसा मिलना असंभव है । परमकृपालुदेव इस कालमें अपवादरूप है । हजारो वर्षके बाद ऐसे पुरुष दिखाई देते है । बहोतसे महात्मा भी परमकृपालुदेवके ज्ञान और वीतरागताकी तुलना कर सके ऐसे नहीं है । अतः 'एक मत अपनी पकडकर सीधे मार्ग पर चलते रहो' की बात जैसा आँखे बंद करके उनकी शरणमें रहनेक पुरुषार्थ करना ही श्रेष्ठ है ।" -बो.३ (पृ. ७७९)

परमकृपालुदेवके प्रति परमभक्तिके पू.श्री ब्रह्मचारीजीके उद्‌गार

'बोधामृत भाग १-३' मेंसे :—"एक परमकृपालुदेवके प्रति जितनी भक्ति होगी उतनी आत्महितकारी है । एकके भजनेसे सर्व सिद्ध और वर्तमान अरिहंत आदिकी भी भक्ति होती है ।" -बो.३ (पृ. १२३)

"परमकृपालु श्रीमद् राजचंद्र प्रभुकी भक्ति प.उ. प्रभुश्रीजीने बताकर अपने पर अमाप उपकार किया है । वे परमपुरुष भक्ति करने योग्य, स्तवन योग्य, उपासने योग्य होनेसे गुणग्राम करके पवित्र होना योग्य है । वैसे ही उनके वचनामृत सत्शास्त्र द्वारा पढ़करके या सुनकर, मननकर, बारबार भावना करके श्रद्धा दृढ़ करना योग्य है ।" -बो.३ (पृ. १३५)

"परमकृपालुदेवका अमाप उपकार है कि इस कलिकालमें अपने जैसे अज्ञानी लोगोंको उत्तम अध्यात्म मार्ग सरलतासे, सुगमतासे समझमें आ जाय वैसे गुजराती भाषामें संपूर्ण प्रकट किया है ।" -बो.३ (पृ.४२३)

"परमकृपालुदेव जिनके हृदयमें बसे है, उनके प्रति जिन्हें पूज्यभाव हुआ है । परमकृपालुदेवका जो गुणग्राम करते है एवं उनके प्रति जिनको अद्वेषभाव है वे सर्व जीव प्रशंसापात्र है । -बो-३ (पृ.४२३)

इस जीवनमें किसीने भी अपने उपर महान उपकार किया हो उसमें सर्वोपरी उपकार परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्र प्रभुका है....अतः जगतकी मोहक चीजो परसे मनको हटाकर शाश्वत अपनी आत्मा जिनके योगबलसे शुद्ध हो, मोक्षको पा ले ऐसे महापुरुषके उपर दिन दिन भक्ति-प्रेमभाव बढ़ता जाए ऐसा करें । उसके लिये भक्ति, पत्रव्यवहार, पहचान या वांचन-विचार करना है । नहीं तो जगतकी कोई भी चीज अंतमें मदद करे ऐसी नहीं है । अतः मनमें समझकर, सबसे मोहको मोडकर एक परमपुरुष पर प्रेम, परम प्रेम करने जैसा है ।" -बो.३ (पृ. ६०४) "परमकृपालुदेव जैसे इस कालमें कोई नजर नही आते है । उसके बजाय कहींपर भी मनको रोकने जैसा नहीं है । ऐसा मुझे तो लगता है । दूसरी चीजोंमें मन लगाकर जीवने परिभ्रमण अनंतकाल तक किया । अब तो सतीकी तरह ये एक ही ग्रहण करने योग्य है ।" -बो.३ (पृ. ७३६)

"परमकृपालुदेवके बजाय कोई उद्धार करे वैसा नहीं है । ऐसा दृढ़ निश्चय करनेकी मेरी सूचना है । जहाँ आत्मज्ञान नहीं वे बिना पानीके कूप है । वहाँ पानी निकालनेके साधन लेकर जाये और कूपमेंसे पानी निकालनेका प्रयत्न करें फिर भी गंदगीके सिवाय कुछ भी हाथ नहीं लगेगा, महेनत व्यर्थ जायेगी ... मार्गको भूले हुए लोगोके पीछे भटकना छोड़कर घर बैठे बैठे मंत्रकी माला गिननेका पुरुषार्थ करोगे तो शीघ्र जन्ममरणका अंत पाओगे ।" -बो.३ (पृ. ७८३)

"ज्ञानीपुरुषकी श्रद्धा है वह समकित है । परम कृपालुदेवकी आराधना करनेसे मेरा कल्याण होगा ही, ऐसी पुरुष प्रतीति हो गई तो उसे समकित कहा जाता है । पुरुष प्रतीति, आज्ञारुचि ये सब समकित प्राप्तिके कारण है ।" -बो.१ (पृ. २९४)

"जो सद्‌गुरु है उनकी भक्ति कोई पुण्यवान पुरुषको जागृत होती है...देव और धर्मके आधार गुरु है । गुरु हो तो देव और धर्मका स्वरूप समझमें आयेगा, अन्यथा समझमें नहीं आयेगा ।" -बो.१ (पृ. १०३)

श्रद्धा-सम्यक्त्व या समकितकी सबमें मुख्यता

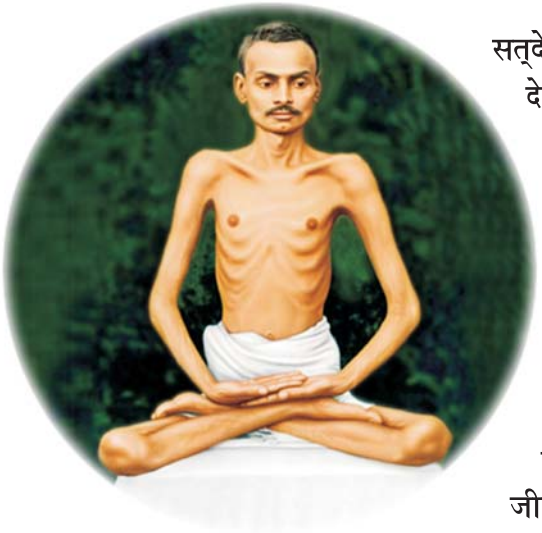

सत्देव, गुरु और धर्मकी श्रद्धाको शास्त्रमें व्यवहार समकित कहा है । अपेक्षासे देखे तो सद्गुरुकी श्रद्धा वही समकित है । सच्चे देव और धर्मको समजानेवाले सद्गुरु है । सद्गुरुके प्रति परोक्ष श्रद्धा भी जो यथार्थ हो तो वह भी जीवको पंद्रह भवोमें मोक्ष दे ऐसी बलवान है । वह श्रद्धा ऐसी करनी चाहिये कि चाहें जैसे पतित होनेके प्रसंग मिल जाए लेकिन फिरे नहीं । श्रद्धा यही व्यवहार समकित है, जो निश्चय समकितका कारण है और जीवको आगे बढ़ाकर केवलज्ञान प्रकट करानेवाला है ।

श्रद्धा ये आत्माका गुण है । वह सब जीवोमें सदा विद्यमान है । लेकिन वह श्रद्धा गुण वर्तमानमें देहादिमें आत्मबुद्धि करके विपरित हो गया है । उसे सत्पुरुषके बोधसे आत्मामें आत्मबुद्धि करके जो सम्यक् किया जाय तो वह जीवको निश्चय समकित अर्थात् आत्मज्ञान प्राप्त कराके शाश्वत सुखस्वरूप मोक्षको दे ऐसा है ।

श्रद्धासहित पुरुषार्थ वही सत्य पुरुषार्थ है । समकितके बिना की गई सब क्रिया वे एक अंकके बिना शून्य जैसी निरर्थक है अर्थात् मोक्षमार्गमें उपयोगी सिद्ध नहीं होती ।

सम्यक्त्वके बारेमें परमकृपालुदेवके उद्गार

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :– "प्र०–सम्यक्तव किससे प्रगट होता है ?

उ०–आत्माका यथार्थ लक्ष्य होनेसे । सम्यक्त्वके दो प्रकार हैं–(१) व्यवहार और (२) परमार्थ । सद्गुरुके वचनोंको सुनना, उन वचनोंका विचार करना, उनकी प्रतीति करना, यह 'व्यवहार-सम्यक्त्व' है । आत्माकी पहचान हो, यह परमार्थ-सम्यक्त्व' है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७२१)

"जब तक देहात्मबुद्धि दूर नहीं होती तब तक सम्यक्त्व नहीं होता ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७४५)

"बड़प्पन और महत्ता छोड़े बिना आत्मामें सम्यक्त्वका मार्ग परिणमित होना कठिन है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७२४)

"सद्गुरु, सद्देव, केवली द्वारा प्ररूपित धर्मको सम्यक्त्व कहा है, परन्तु सद्देव और केवली ये दोनों सद्गुरुमें समाये हुए हैं ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७०५) "विचारके बिना ज्ञान नहीं होता । ज्ञानके बिना सुप्रतीति अर्थात् सम्यक्त्व नहीं होता । सम्यक्त्वके बिना चारित्र नहीं आता, और जब तक चारित्र नहीं आता तब तक केवलज्ञान प्राप्त नहीं होता, और जब तक केवलज्ञान प्राप्त नहीं होता तब तक मोक्ष नहीं है; ऐसा देखनेमें आता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७६८)

"सूत्र, चौदहपूर्वका ज्ञान, मुनिपन, श्रावकपन, हजारों तरहके सदाचरण, तपश्चर्या आदि जो जो साधन, जो जो परिश्रम, जो जो पुरुषार्थ कहे हैं वे सब एक आत्माको पहचाननेके लिये, खोज निकालनेके लिये कहे है । वे प्रयत्न यदि आत्माको पहचाननेके लिये, खोज निकालनेके लिये, आत्माके लिये हों तो सफल हैं, नहीं तो निष्फल हैं । यद्यपि उनसे बाह्य फल होता है, परन्तु चार गतिका नाश नहीं होता । जीवको सत्पुरुषका योग मिले, और लक्ष्य हो तो वह सहजमें ही योग्य जीव बनता है; और फिर सद्गुरुकी आस्था हो तो सम्यक्त्व उत्पन्न होता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७२९)

"भगवान तीर्थंकरके निर्ग्रंथ, निर्ग्रंथनियों, श्रावक तथा श्राविकाओंको सभीको जीवाजीवका ज्ञान था, इसलिये उन्हें समकित कहा है ऐसा सिद्धांतका अभिप्राय नहीं है । उनमेंसे कितने ही जीवोंको, तीर्थंकर सच्चे पुरुष हैं, सच्चे मोक्षमार्गके उपदेष्टा हैं, जिस तरह वे कहते हैं उसी तरह मोक्षमार्ग है, ऐसी प्रतीतिसे, ऐसी रुचिसे, श्री तीर्थंकरके आश्रयसे और निश्चयसे समकित कहा है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६०९)

"सम्यक्त्वके लक्षण– (१) कषायकी मंदता अथवा उसके रसकी मंदता । (२) मोक्षमार्गकी ओर वृत्ति । (३) संसार बंधनरूप लगना अथवा विषतुल्य लगना । (४) सब प्राणियोंपर दयाभाव; उसमें विशेषत: अपने आत्माके प्रति दयाभाव । (५) सद्देव, सद्धर्म और सद्गुरुपर आस्था ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७५६)

परमकृपालुदेवकी श्रद्धा दृढ करने योग्य

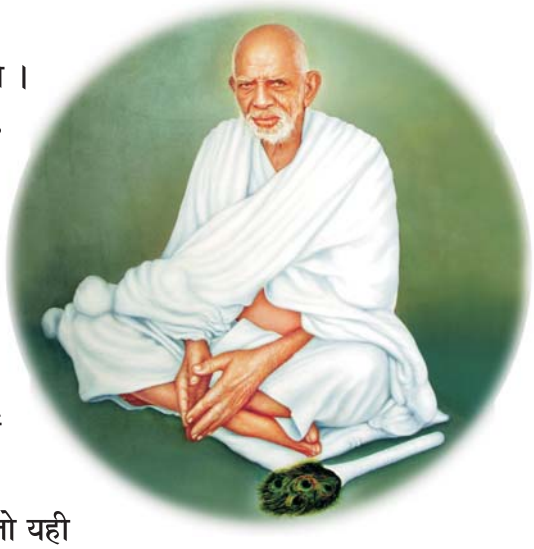

'उपदेशामृत' मेंसे :–

"श्रद्धा एक पर ही रखो । जहाँ तहाँ श्रद्धा करोगे तो मारे जाओगे । स्वरूपप्राप्त एक सत्पुरुष परमकृपालु पर श्रद्धा दृढ़ होगी तो जप, तप, क्रियामात्र सफल हो गयी, मनुष्यभव सफल हो गया, दीपक प्रकाशित हुआ, समकित हुआ समझ लो ।" (उ.पृ. ३७२)

"अब बयासी वर्ष हो गये हैं । अंतिम सीख । मघा नक्षत्रका पानी टंकियोमें भरकर रखते है, वैसे ही ज्ञानीका कथन जो मैं कह रहा हूँ उसे लक्ष्यमें रखेंगे तो काम बन जायेगा । वह ज्ञानी और यह ज्ञानी ऐसा न करें । किसीकी निंदा न करें । पर एक मात्र परमकृपालुदेवकी श्रद्धा रखें । उनके द्वारा बताये गये स्मरणको मृत्युके समय जब तक भान रहे तब तक हृदयमें रखें ।" (उ.पृ. ३३४)

"हमारे हृदयमें तो मात्र कृपालुदेव ही है, उनका ही रटण है । हमारी तो यही श्रद्धा और लक्ष्य है । हमारे समागममें जो जिज्ञासु आते है उन्हें हम तो यही मार्ग बताते हैं कि परमकृपालुदेवकी ही आज्ञा मान्य करो, उनकी ही श्रद्धा करो; उन्होंने जो स्वरूप जाना, अनुभव किया, वही सच्चा है, वही मेरा स्वरूप है; इस प्रकार उस पुरुषके वचनसे श्रद्धापूर्वक मान्य करो और उन्हींकी भक्तिमें निरंतर रहो, अन्य कुछ भी कल्पना न करो ।" (उ.पृ. १३४)

"उस संत द्वारा कथित सद्गुरुकी एक मान्यता, श्रद्धा होनेसे समकित कहा जाता है । इतना मनुष्यभव मिला है उसमें वही श्रद्धा सत्कृपालु श्री सद्गुरुदेवके प्रति जीवको रखना योग्य है, अपनी कल्पनासे अन्य किसीको मानना योग्य नहीं । जो इस प्रकार एक सद्गुरुकी श्रद्धासे रहा हुआ है उसका आत्महित और कल्याण है । यदि एक समकित भी इस भवमें न हुआ तो जन्म-मनुष्यभव व्यर्थ चला गया समझें । इन एकको ही माननेसे उसमें सभी ज्ञानी आ जाते है ।" (उ.पृ. ८९)

"श्रद्धा ऐसी दृढ़ करें कि अब मैं किसी अन्यको नहीं मानूँगा । मेरा आत्मा भी ज्ञानीने देखा वैसा ही है । मैंने नहीं देखा है, पर ज्ञानीने देखा है । उनकी आज्ञासे मुझे त्रिकाल मान्य है । ऐसे ज्ञानी परमकृपालु सद्गुरु श्रीमद् राजचंद्र प्रभु है; वे मुझे सदाकाल मान्य हों । अब उन्हें ही अपना सर्वस्व मानूँ, उनके अतिरिक्त सब पर मानूँ ।" (उ.पृ. ४३०)

"श्रद्धाको दृढ़ कर दो । चतुराईवाले और पंडिताईवाले किन्तु श्रद्धा-प्रतीतिसे रहित है वे रह जायेंगे और पीछे बैठे हुए भोले भाले अनपढ़ भी यदि श्रद्धाको दृढ़ कर लेंगे तो उनका काम हो जायेगा । परमकृपालुदेव द्वारा अनेक जीवोंका उद्धार होगा ।" (उ.पृ. ३३८)

"'सद्धा परम दुल्लहा"– यह भगवानका वचन है । कमर कसकर तैयार हो जाओ, नाच कूदकर भी एक श्रद्धा पकड कर ले । फिर जप, तप, त्याग, वैराग्य सब हो जायेगा । सबसे पहले श्रद्धा करो । यह बहुत बड़ी बात है । जिसका महाभाग्य होगा उसे ही यह प्राप्त होगी ।" (उ.पृ. ३७९)

'बोधामृत भाग १-३' मेंसे :– "सद्गुरुके कहनेके अनुसार चलना है । प्रभुश्रीजी कहते थे कि कृपालुदेवने कहा था वैसा कहता हूँ । इन कृपालुदेवकी श्रद्धा करोगे ? इनकी भक्ति करोगे तो कल्याण होगा ऐसा भी कहा था । एक बार पर्युषणके अंतिम दिनमें कहा कि ये पर्युषणका अंतिम दिन है । अब फिर पर्युषण पर्व आये वहाँ तक एक वाक्य कहता हूँ उसका बारा महिने तक विचार करके आना, वह यह है कि **'सद्धा परम दुल्लहा ।'** " (बो.१ पृ. २०७)

"परमपुरुष परमकृपालुदेवके प्रति आपकी बढ़ती हुई श्रद्धाको जानकर संतोष हुआ है । इस दुषम कलिकालमें अपने जैसे हीनपुण्य जीवोको साक्षात् महावीरस्वामीके वचनोका परिचय करानेवाले परमकृपालुदेव पर श्रद्धा करानेवाले प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजीका अमाप उपकार जैसे जैसे समझमें आता है, वैसे वैसे परमकृपालुदेवके बताये हुए सन्मार्गके प्रति विशेष विशेष प्रेम और पुरुषार्थवृत्ति जागृत होती है ।" (बो.३ पृ. ४८१)

"एक परमकृपालुदेवकी श्रद्धा ही सुखकारी है जिसको यह श्रद्धा हुई वह दुःखी नहीं होता । दुःख आ जाय तो दुःखको नहीं मानता । उसे एक प्रकारका आधार मिला है ।" (बो.३ पृ. ५१४)

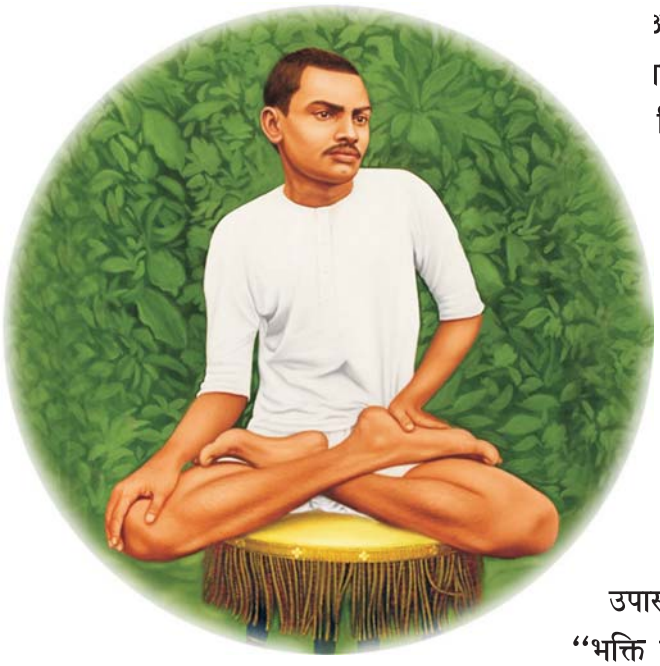

अर्थात् प्रेम । सत्पुरुषके गुणोमें प्रीति वह भक्ति है । भक्ति ये भक्तके ाव है । वे भाव जो सत्पुरुषमें रहे, उनके वचन पढ़नेमें, विचारनेमें, लिखने, याद करने, रटन करने, पुनरावर्तन या किसी भक्तिके छंदको गानेमें रहे तो मन शुद्ध होता जाता है । वास्तविक प्रेम भगवानके गुणोके प्रति प्रकट हो जाय तो सब कर्म जलकर भस्म हो जाय; ऐसा अद्‌भुत सामर्थ्य प्रभुभक्तिमें रहा हुआ है ।

भक्तिके बिना ज्ञान नहीं । भक्ति भी निष्काम चाहिये । मात्र मोक्षकी अभिलाषा रखकर करनी चाहिये । भक्ति ये मुक्ति प्राप्त करनेका सुगम और सर्वोत्कृष्ट उपाय है ।

भक्तिके बारेमें परमकृपालुदेवका श्रेष्ठ उपदेश

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :– "सद्‌देवगुरुशास्त्रभक्ति अप्रमत्ततासे उपासनीय है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६४०)

"भक्ति सब दोषको क्षय करनेवाली है, इसलिये वह सर्वोत्कृष्ट है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७२२)

"भक्ति पूर्णता पानेके योग्य तब होती है कि एक तृणमात्र भी हरिसे न माँगना, सर्वदशामें भक्तिमय ही रहना ।" (व.पृ.२८९)

"भक्ति यह सर्वोत्कृष्ट मार्ग है । भक्तिसे अहंकार मिटता है, स्वच्छंद दूर होता है, और सीधे मार्गमें चला जा सकता है; अन्य विकल्प दूर होते हैं । ऐसा यह भक्तिमार्ग श्रेष्ठ है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.६९९)

"अनेकानेक प्रकारसे मनन करनेपर हमारा यह दृढ़ निश्चय है कि भक्ति सर्वोपरि मार्ग है, और वह सत्पुरुषके चरणोमें रहकर हो तो क्षणभरमें मोक्ष प्राप्त करा दे ऐसा साधन है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ.२६७)

"प्र०–अनपढ़को भक्तिसे ही मोक्ष मिल सकता है क्या ? उ०–भक्ति ज्ञानका हेतु है । ज्ञान मोक्षका हेतु है । जिसे अक्षरज्ञान न हो उसे अनपढ़ कहा हो, तो उसे भक्ति प्राप्त होना असंभवित है, ऐसा कुछ है नहीं । जीव मात्र ज्ञानस्वभावी है । भक्तिके बलसे ज्ञान निर्मल होता है । निर्मल ज्ञान मोक्षका हेतु होता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४३८)

"सत्पुरुषोंने सद्‌गुरुकी जिन भक्तिका निरूपण किया है, वह भक्ति मात्र शिष्यके कल्याणके लिये कही है ।"

-श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४०२)

"भक्तिप्रधान दशामें रहनेसे जीवके स्वच्छंदादि दोष सुगमतासे विलय होते है; ऐसा ज्ञानी-पुरुषोंका प्रधान आशय है । इस कालमें तो बहुत काल तक जीवनपर्यन्त भी जीवको भक्तिप्रधानदशाकी आराधना करना योग्य है; ऐसा निश्चय ज्ञानियोंने किया ज्ञात होता है । हमें ऐसा लगता है और ऐसा ही है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३४७)

परमकृपालुदेवके प्रति अनन्य प्रेमसे भक्ति कर्त्तव्य

'उपदेशामृत' मेंसे :– "किसी संतसे पूछा तो उसने स्वयंको जिससे लाभ हुआ हो ऐसा निःशंक मार्ग परमकृपालुदेवकी भक्तिका मार्ग हमे बताया, वह मार्ग भूलरहित है, सत्य है । उस मार्गसे हमारा कल्याण है । ऐसी दृढ़ता हमारे मनमें हो ऐसा उपदेश उन्होंने हमें दिया, यह उनका परम उपकार है । उस उपकारीके उपकारको नहीं भूलना चाहिये । उन्हें उपकारीके रूपमें मानना चाहिये ।" (उ.पृ.१२७)

"मुमुक्षु–अनंतकालसे अनेक प्रकारके पाप दोष तो किये है, उन्हें नष्ट करनेका मुख्य उपाय क्या है ?

प्रभुश्री–भक्ति, स्मरण, पश्चात्तापके भाव करे तो सर्व पापका निवारण होता है । उपवास आदि तप तो किसीसे नहीं

भी हो सकता । कदाचित् कष्टदायक भी होता हैं । परंतु स्मरण-भक्ति प्रेमपूर्वक करें और भगवानका रटन करे, सद्गुरु-मंत्रमें रहे तो कोटिकर्मका क्षय हो जाय । ऐसी इस भक्तिकी महिमा है ।" (उ.पृ. ४२८)

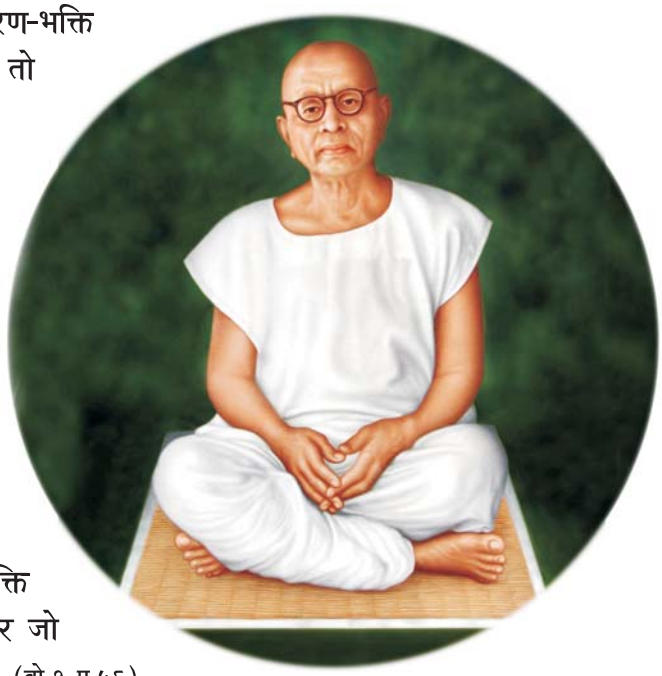

"भक्तिके अनेक प्रकार है । उपदेश सुनना, वाचन, विचार, सद्गुरुमें प्रेमभाव ऐसी भक्ति उत्तम है ।" (उ.पृ. ४२९)

"सत् और शील योग्यता लायेंगे । और अंतमें कह दूँ ? ये अंतिम दो अक्षर भवसागरमें डूबते हुएको तारनेवाले है । वह क्या है ? भक्ति, भक्ति और भक्ति । स्वरूप भक्तिमें परायण रहें ।" (उ.पृ. ३६०)

'बोधामृत भाग-१,३'मेंसे :–

"मुमुक्षु–भक्तिका क्या अर्थ है !

पूज्यश्री–संसारसे वृत्ति उठकर सत्पुरुष पर हो वह भक्ति है । प्रभुश्रीजीके बोधमें आया कि भक्ति ये भाव है । संसार उपर जो प्रेमभाव है वे उठकर सत्पुरुष पर ऐसा भाव हो वह भक्ति है ।" (बो.१ पृ.५६)

"सतीका पति के प्रति जो प्रेम है उसकी प्रशंसा होती है । और संसारमें इस प्रेमका ज्यादा माहात्म्य भी है । ऐसा प्रेम जो सत्पुरुषके प्रति आ जाय तो मोक्षका कार्य बन जाय । सती जितना ही नहीं लेकिन उससे अनेक गुना प्रेम सत्पुरुषके प्रति करना है; क्योंकि संसारमें आत्मा चिपक गई है । उसे निकाले बिना कल्याण नहीं । सती जितने प्रेमसे भी काम नहीं बनेगा । इससे अनंतगुना प्रेम चाहिए । प्रतिसमय प्रेम रहना चाहिये । प्रेमके वश भगवान भी है । ये प्रेम शब्दोमें नहीं आ सकता ।" (बो.१ पृ.७८)

"भक्ति : ये आत्माकी प्रेमशक्तिको परमपुरुषमें लीन करने जैसी दशा है । 'पर प्रेम प्रवाह बढ़े प्रभुसे सब आगमभेद सुउर बसें ।' उपर बताया वैसे त्याग करनेके अनेक प्रकार है लेकिन भजने योग्य तो आत्मस्वरूप मोक्षकी मूर्ति समान परमपुरुष एक ही है । उसमें अनन्यभावसें लीनता होने पर सर्व जगतकी विस्मृति होगी । यह परमपद प्राप्तिका संक्षिप्त मार्ग अनेक महापुरुषोने अपनाया है और इस कालमें यही परम उपकारी है ऐसा उपदेश दिया है ।" (बो.३ पृ. ५४७)

"मूलभूत बात तो परमकृपालुदेवके प्रति अनन्य भक्ति है । प.उ.प.पू. प्रभुश्रीजीने दृढ़तासे यही कहा है कि एक परमकृपालुदेवकी भक्ति करनेवालेको दूसरे किसीका ध्यान आदि करनेकी जरुरत नहीं है । उसमें मन विशेष रहा करे ऐसे करनेका सूचन है ।" (बो. ३ पृ. ३३७)

"परमकृपालुदेव उपर प्रेम, भक्ति, आस्था, श्रद्धा, इनका अनन्य शरण ग्रहण करें । ये परमपुरुष श्रीमद् राजचंद्रकी भक्ति करनेसे सब ज्ञानीकी भक्ति होती है । उनको माननेसे कोई ज्ञानीको मानना बाकी नहीं रह जाता । उसमें सबका समावेश होता है । ये बारबार विचार करके हृदयमें दृढ़ करना योग्य है ।" (बो.३ पृ. ६२)

"परम पुरुष श्रीमद् राजचंद्र गुरुके प्रति जो अनन्य प्रेम करना योग्य है, उनकी पूजा प्रभावना या आश्रय जितने प्रेमसे करना योग्य है उतना प्रेम कोई भी व्यक्ति या देवादि के प्रति वर्तमानमें करना योग्य नहीं है । इतना हृदयमें जीवनपर्यंत स्मृतिमें रहे, ऐसा टंकोत्कीर्ण करने योग्य है ।" (बो.३ पृ.२०८)

"परम उपकार परमकृपालुदेवका है । उन्होंने आत्माको प्रकट किया, आत्माका उपदेश दिया, म्यानसे तलवार भिन्न है वैसा शरीरसे आत्मा भिन्न है ऐसा बताया और दूसरे गलतमार्गसे हमको छूड़ाकर सत्य आत्माके मार्गमें लगाया, मोक्षका मार्ग दिखाया; इसलिये उनके जैसा किसीने भी हम पर उपकार किया नहीं है । अतः परमकृपालुदेव अपने गुरु है, वही हमको पूजने योग्य है, उनके उपर ही परम प्रेम करना योग्य है । वही अपने मित्र, रक्षक, तारणहार, स्वामी और परमेश्वर है । इन परम कृपानाथकी हम सबको परम भक्ति प्राप्त हो जाए तो अपना सबका महाभाग्य खुल गया ऐसा मानना चाहिये ।" (बो.३ पृ. ६४९)

ज्ञानीपुरुषकी आज्ञा

परमकृपालुदेवके आज्ञाके विषयमें उद्‌गार

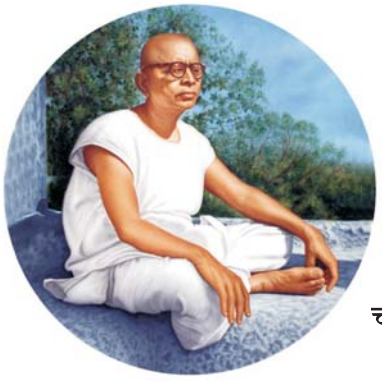

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :–

"सत्पुरुषकी आज्ञाका पालन करना ही कल्याण है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७२४)

"आज्ञामें अहंकार नहीं है । स्वच्छंदमें अहंकार है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७२४,७१९)

"जिस जिस प्रकारसे इस रागद्वेषका विशेषरूपसे नाश हो उस उस प्रकारसे प्रवृत्ति करना, यही जिनेश्वरदेवकी आज्ञा है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३६५)

"सद्‌गुरुकी आज्ञाके बिना आत्मार्थी जीवके श्वासोच्छ्‌वासके सिवाय अन्य कुछ भी नहीं चलता ऐसी जिनेन्द्रकी आज्ञा है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७००)

"ज्ञानीको पहचानें; पहचान कर उनकी आज्ञाका आराधन करें । ज्ञानीकी एक आज्ञाका आराधन करनेसे अनेकविध कल्याण है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६८१)

"जैसे एक वर्षासे बहुतसी वनस्पति फूट निकलती है, वैसे ज्ञानीकी एक भी आज्ञाका आराधन करनेसे बहुतसे गुण प्रगट होते हैं ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७०८)

"यथाशक्ति सद्‌व्रत और सदाचारका सेवन करनेमें तो ज्ञानीपुरुषकी सदैव आज्ञा है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६९८)

"अनेक शास्त्रों और वाक्योंका अभ्यास करनेकी अपेक्षा जीव यदि ज्ञानीपुरुषोंकी एक एक आज्ञाकी उपासना करे, तो अनेक शास्त्रोसें होनेवाला फल सहजमें प्राप्त होता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६४८)

मोक्षार्थे परमकृपालुदेवकी आज्ञा उपासनीय

'उपदेशामृत' मेंसे :– "आज्ञा अर्थात् क्या ? सत्पुरुष पर ऐसी श्रद्धा, कि वे जो कहते है वह सत्य है । उन पर प्रेम हो, उनके वचनका श्रवण हो, सुनकर उसे सत्य माने और तदनुसार प्रवर्तनके भाव हो; इस प्रकार भावका पलटना ही आज्ञा है ।" (उ.पृ. ३३१)"ज्ञानीकी आज्ञासे पाँच-दस मिनिट भी आत्माके लिये बितायेंगे तो वह दीपक प्रगट करेगी ।" (उ.पृ. ३५२)

"संतसे जो भी समझ प्राप्त हो उसे पकड़कर, तदनुसार प्रवृत्ति करनेका लक्ष्य रखें । बीस दोहे, क्षमापना इतना भी यदि संतसे मिला हो तो वह क्षायिक समकित तक ले जायेगा, क्योंकि आज्ञा है वह ऐसी वैसी नहीं है । जीवको प्रमाद छोड़कर योग्यतानुसार जो जो आज्ञा मिली हो उसकी आराधनामें लग जाना चाहिये, फिर उसका फल तो मिलेगा ही ।" (उ.पृ. ३६०)

"मुमुक्षु–ज्ञान कैसे प्राप्त हो ?

प्रभुश्री–त्रिकालमें भी ज्ञानीको ढूँढना पड़ेगा । सत्पुरुषको ढूँढकर उस पर श्रद्धा और उसकी आज्ञाका आराधन–ये दो करते रहें । विशेष करने जायेंगे, आत्मा देखने जायेंगे तो अपने आप कुछ भी जान नहीं पायेंगे ।" (उ.पृ. ३४१)

"सदाचार का पहले बहुत पालन किया । परंतु सद्‌गुरुकी आज्ञारूप रक्षक (मार्गदर्शक) साथमें नहीं था, इसलिये काम हुआ नहीं । आज्ञासे सदाचार एक मात्र आत्मार्थकी इच्छासे होता है और स्वच्छंदसे तो वह स्वर्ग या कल्पित मोक्षकी इच्छासे होता है । अतः आज्ञासे ही काम बनता है ।" (उ.पृ. ३४१)

'बोधामृत भाग-१' ग्रंथमेंसे :– "कल्याण किससे होगा ? प्रत्यक्ष सत्पुरुषकी आज्ञासे । उसमें रुचि होगी तब कल्याण होगा । कृपालुदेव आत्मज्ञानी पुरुष है । इनकी आज्ञासे आत्मज्ञान प्राप्त हो जाय ऐसा है । महापुरुषका एक वचन लेकर जीवनमें उतार दिया तो काम हो गया । अब जो सच्चा है वही करना है । अवकाश मिले तब स्मरण, वाचन, विचार करनेका रक्खें ।" -बो-१ (पृ. २८८)

"सत्पुरुषकी आज्ञा यही सच्चा मार्ग है । नागको पार्श्वनाथ भगवानने स्मरणमंत्र सुनाया उससे वह धरणेन्द्र बना । नहीं तो नाग तो नरकमें जाता है । भीलने एक 'कौअेका मांस में नहीं खाउँगा' इतनी ही आज्ञाका पूर्ण पालन किया तो वह मरकरके देव बना, फिर श्रेणिक राजा हुआ, अनाथी मुनि मिले तब समकित प्राप्त किया और महावीर भगवान मिले तब क्षायिक समकित हुआ और तीर्थंकर गोत्रका बंध किया ।" -बो-१ (पृ.५१)

कर्तव्यरूप श्री सत्संग

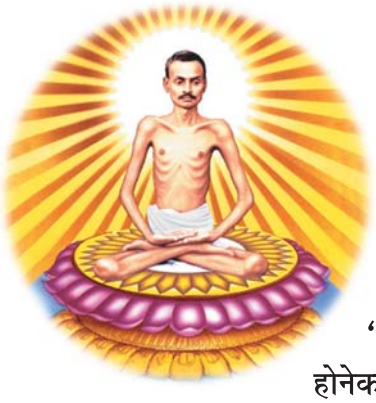

परमकृपालुदेवकी दृष्टिमें सत्संगका परम माहात्म्य

'श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथमेंसे :–

"आत्महितके लिये सत्संग जैसा बलवान अन्य कोई निमित्त मालुम नहीं होता ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४३१) "यदि किसी भी प्रकारसे हो सके तो इस त्रासरूप संसारमें अधिक व्यवसाय नहीं करना, सत्संग करना योग्य है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४०४)

"सत्संगके आश्रयसे असत्संगका बल घटता है । असत्संगका बल घटनेसे आत्मविचार होनेका अवकाश प्राप्त होता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४५८)

"सत्संगके लिये देहत्याग करनेका योग मिल जाय तो उसे स्वीकार करे; परन्तु उससे किसी पदार्थमें विशेष भक्तिस्नेह होने देना योग्य नहीं है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४७७) "जो जगतको बतोनेके लिये कुछ नहीं करता, उसीको सत्संग फलीभूत होता है । सत्संग और सत्पुरुषके बिना त्रिकालमें कल्याण होता ही नहीं ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७०८)

"ज्ञानीपुरुषोंने, जिसे सर्व दुःख क्षय करनेकी इच्छा है उस मुमुक्षुको सत्संगकी नित्य उपासना करनी चाहिये, ऐसा जो कहा है वह अत्यन्त सत्य है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४९१)

"आत्माको जो सत्यका रंग चढ़ाये वह सत्संग है । जो मोक्षका मार्ग बताये वह मैत्री है । उत्तम शास्त्रमें निरंतर एकाग्र रहना यह भी सत्संग है; सत्पुरुषोंका समागम भी सत्संग है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७७)

"प्रत्यक्ष सत्संगकी तो बलिहारी है; और वह पुण्यानुबंधी पुण्यका फल है; फिर भी जब तक ज्ञानीदृष्टानुसार परोक्ष सत्संग मिलता रहेगा तब तक भी मेरे भाग्यका उदय ही है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. १९२)

"वैराग्य-उपशमका बल बढ़े उस प्रकारसे सत्शास्त्रका परिचय करना, यह जीवके लिये परम हितकारी है । दूसरा परिचय यथासंभव निवर्तन करने योग्य है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४२१)

"अवश्य इस जीवको प्रथम सर्व साधनोंको गौण मानकर निर्वाणके मुख्य हेतुभूत सत्संगकी ही सर्वार्पणतासे उपासना करना योग्य है; कि जिससे सर्व साधन सुलभ होते हैं; ऐसा हमारा आत्मसाक्षात्कार है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ४७६)

"सब परमार्थके साधनोमें परम साधन सत्संग है, सत्पुरुषके चरणके समीपका निवास है । सर्वकालमें उसकी दुर्लभता है, और ऐसे विषम कालमें उसकी अत्यंत दुर्लभता ज्ञानीपुरुषोंने जानी है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३७८)

"लौकिक-मेलेमें वृत्तिको चंचल करनेवाले प्रसंग विशेष होते हैं । सच्चा मेला सत्संगका । ऐसे मेलेमें वृत्तिकी चंचलता कम होती है, दूर होती है । इसलिये ज्ञानीयोंने सत्संग-मेलेका बखान किया है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ६८३)

"सत्संग और सत्यसाधनके बिना किसी कालमें भी कल्याण नहीं होता । यदि अपने आप कल्याण होता हो तो मिट्टीमेंसे घड़ा होना सम्भव है । लाख वर्ष हो जाये तो भी मिट्टीमेंसे घड़ा स्वयं नहीं होता, इसी तरह कल्याण नहीं होता ।" (व.पृ. ७१५)

"सत्पुरुषका क्षणभरका भी समागम संसाररूपी समुद्र तरनेके लिये नौकारूप होता है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २२७)

"एक बड़ी निश्चयकी बात तो मुमुक्षु जीवको यही करना योग्य है कि सत्संग जैसा कल्याणका कोई बलवान कारण नहीं है, और इस सत्संगमें निरन्तर प्रति समय निवास चाहना, असत्संगका प्रतिक्षण विपरिणाम विचारना, यह श्रेयरूप है । बहुत बहुत करके यह बात अनुभवमें लाने जैसी है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ३३८)

"परमार्थपर प्रीति होनेमें सत्संग सर्वोत्कृष्ट और अनुपम साधन है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २६९)

"सत्संग, सत्पुरुषका योग अनंत गुणोंका भण्डार है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. ७०८)

"महापुरुषोंने और उनके आधारपर हमने ऐसा दृढ़ निश्चय किया है कि जीवके लिये सत्संग, यही मोक्षका परम साधन है । सन्मार्गके विषयमें अपनी जैसी योग्यता है, वैसी योग्यता रखनेवाले पुरुषोंके संगको सत्संग कहा है । महान पुरुषके संगमें जो निवास है, उसे हम परम सत्संग कहते है; क्योंकि इसके समान कोई हितकारी साधन इस जगतमें हमने न देखा है और न सुना है ।" -श्रीमद् राजचंद्र (व.पृ. २८९)

परमकृपालुदेव प्रबोधित वीतराग मार्गकी प्रभावनाके लिये प.उ.प.पू. प्रभुश्री कृपासे बना हुआ अलौकिक तीर्थधाम श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास

संवत् १९५४ में परमकृपालुदेव काविठा गाँवमें जानेके लिये अगास स्टेशन पर उतरे । काविठा गाँवसे उनको ले जानेके लिये रथ आनेमें देरी हुई । उस समय दरम्यान परमकृपालुदेव इस आश्रमकी पुण्यभूमि पर पधारकर अपने चरणस्पर्शसे इसे पावन किया ।

परमकृपालुदेवके चरणस्पर्शसे पावन हुई इस तपोभूमि पर प.पू.प्रभुश्रीजीके योगबलसे सं. १९७६ में तीर्थस्थानरूप इस आश्रमकी स्थापना हुई और योगानुयोगसे प.पू.प्रभुश्रीजीके चौदह चातुर्मास भी यहाँ पर हो गये । जिससे हजारो मुमुक्षु परमकृपालुदेव द्वारा उपदिष्ट मूल वीतरागमार्गको पा सके ।

सभामंडप

श्री राजमंदिर

आश्रमका माहात्म्य प.पू.प्रभुश्रीजीके शब्दोमें

'उपदेशामृत' मेंसे :– "यह आश्रम कैसा है ! यहाँ तो एकमात्र आत्माकी बात है । अपने आत्माको पहचानें, इसे ही देव मानें । मैं जो कहुँगा वह मानेंगे ? आत्मा ही सिद्ध है, वही देव है, उसकी पूजा करनी चाहिये ।" (उ.पृ.४१८) "जानते हैं यह (आश्रम) स्थान कैसा है ? देवस्थानक है ! जिसे यहाँ आना हो वह लौकिकभाव बाहर, दरवाजेके बाहर छोड़कर आये । यहाँ आत्माका योगबल प्रवर्तमान है ।" (उ.पृ. २६५)

"यह (आश्रम) तीर्थक्षेत्र किस कारणसे है ? यहाँ आत्माकी ही बात होती है । सबसे पहले आवश्यकता किसकी है ? श्रवणकी । 'सवणे नाणे विन्नाणे' । सुननेसे विज्ञान (विशेषज्ञान) प्राप्त होता है । सत्संगमें बोध सुननेको मिलता है । सत्संगमें अलौकिक भाव रखने चाहिये । जब लौकिक भाव हो जाते हैं तब अपर्व हित नहीं हो सकता ।" (उ.पृ. ३३८)

मुख्य प्रवेशद्वार

"इस आश्रममें कृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रकी आज्ञा का प्रवर्तन है । वे महान अद्‌भुत ज्ञानी है । इस पुण्य भूमिका माहात्म्य ही अलग है । यहाँ रहनेवाले जीव भी पुण्यशाली हैं । पर वह ऊपरसे नहीं दिख सकता, क्योंकि धन, पैसा नहीं है कि लाख-दो लाख दिखाई दें । यहाँ तो आत्माके भाव है । आत्माके भाव ही ऊँचीसे ऊँची दशा प्राप्त करा सकते हैं ।" (उ.पृ. ४१९)

तीर्थधाम श्रीमद् राजचंद्र आश्रम अगासकी जानने योग्य हकीकत

नूतन सभामंडप

'बोधामृत भाग-३'

मेंसे :– "परमकृपालुदेवका अलौकिक योगबल यहाँ पर विद्यमान है । जिनका देह त्याग इस आश्रममें हुआ है उन सबकी देवगति हुई है । परमकृपालुदेवकी श्रद्धा बढ़े और आत्माका भला हो ऐसा अलौकिक यह स्थान बना है । महाभाग्यशाली होगा उसका देहत्याग यहाँ पर होगा । जो आजीविकाकी मुश्केली न हो तो यहाँ पर ही आयुष्य बिताना योग्य है । धर्म, धर्म और धर्मके ही संस्कार रातदिन प्राप्त हो ऐसा यहाँ पर सब प्रवर्तन है ।" -बो.३ (पृ.७७)

"आश्रममें आकर यहाँ पर रहें...दूसरी यात्राए लोग बताये उनके कहने पर चलना नह । और जहाँ पर हमको बोधकी प्राप्ति हो, जिससे चित्त शांत हो जाय वह तीर्थ है ।" (बो.३ पृ. १७४) "प.उ.प.पू.प्रभुश्रीजीने तो इस तपोवन जैसे आश्रमके बारेमें यहाँ तक कहा है कि यहाँ पर जिनका देहत्याग होगा उनका समाधिमरण होगा ।" (बो.३ पृ. ३६६)

"जहाँ पर कुंवारी कन्याएँ जीवनपर्यंत ब्रह्मचर्य लेकर रहती है, जहाँ शादी किये हुए भी बिना संतानके स्त्री पुरुष ब्रह्मचर्यके प्रति प्रीति होनेसे सुखपूर्वक जीवन बिताते है । ऐसे इस आश्रमके वातावरणमें कुटुंब सहित वेकेशनके समयमें रहनेका बन पाये तो आप जो न कह सके या न करा सकोगे वह सहजमें उनके हृदयमें भावनाए उत्पन्न होगी ।" (बो.३ पृ.४११)

"प.पू.प्रभुश्रीजीने जहाँ चौद चातुर्मास किये है ऐसे राजगृही तीर्थके समान अगास आश्रममें आपको आनेका विचार है, यह जानकर आनंद हुआ है ।" (बो.३ पृ. ६२९)

"मेरे आत्माकी रातदिन देखभाल करने जैसा स्थल श्रीमद् राजचंद्र आश्रम है । वहाँ पर हमेशा रहा जाय ऐसा कब होगा ? ऐसी सुबहमें उठकर प्रतिदिन भावना करें और यह काम इतने समयमें होगा तो वे दिन गिनते रहे । जितना जल्दी बने ऐसे उपाय करते रहेना योग्य है ।" "परमकृपालुदेवने अपनी अंतर्व्यथा प्रकट की है कि "ऐसा स्थान कहाँ है कि जहाँ जाकर रहें ? अर्थात् ऐसे संत कहाँ पर है कि जहाँ जाकर ऐसी (रागद्वेषरहित) दशामें बैठकर उनका पोषण पाए ? अपने लिये तो प.पू.प्रभुश्रीजीने ऐसा स्थान बनाकर समाधिमरण करनेका अड्डा लगाया है । अब जितना विलम्ब करेंगे उतनी अपनी कमजोरी है । प्रभुश्रीजी कहते है कि 'तेरी देरी उतनी देरी, हो जा तैयार ।" (बो.३ पृ. ७८४)

"जैसा क्षेत्र वैसे भाव भी बनते है । श्रवणकुमारके बारेमें बात है । श्रवण अपने अंध मातापिताको लेकर पानीपतके मैदानमेंसे गुजर रहा था तब विपरीत भाव आये। मनमें विचार किया कि ऐसे भाव किस कारण आये होगे ? विचार करने पर पता चला कि यह युद्धका मैदान होनेसे ऐसे भाव आये । वैसे ही सत्पुरुषका जहाँ विचरण हो वहाँ पर बहुत लंबे समय तक वातावरण जीवको पवित्र करे ऐसा होता है ।" (बो.१ पृ.१५)

प.पू.प्रभुश्रीजीका समाधिस्थान

पू.श्री ब्रह्मचारीजीका समाधिस्थान

श्री राजकोटके दर्शनीय स्थल

"इच्छे छे जे जोगी जन" नामका अंतिम काव्य सं. १९५७ के चैत्र सुद ९ के दिन राजकोटमें नर्मदा मेन्सन नामके मकानमें परमकृपालुदेवने लिखा था। उस कविताकी अंतिम गाथा इस प्रकार है :-

"सुखधाम अनंत सुसंत चहि, दिनरात रहे तद्ध्यान महीं;
परशांति अनंत सुधामय जे, प्रणमुं पद ते वरते जयते ॥"

इस मकानमें ही परमकृपालुदेवका संवत् १९५७ के चैत्र वद ५ के दिन दोपहरमें २ बजे देहोत्सर्ग हुआ था।

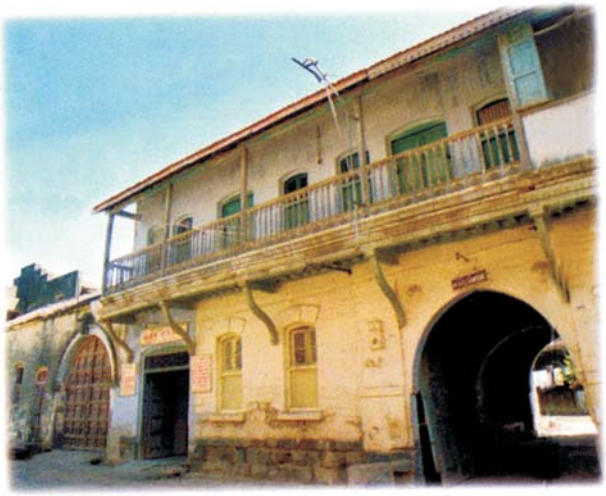

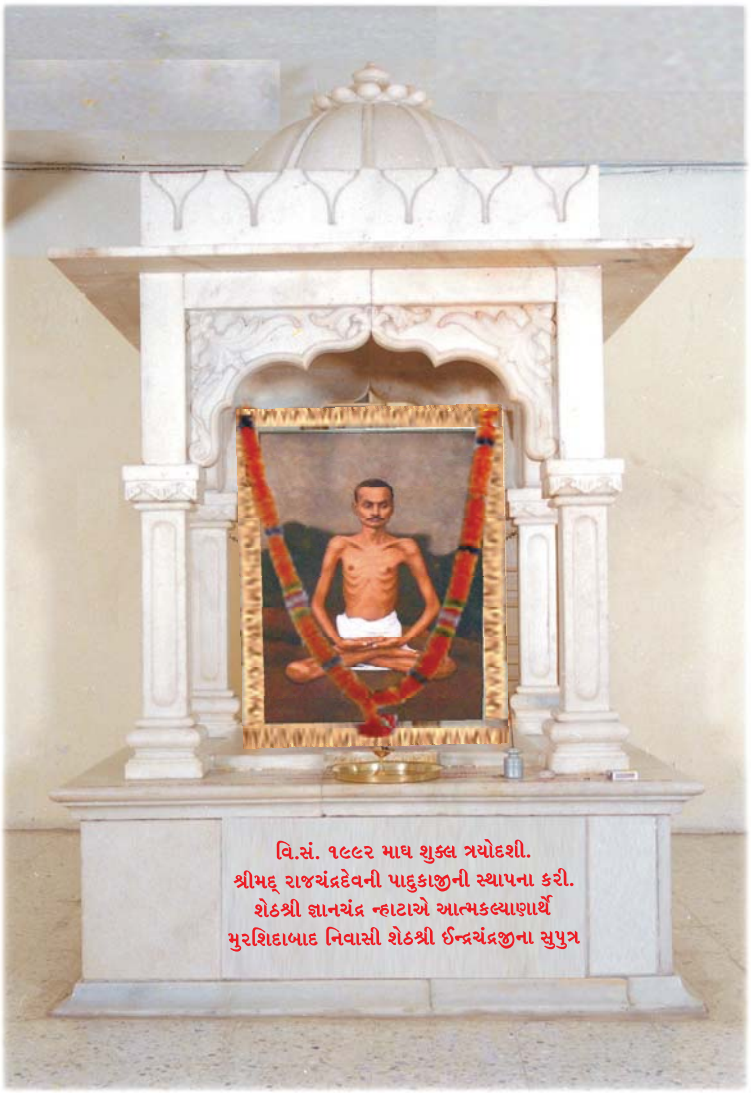

वर्तमानमें उस अग्निसंस्कारके स्थान पर यह नवीन समाधि मंदिर बनाया है, जो आत्मार्थी जीवोके लिये तीर्थरूप है।

"पंचमज्ञानने समजी साचुं, पंचत्व पाया सार;
कृष्णपंचमी चैत्र मासनी, संवत् सत्तावन धार।
धन्य छे आपतणो अवतार,
राजजी आपतणो अवतार।" (बो.३ पृ.३०)

राजकोटमें स्मशान भूमिके नजदीकमें आजी नदीके किनारे जहाँ परमकृपालुदेवके पवित्र देहका अग्निसंस्कार किया था उसी स्थल पर श्रीमद् राजचंद्र समाधिमंदिरका निर्माण हुआ। उसमें संवत् १९९६ के महासुदी १३ के दिन संगमरमरकी देहरी बनाकर परम पुनित पादुकाजीकी स्थापना करनेमें आई। फिर सं. २००७ में एक पबासन बनाकर उसमें परमकृपालुदेवके तीन चित्रपट पूज्यश्री ब्रह्मचारीजी (श्री गोवर्धनदासजी) के शुभ हस्तसें स्थापित करनेमें आये थे।

श्रीमद् राजचंद्र ज्ञानमंदिर, राजकोट

श्री राजकोट शहरके बीचमें यह विशाल मंदिर आया हुआ है ।
जिसके उपरके हॉलमें परमकृपालुदेव आदि चित्रपटोकी
स्थापना की हुई है और नीचेके हॉलमें
परमकृपालुदेवके शरीर प्रमाण
संगमरमरके प्रतिमाजी बिराजमान है ।
वहाँ पर प्रतिदिन सुबहमें नौ बजे से दस बजे तक
भक्ति स्वाध्यायका क्रम नियमित चलता है ।